6071

हो लोककथा

एक अनुशीलन

डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा

हो लोककथा : एक अनुशीलन

हो लोककथा : एक अनुशीलन

लेखक
डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा

विकल्प प्रकाशन
दिल्ली-110094

भूमिका

"हो" जनजाति छोटानागपुर में निवास करने वाली मुण्डा जनजाति की एक शाखा है। यह मुख्य रूप से वर्तमान पश्चिमी सिंहभूम और जमशेदपुर (पूर्वी सिंहभूम) जिलों में केन्द्रित है। अनुश्रुतियों के अनुसार राँची जिले के खूँटी क्षेत्र से मुण्डा जनजाति के कुछ समुदायों का प्रवेश इन जिलों में हुआ था, जो आज "हो" के नाम से जाने जाते हैं। इसका सबसे बड़ा प्रमाण "हो" भाषा है, जो ध्वनिपरिवर्तन के बावजूद मुण्डारी भाषा है। स्वाभाविक है कि "हो" और मुण्डा जातियों की बहुत-सी परम्पराएँ एक हैं और उनके लोक-साहित्य में भी एक-जैसी सामग्री मिलती है। किंतु भौगोलिक पृथक्करण ने "हो" जाति, संस्कृति एवं लोक-साहित्य को जो वैशिष्ट्य दिया है, वह दोनों की समानता के बावजूद कहीं लक्षित और कहीं अलक्षित रूप से देखा जा सकता है। इसके लिये दोनों के भूगोल के सिवा इतिहास भी कम जिम्मेवार नहीं है। "हो" समाज में ईसाई धर्म का प्रवेश आज भी अंशतया ही हो सका है। "हो" न केवल जीववादी धर्म मानते हैं। अपने ग्राम वन्य जीवन के अनुभवों के साथ इस जाति ने वैष्णव, मुनि आदि सम्प्रदायों के सिद्धान्तों का सामंजस्य कर एक बड़ी विलक्षण, अनुशासित और समृध्द संस्कृति का विकास किया है।

ऐसी उल्लेख्य और समृध्द भाव एवं विचार-सम्पदा वाली जाति का समस्त इतिहास और जीवन उसकी मौखिक परम्पराओं में ही संचित रहा है। उसके सैकड़ों लोक गीतों और कहानियों में जैसे उसके अतीत से लेकर वर्तमान तक की सारी विकास-यात्रा समाहित है। आवश्यकता है ऐसे अध्यवसायी संकलन कर्त्ताओं और विश्लेषकों की जो इनका व्यवस्थित अध्ययन कर उन्हें उजागर कर सकें और भारतीय संस्कृति के बीच "हो" जाति की अवस्थिति और महत्त्व का निर्देश कर सकें।

किन्तु "हो" जनजाति के इतिहास और उसकी संस्कृति पर अब तक बड़ा सीमित कार्य हुआ है। उसकी मौखिक परम्पराओं पर भी अपेक्षित कार्य नहीं हुआ है। आर्चर के "हो दुरङ्" (हो लोक गीत) के सिवा हाल में सात खण्डों में हो भाषा में प्रकाशित श्री धनुर सिंह पूर्ति की "हो दिशुम हो होन को" (हो भूमि और हो लोग) में इन परम्पराओं का रोचक संग्रह मिलता है। धनुर सिंह पूर्ति की पुस्तक में संकलन के सिवा एक सीमा तक परम्पराओं की व्याख्या का कार्य भी हुआ है। किन्तु डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा की प्रस्तुत पुस्तक "हो लोक कथा : एक अनुशीलन" की विशेषता यह है कि इसका स्वरूप मूलतः व्याख्यात्मक और विश्लेषणात्मक है। यह "हो" जाति की मौखिक परम्पराओं के केवल एक पक्ष-लोककथा-से संबंधित है। इस प्रकार इसमें केन्द्रित और सघन रूप में उसकी परम्पराओं के एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग पर कार्य

किया गया है। यहाँ जिस बात का खास तौर पर उल्लेख किया जाना चाहिये, वह यह है कि यह "हो" लोक साहित्य पर पूरे इतिहास में किया गया पहला शोध-कार्य है और यह कार्य हो जाति के सदस्य के द्वारा नहीं, बल्कि उसकी भाषा और परम्पराओं के एक गैर-हो विद्वान् ने किया है।

डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा ने इस पुस्तक की अधिकांश सामग्री क्षेत्रीय कार्य द्वारा संकलित की है। उन्होंने अपने विषय की मुद्रित सामग्री का गौण रूप में उपयोग किया है। सच तो यह है कि मुद्रित रूप में उपलब्ध इसकी सामग्री आज भी बहुत सीमित है। जहाँ "हो दुरङ्" हो लोकगीतों का एक विस्तृत संकलन है, वहाँ इससे तुलनीय हो लोककथाओं का कोई संग्रह नहीं छपा है। इस परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत कार्य की महिमा स्वतः स्पष्ट हो जाती हैं। डॉ. सिन्हा ने अपने द्वारा संकलित कथाओं के प्रतिनिधि नमूने पुस्तक के अन्त में दे दिये हैं। आकार की दृष्टि से यह सामग्री पुस्तक का प्रायः एक-तिहाई भाग है। विश्वास है, यह बाद के शोधकर्त्ताओं और सामान्य पाठकों, दोनों के लिये समान रूप से उपयोगी प्रमाणित होगी।

"हो लोककथा : एक अनुशीलन" सात अध्यायों में विभक्त है। इसके प्रथम अध्याय में "हो" जाति और भाषा का परिचय दिया गया है। द्वितीय अध्याय में हो लोक कथाओं के विभिन्न वर्गों पर विचार हुआ है और तृतीय अध्याय में हो आख्यानों पर। चतुर्थ अध्याय में हो लोक-कहानियों पर विचार किया गया है और पंचम अध्याय में हो कथानक रूढ़ियों पर। षष्ठ अध्याय में हो लोक कथाओं के आधारा पर हो संस्कृति की रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है। सप्तम् अध्याय में हो लोक कथाओं पर संरचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

इस प्रकार "हो लोक कथा : एक अनुशीलन" एक ऐसी पुस्तक है, जिसमें हो लोक कथाओं की अन्तर्वस्तु, संरचनात्मक विशेषताओं और सांस्कृतिक अभिप्रायों का एकत्र निरूपण हुआ है। लोक साहित्य को जनता की आत्मकथा कहा जाता है। इस पुस्तक में इसके जीवन को परिचालित करने वाला वह जीवन-दर्शन भी है जो इसके मिथों, आख्यानों और कहानियों में अभिव्यक्त हुआ है।

"हो लोक कथा : एक अनुशीलन" हो जाति के लोक साहित्य और संस्कृति पर प्रमाणिक और मूल्यवान् सामग्री प्रस्तुत करने वाली पहली हिन्दी पुस्तक है। यह एक जनजाति के मानस से पूरे भारतीय मानस से पूरे भारतीय मानस को जोड़ने में सहायक सिद्ध होगी। पुस्तक का यह तृतीय संस्करण भी पूर्व के द्वितीय संस्करण की ही तरह प्रासंगिक और महत्त्वपूर्ण कृति है और इसकी लोकप्रियता का प्रमाण है।

-डॉ. दिनेश्वर प्रसाद

'हो लोककथा : एक अनुशीलन'
के
तीसरे संस्करण के प्रकाशन पर

झारखण्ड खनिजों की दृष्टि से एक सम्पन्न राज्य माना जाता है, लेकिन अब तक इस कथित सम्पन्नता का लाभ यहाँ की जनता को नहीं मिल सका है। इसी कारण अब यह भी कहा जाने लगा है कि झारखण्ड खनिजों के मामले में भले ही एक सम्पन्न राज्य माना जाता है, लेकिन इस सम्पन्न राज्य के निवासी आज भी निर्धन हैं। विगत बारह वर्षों के झारखण्ड का इतिहास इस कटु सत्य की पुष्टि बराबर करता चला जा रहा है।

यदि झारखण्ड खनिजों के मामले में एक सम्पन्न राज्य है, तो उसकी एक और भी अद्वितीय पूँजी है - यहाँ की विभिन्न जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषाओं की अक्षय निधि, जिसका दोहन अब तक नहीं किया जा सका है। १६ नवम्बर १६८१ को राँची विश्वविद्यालय में विभिन्न जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग की स्थापना की गयी थी और अब दो युग गुजरने को हैं, पर इस विभाग के छात्रों को अब तक सभी पाठ्य पुस्तकें भी उपलब्ध नहीं करायी जा सकी हैं। ऐसी निराशाजनक तथा हतोत्साहित करनेवाली स्थितियों में ज्ञान के कुछ ऐसे सच्चे पिपासु भी हमारे बीच आते रहे हैं, जिन्होंने यहाँ की भाषाओं तथा उनके साहित्य के उद्घाटन करने के उल्लेखनीय कार्यों को सम्पन्न किया है। इनमें डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा भी एक हैं।

डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा कल्याण विभाग के एक अधिकारी रहे हैं। उन्हें चाईबासा में कार्य करने का मौका मिला और वहाँ रहते हुए उन्हें सिंहभूम की हो जनजाति के निवासियों के बीच चुनौतीपूर्ण काम करने का विरल अवसर प्राप्त हुआ। झारखण्ड की अन्य जनजातीय भाषाओं के बीच 'हो' एक विशिष्ट भाषा है और इसके बोलनेवाले अपनी भाषा की स्वतंत्रता को सर्वोपरि मानते हैं। इस गुण के कारण हो-भाषियों के बीच किसी अन्य का प्रवेश बड़ा कठिन हो जाता है। इस समस्या का सामना डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा ने बड़े धैर्य के साथ किया। उन्होंने हो भाषा में प्रवीणता प्राप्त की। इसके सहारे उन्हें हो भाषियों और उनके समाज में प्रविष्ट होने का सुयोग मिला। अपने विभाग के दायित्वों का निर्वाह करते हुए, वे निरंतर हो क्षेत्र में कार्य करते रहे। उन्होंने हो भाषा और साहित्य का जो नवनीत प्राप्त किया, उसे समाज के

अतिरिक्त अन्य अनुसंधाताओं के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। आज हो भाषा तथा साहित्य के एक अनुरागी के रूप में डॉ. सिन्हा एक उल्लेखनीय अनुसंधाता के रूप में प्रख्यात हैं।

'हो लोककथा : एक अनुशीलन' डॉ. सिन्हा की एक चर्चित पुस्तक है। अब तक इसके दो संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं और डॉ. सिन्हा इस पुस्तक के प्रकाशन की 'तिकड़ी' बनाने की ओर अग्रसर हैं। इस सुअवसर पर मैं उन्हें बधाई देता हूँ और यह आशा भी करता हूँ कि जिस समर्पण के साथ उन्होंने हो भाषा और साहित्य की अमूल्य सेवा की है, वह अन्य भाषा तथा साहित्य के शोधार्थियों के लिए केवल प्रशंसनीय ही नहीं, अनुकरणीय भी है। मुझे यह पूर्ण विश्वास है कि डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा की 'हो लोककथा : एक अनुशीलन' का पिछले दो संस्करणों में जैसा स्वागत हुआ था, इस तीसरे संस्करण का भी वैसा ही अभूतपूर्व स्वागत अवश्य होगा।

–श्रवण कुमार गोस्वामी

विषय–प्रवेश

"हो" क्षेत्र (कोल्हान), हो भाषा-संस्कृति आदि के सम्पर्क में आने का सौभाग्य मुझे उस समय प्राप्त हुआ जब सिंहभूम जिला मुख्यालय - चाईबासा में पदस्थापित होने का शुभ अवसर मिला। पदस्थापन काल के प्रारम्भ में क्षेत्रीय कार्यों में सबसे बड़ी समस्या भाषा ("हो" बोली) की थी जिसके बिना जाने-समझे कोल्हान क्षेत्र में जाना एवं कार्य करना कठिन था। कोल्हान में "हो" भाषा (बोली) एवं "हो" संस्कृति जितना मौलिक रूप में अक्षुण्ण है, अन्य आदिवासी क्षेत्र में अन्य भाषाओं की स्थिति थोड़ी भिन्न है। इस मायने में "हो" जनजाति के लोग अपनी भाषा एवं संस्कृति के प्रति अत्याधिक जागरूक एवं प्रतिबद्ध हैं। वे किसी भी व्यक्ति से, विशेषकर देहाती क्षेत्र में, "हो" के अतिरिक्त अन्य किसी बोली (हिन्दी आदि) में बातचीत करना पसन्द नहीं करते थे। "हो" भाषा (बोली) ही उनकी बातचीत का माध्यम था। "हाट" में साग-सब्जी बेचने वाली "हो" बालाएँ किसी के साथ भी "हो" में ही मोल-तोल करती थी। "हो" नहीं जानने वाला या तो सब्जी खरीद नहीं सकेगा अथवा ठगा जायेगा। अतः "हो" भाषा सीखना एवं बोलना मेरे लिये एक अनिवार्य आवश्यकता बन गयी और कल्याण विभाग के पदाधिकारी होने के नाते यह एक नैतिक जिम्मेवारी प्रतीत हुई कि जिनके बीच में रहकर कल्याण कार्यों का सम्पादन करना है, उनकी बोली जाने बिना उनकी भावनाओं को एवं उनकी समस्याओं को समझना कठिन था। साथ ही, उनके सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में झाँकने के लिये, उनके विभिन्न पर्व-त्योहारों, शादी-विवाह तथा अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों में सम्मिलित होकर उनसे तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित करने हेतु भी "हो" भाषा जानना एक अनिवार्य आवश्यकता बन गयी। "हो" जनजाति के लोग यह अपेक्षा करते हैं कि जो भी पदाधिकारी उनके बीच कार्य करने आवें, वे भी "हो" भाषा-भाषी हों। किसी के दरवजे पर जाने पर प्रणाम या नमस्ते के स्थान पर "जोआर" (जोहार) सुनने को मिलता है और तब पूछते हैं - "ओकोनाते हुजुतनाबेन?चिना पइटि दो मेना?(कहाँ से आ रहे हैं और क्या काम है) इसी प्रकार प्रारम्भ में इन वाक्यों को फ्रेंच या लैटिन की तरह गले नहीं उतार पाना एक आत्महनन एवं मानसिक पीड़ा का क्षण हुआ करता था। परन्तु जब हो भाषा (या बोली) बोलना थोड़ा बहुत आ गया तो क्षेत्र में उन्मुक्त घूमने लगा। फिर तो "माघे", "हेरो", "जोमनामा" आदि पर्व किसी-न-किसी "हो" परिवार में जाकर मना लेता।

"हो" क्षेत्र में किसी "हो" को भिक्षाटन करते नहीं देखा। यह उनके स्वाभिमानी होने का प्रमाण है। "हो" भाषा का व्याकरण एवं साहित्य "संस्कृत" की तरह धात्वर्थों से शब्द एवं अर्थ में परिवर्तन एवं अर्थवत्ता का द्योतक है। संस्कृत की तरह इस भाषा में भी तीन वचन होते हैं। लेकिन इसकी एक विशिष्टता है कि इसमें अल्पप्राण ध्वनियाँ अधिक है और उच्चारण में इसका स्पष्टः आभास मिल जाता है जब कोई "हो" बोलता है – "काना काया" (खाना खाया)। गायन-कला में ये काफी प्रवीण है। इनके गीत भी दबे स्वरों में अवरोहयुक्त लय में तरंगित होते हैं। आरोह के स्वर कम होते हैं और अधिक "लय" सम पर ही चलते हैं।

एक बार खुँटपानी प्रखण्ड के पुरनियाँ ग्राम में माघे पर्व के अवसर पर चार दिन व्यतीत करने का अवसर मिला तो लगा कि इसके आगे हमलोगों का "होली" पर्व भी फीका है। इस पर्व के प्रारम्भिक चरण में अत्यधिक पवित्रता एवं संयम-नियम का विधान है तो द्वितीय चरण में खुलकर एवं उन्मुक्त रूप में हास-परिहास में अपशब्दों का प्रयोग भी होता है। "हो" भाषा सीखने का ही यह लाभ या उपलब्धि थी कि मैं "दीकू" के रूप में कम जाना जाता था और "गोमके" के रूप में अधिक। जीवन के जो क्षण बरकेला के मानकी, करकट्टा एवं चाचा के मुण्डा, सिंहभूम के लोक नेता श्री बागुन सुम्ब्रुई, "हो" भाषा के विशेषज्ञ श्री नृपेन्द्र कुमार सामन्त (अधिवक्ता), तत्कालीन युवा नेतृत्व को सम्भालने वाले श्री देवेन्द्रनाथ चम्पिया के साथ व्यतीत किये गये, वे आजीवन अविस्मरणीय रहेंगे। "सिरिंसिया" की घाटी हो या बन्दगाँव की टेबोघाटी-सभी परिचित से हो गये थे और वनों में पुष्पितत कुसुम और करंज की मादक खुशबू जीवन में रच-बस गयी थी। जयन्तगढ़ के अवशेष प्राचीरों से अभी भी "हो" विद्रोह का उलगुलान सुनाई पड़ता है। स्वच्छन्द एवं उन्मुक्त जीवन जीने के प्रेमी "हो" जनजाति के लोग प्रकृति एवं संस्कृति से इतने अधिक जुड़े हुए हैं कि उनसे अलग रखकर उनके अस्तित्व की कल्पना ही नहीं की जा सकती। ऐसे "सिंगबोंगा" के सरल मानस-पुत्रों की भाषा, बोली एवं संस्कृति के माधुर्य में खो जाना स्वाभाविक ही है।

"हो" जीवन सम्पूर्ण एवं सर्वाङ्ग रूप से "लोक-जीवन" के अतिशय निकट है और उनकी लोक कथाओं एवं सांस्कृतिक जीवन को जानने-पहचानने की उत्कट अभिलाषा वर्षों तक अतीत के गर्भ में पलती रही। अन्ततः उसे मूर्त रूप देने की प्रेरणा मिली-गुरुदेव डॉ. दिनेश्वर प्रसाद जी से, जो न केवल उत्प्रेरक बने, वरन् मार्गदर्शक भी बने। "हो" लोक-कथाओं में "हो" जनजाति की सम्पूर्ण जीवन-धारा एवं सांस्कृतिक

चेतना प्रवाहित एवं अक्षुण्ण है। एक ''दीकू'' (गैर-छो) होने पर भी दुष्कर कार्य को सम्पन्न करने का मैंने प्रयास किया है और उसी प्रयास का प्रतिफल है यह पुस्तक - ''हो लोककथा : एक अनुशीलन''।

''हो'' लोक-कथाओं के चयन, संकलन एवं विश्लेषण हेतु सिंहभूम के जिला मुख्यालय चाईबासा के अतिरिक्त झींकपानी, खुंटपानी, जगन्नाथपुर आदि के निवासियों से सम्पर्क एवं जानकारी प्राप्त करने का कार्य सम्पन्न किया गया। कथाओं के संकलन हेतु विशेष रूप से ''चाईबासा स्थित लुपुंगुट्ठ'', ''संत जेवियर्स का हो प्रकाशन'', ''मैन इन इण्डिया'' का चर्च रोड, राँची स्थित ग्रन्थागार, ''जनजातीय कल्याण शोध-संस्थान, मोहराबादी, राँची'', ''आदिवासी पत्रिका प्रकाशन कार्यालय, राँची'', ''बिहार एण्ड उड़ीसा एशियाटिक सोसाइटी का ग्रन्थागार'', ''पटना म्यूजियम, पटना'', ''जोहार'' पत्रिका का प्रकाशन केन्द्र, मोरहाबादी, ''मारवाड़ी महाविद्यालय पुस्तकालय, राँची'', ''राँची महाविद्यालय, हिन्दी विभाग, राँची'' के पुस्तकालय विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

''हो'' लोक-कथाओं के संग्रह का आरम्भिक कार्य डॉ. डी.एन. मजूमदार, श्री शरतचन्द्र राय, श्री बी. सुकुमार हलदार, श्री कान्हू राम देवगम, डॉ. ए.के. तियू, श्री सतीश कुमार कोड़ा, डॉ. देवेन्द्रनाथसिंहकू, श्री अनन्त कुमार पिंगुवा, श्री योगेन्द्र मुनि, श्री धनुर सिंह पूर्ति, डॉ. दुर्गा पूर्ति, श्री प्रधान गगराई, श्री लाको बोदरा, फादर जे. डिन्नी, एस. जे. आदि द्वारा सम्पन्न हुआ था। ''हो'' लोक-कथाएँ अधिकांशतः मौखिक ही रही हैं। कथाओं के प्रकाशन एवं प्रसारण के कार्य में ''जर्नल ऑफ बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी'', ''मैन इन इण्डिया'', ''आदिवासी'', ''जोहार'' आदि पत्रिकाओं का उल्लेखनीय योगदान रहा है। श्री डी.एन. मजूमदार ने ''द अफेयर्स ऑफ ए ट्राइब'' में ''हो'' लोक-कथाओं का संग्रह भी किया है। इसी प्रकार ''ए ट्राइब इन ट्रांजिशन'' में भी उन्होंने कतिपय कथाओं का संग्रह प्रस्तुत किया है जो सामाजिक-मिथ भी है। रेवरेन्ड जॉन हॉफ मैन ने भी ''इनसाइक्लोपेडिया मुण्डारिका'' में ''हो'' जाति की उत्पत्ति, उसका आवास-क्षेत्र, उनके जीवन एवं संस्कृति पर काफी प्रकाश डाला है। परन्तु अधिकांश कथाएँ अंग्रेजी भाषा और रोमनलिपि में थीं।

किसी भी जाति के सामाजिक जीवन, धर्म, संस्कृति, भाषा, साहित्य, अर्थिक व्यवस्था आदि का अवलोकन उनमें प्रचलित लोक-कथाओं में किया जा सकता है। लोक जीवन का सही निरूपण एवं मूल्यांकन लोक कथाओं के माध्यम से ही सरल एवं सुलभ है। ''हो'' लोक-कथाओं में ''हो'' जनजाति का उद्‌भव, विकास, कोल्हान क्षेत्र में उनका

आगमन, उनकी सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था, उनके गोत्रों की उत्पत्ति, ''हो'' जनजाति का अन्य जातियों के प्रति भावनात्मक संबंध, उनमें प्रचलित लोक विश्वास आदि का अध्ययन ''हो'' लोक-कथाओं के अध्ययन एवं विश्लेषण से ही सम्भव है। ''हो'' लोक-कथाओं में ''हो'' जनजाति की सांस्कृतिक चेतना एवं धार्मिक विश्वास अक्षुण्ण है, यह उनकी लोक-कथाओं के अध्ययन से ही ज्ञात होता है। ''हो'' अपने को ''सिंगबोंगा'' (सूर्यदेव या परमेश्वर) द्वारा सृजित प्रथम संतान मानते हैं। ''हो'' लोग इसी कारण अन्य इतर जातियों से अपने को श्रेष्ठ भी मानते हैं। ''हो'' का अर्थ होता है आदमी (श्रेष्ठ जीव)। उनके भीतर की यह महत् भावना उन्हें कभी भी और कहीं भी झुकने तथा हीन भावना से ग्रसित होने नहीं देती। वे नैसर्गिक जीवन के प्रेमी हैं। अतः उनकी कथाओं में आखेट, वन, वन्यपशु-पक्षी, झरना, पुष्प आदि मुख्य विषय के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं। विभिन्न पर्व-त्योहारों के आयोजन में उनकी विशेष अभिरूचि रहती है, इन अवसरों पर उनके सांस्कृतिक जीवन की झाँकी देखने को मिलती है। ''माघे'' पर्व में ''होली'' का रंग और ''बा'' पर्व में बसन्तोत्सव की झलक देखकर मन विभोर हो जाता है। हरेक पर्व के अवसर पर अलग-अलग प्रकार के गीत-नृत्य से मनमयूर नाच उठता है। इसी प्रकार ''हो'' समाज का धार्मिक विश्वास तथा परमसत्ता के प्रति निष्ठा का भाव उनमें काफी सजग है। उनके अधिकांश देवी-देवता प्राकृतिक प्रांगण-यथा वन, पर्वत, झरना, तालाब आदि में निवास करते हैं और उनको संरक्षण प्रदान करते हैं। उनके पितर भी मरणोपरान्त उनकी रक्षा करते हैं और उनके जीवन को सुखी बनाने में सहयोग प्रदान करते हैं, यह उनका लोक विश्वास है। पितरों की पूजा को वे अपना परम कर्तव्य मानते हैं। पितरों की आत्मा किसी नवागत शिशु के रूप में उनके परिवार में पुनः जन्म लेती है, यह उनका लोक-विश्वास है और इसी आधार पर दादा (पितामह) के नाम पर परिवार के एक शिशु का नामकरण अवश्य किया जाता है।

उपर्युक्त तथ्यों की पृष्ठभूमि में ''हो'' लोक-कथाओं का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन का महत्व स्वतः स्पष्ट है और इसी कार्य को सम्पन्न करने का प्रयास इस पुस्तक में किया गया है।

पुस्तक का तृतीय संस्करण प्रस्तुत है, जो इसकी लोकप्रियता का परिचायक माना जा सकता है।

-डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा

मोबा. : 07352193017, 09431359190

अनुक्रम

प्रथम अध्याय

"हो" जनजाति

संक्षिप्त इतिहास — "हो" जनजाति मुण्डा जनजाति की ही एक शाखा है। "इनसाइक्लोपेडिया मुण्डारिका" के अनुसार "मुण्डा" जनजाति की तीन शाखाएँ बनीं–

१. महली मुण्डा, जो तमाड़ क्षेत्र में बस गये "तमाड़िया" कहलाते हैं।

२. कम्पाट मुण्डा, जो केवल मुंडा कहलाते हैं।

३. हो मुण्डा, जो केवल "हो" के रूप में जाने जाते हैं।*[1]

इन तीनों का भौगोलिक वास-स्थान भिन्न-भिन्न होने के कारण इनकी बोली में भी भिन्नता आ गयी।

मुण्डा भी स्वयं को मुण्डा नहीं, वरन् "होरको" अथवा "आदमी" कहते हैं उसी प्रकार "हो" अपने को "होको" (आदमी) कहते हैं। संताल अपने को 'होड़ को' कहते हैं।

'होर' अथवा 'होड़' शब्द की उत्पत्ति के विषय में 'मुण्डा' जाति में यह लोक कथा प्रचलित है कि पृथ्वी में पहले पानी-ही-पानी था। भगवान (सिंगबोंगा) पत्ते पर निष्प्रयोजन घूमा करते थे। उन्होंने सबसे पहले जोंक (चेरा) की सहायता से धरती का निर्माण किया। धरती पर वन, पशु-पक्षी आदि का सृजन किया। उन्हीं में से एक 'हुर' नामक पक्षी के अण्डे से मानव सन्तान-एक लड़का और एक लड़की निकली। आगे चलकर उन्हीं से मानव जाति का विकास हुआ। 'हुर' के अण्डे से निकलने के कारण मनुष्य 'होरोको' (होड़को) या 'होड़ो-होन को' कहलाया।*[2]

प्राचीन काल में मुण्डा जाति 'कोल' के नाम से जानी जाती थी और यह सम्बोधन हिन्दुओं अथवा आर्यों द्वारा दिय गया था। बाद में 'हो' 'लरका कोल' या 'लरका हो' के रूप में प्रसिद्ध हुए। 'लरका कोल' या 'लरका हो' का अर्थ होता है, लड़ाकू आदमी। यह सम्बोधन 'हो' की युद्धप्रियता अथवा बहादुरी का प्रमाण है।

---

*1 इनसाइक्लोपेडिया मुंडारिका - भॉलूम-४-एच-पृ. १७६६/६४-रेवरेण्ड जॉन हॉफ मैन, एस.जे.

*2 मुंडा लोक कथाएँ-पृ. ४५ श्री जगदीश त्रिगुणायत

'इनसाइक्लोपेडिया मुण्डारिका' में यह भी वर्णित है कि 'हो' जनजाति के लोग अपने वर्तमान आवास भूमि सिंहभूम (कोल्हान) में प्रवेश करने के पूर्व छोटानागुपर में ही निवास करते थे। उनके मूल निवास स्थान 'हालदा' के नाम से प्रख्यात है और सरवद के निकट पंगुरा स्थित झरना में निवास करनेवाले 'पांगूरूइत बोंगा' की वे आज भी पूजा करते हैं।*1

'सिंहभूम' का प्राचीन नाम 'सिंगदिशुम' था, जिसका अर्थ 'वृक्षों का प्रदेश' होता है। इस नामकरण के साथ 'सिंगबोंगा' को भी जोड़ा जाता है अथवा सिंगबोंगा की आवास भूमि। यह "हो" जनजाति के लोक-विश्वास पर आधारित हे। चन्द्रवंशी सिंह राजाओं द्वारा शासित होने के कारण भी इसे 'सिंहभूम' कहा जाता है, यह भी एक धारणा है। परंतु ऐतिहासिक तथ्यों एवं 'हो' लोक-कथाओं से यह विदित होता है कि सिंह राजाओं, जिनका क्षेत्र 'पोराहाट' था, का शासन 'कोल्हान' प्रदेश में प्रभावकारी नहीं हो सका। अतः 'हो' इस नामकरण के उद्भव को नहीं मानते।

सर्वप्रथम 'हो' लोग पोराहाट क्षेत्र में ही आये जहाँ 'भूइयाँ' जाति के लोग बसते थे। जगरन्नाथपुरी से तीर्थयात्रा कर वापस आते समय मारवाड़ी वहाँ के 'महापात्र' के अतिथि के रूप में आये और बस गये। उनलोगों ने 'हो' और 'भूइयाँ' जाति में संघर्ष करा दिया। अन्ततः 'हो' पोराहाट छोड़कर 'कोल्हान' प्रदेश में आ बसे।*2

'हो' जब दक्षिणी-पूर्वी क्षेत्र में आये तो वहाँ उस समय 'सरावकों' की सभ्यता एवं संस्कृति विकसित थी, जैसा कि बेनीसागर के निकट पाये गये अवशेषों से पता चलता है। 'सरावक' बौद्ध मतावलम्बी थे। वे या तो स्वयं भाग गये होंगे अथवा 'लरका हो' लोगों द्वारा भगा दिये गये होंगे। जब 'हो' कोल्हान क्षेत्र में बस गये तो उन्होंने अपने क्षेत्र में किसी भी अन्य विजातीय लोगों को बसने नहीं दिया। यहाँ तक कि उन लोगों ने कोल्हान होकर जगरन्नाथपुरी जाने के मार्ग को भी बन्द कर दिया। कोल्हान उनका एकछत्र साम्राज्य बन गया। इस बीच अठारहवीं शताब्दी में उनपर पोराहाट राजाओं के साथ-साथ अंग्रेजी शासन-तंत्र द्वारा कई हमले किये गये। परंतु वे अविजित रहे। अंततः नवम्बर १८३६ में गर्वनर जेनरल के एजेन्ट सर थॉमस विल्किसन के प्रयासों से 'सिंहभूम' में शान्ति एवं सुव्यवस्था हेतु सिंहभूम एवं मयूरभंज (उड़ीसा) से २३ पीड़ों

---

*1 इनसाइक्लोपेडिया मुंडारिका १-एच-पृ. १७६४-रेवरेण्ड जॉन हॉफ मैन, एस.जे.

*2 इनसाइक्लोपेडिया मुंडारिका १-पृ. १७६४-६५

(परगना) को लेकर 'कोल्हान' का विधिवत् सृजन हुआ। इन पीड़ों के प्रत्येक गाँव में शान्ति-व्यवस्था एवं राजस्व वसूली के लिये एक 'मुणडा' तथा प्रत्येक ५ से २० गाँवों पर एक 'मानकी' का पद सृजित हुआ। पूर 'कोल्हान' का शासन-सूत्र सम्भालने के लिये सरकारी स्तर पर एक कोल्हान अधीक्षक तथा उपायुक्त का पद सृजित हुआ। इस प्रकार 'हो' जनजाति के लोगों के विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ।*1

सम्प्रति पूर्वी एवं पश्चिमी सिंहभूम तथा सरायकेला खरसावां जिला का सम्पूर्ण भाग 'हो' लोगों का आवास क्षेत्र है। 'हो' की विशेष आबादी सदर अनुमण्डल चक्रधरपुर अनुमण्डल, सरायकेला अनुमण्डल का उत्तरी-पश्चिमी भाग एवं धालभूम अनुमण्डल का उत्तरी-पूर्वी भागों में पायी जाती है।

पुराने सिंहभूम जिला का विस्तार भौगोलिक दृष्टि से २१.५१ उत्तर अक्षांश और ८५.५० पूर्वी अक्षांश के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरी भाग में राँची जिला, दक्षिण में उड़ीसा राज्य, पूर्व में बंगाल तथा पश्चिम में उड़ीसा तथा राँची जिला फैला हुआ है। २००१ की जनगणना के अनुसार 'हो' जनजाति की आबादी कुल ७,४४,८५० है, जिसका १५ प्रतिशत लोग सिंहभूम जिला में निवास करते हैं। झारखण्ड में 'हो' बोलने वालों की कुल संख्या लगभग ८ लाख है।*2

सिंहभूम जिला का कोल्हान क्षेत्र सघन वनों एवं सुरम्य घाटियों का क्षेत्र है। यहाँ के इन दुर्गम घाटियों में ही 'हो' लोगों की सभ्यता एवं संस्कृति फूली-फली है। इनका शारीरिक गठन, नाक-नक्स, केश आदि से प्रतीत होता है कि इनमें आर्यों का भी रक्त मिश्रित है। ये स्वभाव से शान्त, सत्यवादी, मितभाषी, स्वाभिमानी एवं इमानदार होते हैं। 'हो' स्त्रियाँ भी अत्यन्त शीलवती, स्वस्थ भावुक एवं गृहकला में दक्ष होती हैं। कृषि-कार्य में उनकी सहभागिता काफी महत्वपूर्ण है। 'हो' परिवार में 'पितृकुल प्रधान' होता है। पूर्व में स्त्रियाँ (वधुएँ) सामाजिक निधि होती थी। परंतु 'गोत्र' एवं 'गोत्र-प्रतीक' के सृजन के बाद यह मान्यता बदल गयी। अब 'हो' समाज में सगोत्री विवाह वर्जित है और ऐसा होने पर सम्बन्धित व्यक्ति को समाज से निष्कासित कर दिया जाता है।

विभिन्न गोत्र कथाओं के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि कृषि-युग (या कृषि-जीवन) में प्रविष्ट करने के पूर्व 'हो' 'फल संचय' करने वाले एवं शिकारी थे।

---

*1 इनसाइक्लोपेडिया मुंडारिका - भॉलूम एच-पृ. १७६७/६८ रेवरेण्ड जॉन हॉफ मैन, एस.जे.

*2 सेंसस ऑफ इण्डिया २००१।

विभिन्न फलों, पशुओं, पक्षियों आदि को उन लोगों ने काल-क्रमानुसार अपना गोत्र-प्रतीक बनाया और यहीं से उनका आधुनिक सुव्यवस्थित सामाजिक जीवन का शुभारम्भ हुआ।

मानव-विज्ञान की दृष्टि से संस्कृति उतनी ही पुरानी है जितना मानव। अलग-अलग क्षेत्रों में मानव-समाज ने अपनी यौन-भावना, भूख, आवास, पारस्परिक वार्तालाप एवं आदान-प्रदान संबंधी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति संबंधी विशिष्ट जीवन-प्रणाली का सृजन किया, जिसे हमें संस्कृति कहते हैं। दूसरे शब्दों में संस्कृति मानवीय उद्देश्यों, विचारधाराओं के मानवीय संसाधनों की समष्टि हैं। संस्कृति समाज के आन्तरिक एवं आध्यात्मिक गुणों का द्योतक है।*1

उपर्युक्त तथ्यों के आलोक में 'हो' संस्कृति का अवलोकन किया जा सकता है। 'हो' लोक कथाओं में उनकी संस्कृति के विभिन्न पक्ष उगागर होते हैं। उनकी सामाजिक व्यवस्था, शादी-विवाह, पर्व-त्योहार, पूजा-अर्चना में उनकी संस्कृति का अवलोकन हम कर सकते हैं। अपने पूर्वजों की आत्माओं की पूजा, विभिन्न स्थान में रहने वाली देवी-देवताओं यथा-नगेएरा (जलदेवी), गोटेर बोंगा (गोहाल के देवता) की अर्चना आदि में उनकी आदिम संस्कृति की झलक मिलती है। शादी में 'गोनोंग' (वधुमूल्य) लेना भी उनकी संस्कृति है। गर्भाधान-संस्कार, शुद्धिकरण-संस्कार, विवाह-संस्कार, अन्तिम संस्कार आदि 'हो' संस्कृति के अंग हैं। 'हो' जनजाति का जीवन इन विभिन्न संस्कारों से गुजरता है, जो उनकी संस्कृति का अभिन्न अंग है। पर्व-त्योहार एवं शादी-विवाह के अवसर पर विभिन्न प्रकार के नृत्य-गीत उनके सांस्कृतिक जीवन के अभिन्न अंग हैं।

'हो' लोग सिंहभूम को ही अपनी जन्मभूमि एवं कर्मभूमि मानते हैं। 'हो' लोगों के निम्नांकित गीत में उनकी अपनी मातृभूमि के प्रति उनकी भावनाएँ उभरकर सामने आयी है -

'सिगभूमि हसा रेबु जोनोम लेना,
सिंगकन पाइटिबु रिकायगेया,
जोनोम नेनगा दिशुमनेलगा,

*1 भारतीय संस्कृति मेरी दृष्टि में - आदिवासी सांस्कृतिक अंक, अक्टूबर १९७८; प्र. ५-प्रो. ललिता प्रसाद विद्यार्थी।

किलिमिलिबु सेबा सिंगारेया।

अर्थात् "हम लोग सिंहों के इस देश में जन्म लिये हैं। हमलोगों को शक्तिशाली सिंह की तरह कर्म करना चाहिये। आओ, आओ, हम इस सिंहभूम की सेवा करें और अच्छाइयों से इसे सजायें, सवारें।*1"

'हो' भाषा : सामान्य विशेषताएँ

'हो' भाषा मुण्डा भाषा की ही एक शाखा है। 'हो' अलग कोई भाषा नहीं है। मुण्डा भाषा से निकली खेरवारी, संताली, हो, भूमिज, कोरवा, कुर्कू, खड़िया, जुआङ, सवर और गदवा भाषाओं में ही 'हो' का स्थान है।

'हो' भाषा ऑस्ट्रिक भाषा परिवार की है। भारत में बोली जाने वाली ऑस्ट्रिक भाषाएँ आस्ट्रोएशियाटिक और भारत से परे पायी जाने वाली ऑस्ट्रिक भाषाएँ आस्ट्रोनेशियन भाषा परिवार के अन्तर्गत आती है। आस्ट्रोएशियाटिक को दो शाखाओं में बाँटा गया है - मुण्डा और मोनखमेर। मुण्डा के भी दो विभाग हुए - खेरवारी और अन्य। खेरवारी के अन्तर्गत मुण्डारी, संताली, हो, खड़िया, असुरी, बिरहोरी, थारू आदि बोलियाँ आती है।*2 आस्ट्रोनिशियन को तीन भागों में बांटा गया है - इन्डोनेशियन, पोलिनेशियन तथा मेडागास्कर।
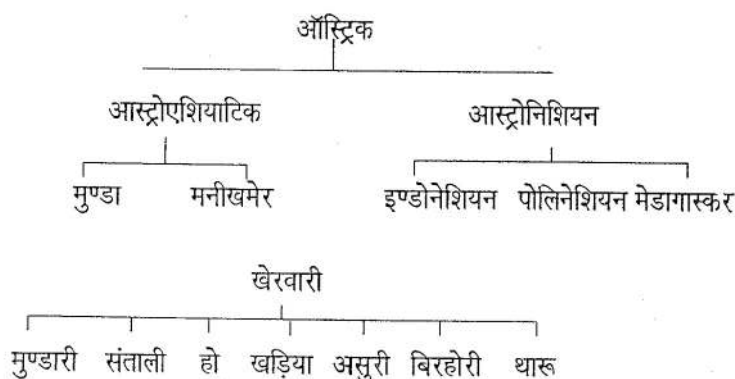
*1 द अफेयर्स ऑफ ए ट्रइब-पृ. १८ - श्रीमती स्वर्णलता प्रसाद - पृ. क, ख (परिचय)।

*2 भारत का सर्वेक्षण - सर जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन - हिन्दी अनुवाद डॉ. उदयनारायण तिवारी - पृ. ६४, ७१, ७२, ७३।

मुण्डा भाषाएँ योगात्मक परिवार की हैं और इस परिवार की विशेषताएँ 'हो' में पर्याप्त मात्रा में विद्यमान हैं। इन भाषाओं की तुलना 'तुर्की' से की जा सकती है। मुण्डा में शब्द-निर्माण के लिये प्रत्यय पर प्रत्यय संयुक्त होते चले जाते हैं। इस प्रकार से निर्मित शब्द अपने में पूर्ण होते हैं और इस शब्द का प्रत्येक अक्षर पूर्ण अर्थ को द्योतित करने में सहायक होता है।*1

दूसरे शब्दों में, योगात्मक भाषाएँ उन्हें कहते हैं, जिनमें संबंध तत्त्व, अर्थ-तत्त्व के साथ जोड़ दिया जाता है। इसके तीन वर्ग होते हैं - अश्लिष्ट, श्लिष्ट और प्रश्लिष्ट। अश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में अर्थ तत्त्व के साथ संबंधित तत्त्व जुड़ता जरूर है, पर दोनों की सत्ता स्पष्ट झलकती है। यह योग पूर्व, मध्य और अन्त-तीनों में होता है। आग्नेय भाषाएँ एक साथ मध्य योगात्मक, अन्त्य योगात्मक और पूर्वान्त योगात्मक हैं।*2

आग्नेय भाषा में धातुएँ द्वयक्षर होती है। बलाघात इनमें से प्रायः प्रथम अक्षर पर होता है। भाषा शास्त्रियों का अनुमान है कि द्वयक्षर धातु पहले एकाक्षर रही होगी। क्रिया में उपसर्ग और प्रत्यय मिलते हैं। ये सभी विशेषताएँ 'मुण्डा' शाखा की 'हो' भाषा में भी विद्यमान हैं।

जिस प्रकार हिन्दी-चीनी भाषाओं में अन्तिम व्यंजन को अक्सर रोककर अथवा निम्न स्तर करके उच्चारित किया जाता है, उसी प्रकार मुण्डा में भी व्यंजन का उच्चारण होता है। मुण्डा भाषाओं में ('हो' सहित) यद्यपि पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग संज्ञाओं का भेद वर्तमान है तथापि वास्तव में वहाँ दो ही लिंग हैं। इनमें से एक का संबंध प्राणिवाचक वस्तुओं से तथा दूसरे का संबंध अप्राणिवाचक से है।

'हो' भाषा में एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन - तीन वचन पाये जाते हैं। संज्ञा में अन्य पुरूष सर्वनाम के द्विवचन तथा बहुवचन के रूप जोड़ने से ही दोनों वचन सम्पन्न होते हैं। व्यक्तिवाचक सर्वनामों के सभी लघु रूप क्रियाओं के प्रत्यय रूप में स्वतंत्रतापूर्वक व्यवहृत होते हैं। उत्तम पुरुष सर्वनाम के द्विवचन तथा उससे रहित होता है। इसमें संबंधवाचक सर्वनाम के स्थान पर क्रिया के कृदन्तीय रूपों का व्यवहार होता

---

*1 मुण्डा लोक कथाएँ - जगदीश त्रियुणायत - पृ. ५६

*2 मुण्डा लोक कथाएँ - जगदीश त्रियुणायत - पृ. ५७

है। आर्य भाषा की तरह इसमें भी क्रियापद होते हैं। किन्तु वह एक विचार को ही द्योतित करता है। परन्तु इससे किसी कार्य के होने या करने का अधिकार पूर्ण भावना स्पष्ट नहीं होती।*1

मुण्डा भाषा के ध्वनिसमूह में स्वर तथा सघोष, अघोष एवं अल्पप्राण व्यंजन ही पाये जाते हैं। 'मुण्डा' में घर के लिये 'ओड़ा' का प्रयोग करते हैं जबकि हो में 'ओवा' का व्यवहार होता है। 'हो' हिन्दी में 'खाना' को 'काना' और घर को 'गर' उच्चारित करते हैं। हिन्दी के सभी स्वर, स्पर्श वर्ण-य, र, ल, व, स, ह (ड़ छोड़कर) 'हो' में पाये जाते हैं। पर इनके अलावा अर्द्धव्यंजन क्, च्, त्, प् हैं जिनका उच्चारण भिन्न है। इनके उच्चारण में पहले श्वास अन्दर को खींची जाती है, तब स्पर्श होता है, फिर स्फोट।

'हो' में अ, आ, ए, ई, ओ, उ स्वर वर्ण हैं जो लम्बे, छोटे, अल्प्राण, महाप्राण आनुनासिक आदि ध्वनि रूप में प्रयुक्त होते हैं। मूलतः 'अ' अल्प (धीमा) केन्द्रीय स्वर, 'ए' मध्य अग्रस्वर 'ई' (आई) उच्च अग्रस्वर 'ओ' मध्य पार्श्व (पश्च) स्वर तथा उ (यु) उच्च पश्च स्वर है। उदाहरणतः 'ए' जब लम्बा स्वर के रूप में व्यवहृत होकर 'मेड' के रूप में आता है तो उसका अर्थ 'लोहा' होता है और लघु स्वर में व्यवहृत होने पर 'मेड' का अर्थ आँख होता है। इस प्रकार स्वर की ध्वनि के विस्तार एवं संकोच से अर्थ में परिवर्तन हो जाता है। इसी प्रकार 'सेता' (अल्प स्वर) का अर्थ कुत्ता होता है और जब सेताः (लम्बा स्वर) बोलते हैं तो उसका अर्थ 'सुबह' हो जाता है।*2

जो शब्द हिन्दी से 'हो' भाषा में आये हैं, उनमें प्रयुक्त व्यंजन अथवा स्वर में उच्चारण भेद के कारण परिवर्तन हो जाता है, परंतु अर्थ नहीं बदलता।

हिन्दी	*हो*
वकील	उकील
वजन	ओजोन
वंश	बोंस

इसी प्रकार हिन्दी में प्रयुक्त 'य' हो में 'ज' हो जाता है -

हिन्दी	*हो*
योगी	जुगि

*1 हो ग्रामर एण्ड वोकाव्यूलरी - जे. डीनी, एस. जे. - पृ. ११, १४

*2 हो ग्रामर एण्ड वोकाव्यूलरी - जे. डीनी, एस. जे. - पृ. १

युग	जुग
यात्रा	जतारा
वकील	उकील

उच्चारण में कुछ व्यंजन का लोप भी हो जाता है। यथा -

हिन्दी	*हो*
महाजन	माजोन

हिन्दी में उच्चारित सघोष व्यंजन ध्वनियाँ 'हो' में प्रयुक्त होने पर अघोष बन जाती है-

हिन्दी	*हो*
ठीक	टिकी
सुख	सुकु
घर	गर
खाना	काना
प्रधान	परदान

'न' का प्रयोग 'हो' में 'ङ' और 'ञ' के रूप में होता है जो उच्चारण भेद से जाना जाता है -

व्यंजन	*प्रयोग*	*शब्द*
न	ङ	अपुङ (पिता)
न	ञ	अपुञ (मेरे पिता)

'हो' में संज्ञा के भेद हिन्दी व्याकरण से भिन्न है। इनमें जीवधारी एवं निर्जीव के लिये दो संज्ञा भेद है। उसी प्रकार सर्वनाम में भी जीवधारी तथा निर्जीव पदार्थों के अनुसार भेद पाये जाते हैं। 'हो' भाषा में व्यक्तिवाचक सर्वनाम के ११ भेद हैं।*1

एकवचन	*हिन्दी*	*हो*
१. उत्तम पुरुष	मैं	आञ
२. मध्य पुरुष	तुम	अम
३. अन्य पुरुष	वह	अए:

द्विवचन

*1 हो ग्रामर एण्ड वोकाव्यूलरी - जे. डीनी, एस. जे. - पृ. ४ एवं ५

१. उत्तम पुरुष (जोड़कर)	तुम और मैं	अलङ्
२. उत्तम पुरुष (जोड़कर)	वह और मैं	आहो
३. मध्यम पुरुष	तुम दोनों	अबेन
४. अन्य पुरुष	उनमें से दो	अकिञ

बहुवचन

१. उत्तम पुरुष (जोड़कर)	हमलोग तीनों (तुमको लेकर)	अबु
२. उत्तम पुरुष (जोड़कर)	हमलोग तीनों (तुमको छोड़कर)	अले
३. मध्यम पुरुष	तुम लोग (तीन या अधिक)	अपे
४. अन्य पुरुष	वे लोग (तीन या अधिक)	अको

"हो" भाषा में "यहीं" और "वहीं" के लिये कोई अनुरूप शब्द नहीं है। अतः "यहीं" के लिये "नेया" तथा "वहीं" के लिये "एना" शब्द का प्रयोग होता है।

संज्ञा (प्राणीवाचक) के द्विवचन में मूल संज्ञा के अन्त में "किङ्" या "किं" तथा बहुवचन में "को" लगा दिया जाता है।*1

	हिन्दी	*हो*
एकवचन	लड़का	सिटिया
द्विवचन	दो लड़का	सिटिया किङ्
बहुवचन	लड़के लोग	सिटिया को

अप्राणीवाचक (निर्जीव) वस्तुओं के लिये ये चिह्न नहीं जोड़े जाते हैं।

"हो" में कुछ ऐसे शब्द हैं, जिनका प्रयोग संज्ञा, क्रिया तथा विशेषण के रूप में किया जाता है।*2 यथा –

हो	*भेद*	*अर्थ*
चकड्	क्रिया	धोखा देना
चकड्	संज्ञा	धोखा

---

*1 हो ग्रामर एण्ड वोकाब्यूलरी – जे. डीनी, एस. जे. – पृ. ५

*2 हो ग्रामर एण्ड वोकाब्यूलरी – जे. डीनी, एस. जे. – पृ. ४ एवं ५

चकड़ विशेषण धोखेबाज

हो भाषा में आदर्श दर्शाने के लिये कभी-कभी एकवचन के लिये द्विवचन का प्रयोग होता है यथा -

हिन्दी	*हो*
तुम बैठा	आम दुब मे
आप बैठिये	आबेन दुब बेन

"हो" भाषा में मूल क्रिया शब्द में न (नो, ने, वाम) लगाकर भाववाचक संज्ञा बनायी जाती है।[*1] यथा -

मूल शब्द (क्रिया)	*अर्थ*	*भाववाचक संज्ञा*	*अर्थ*
१. गोए:	मारना (जान से)	गोञोय:	मृत्यु
२. असि	निवेदन करना	अनासि	निवेदन
३. रकब	चढ़ना	रनाकब	चढ़ाई
४. एटे:	शुरू करना	एनेटे:	प्रारम्भिक
५. तोउड:	फैलाना	तनाउड:	प्रसार, फैलाव

"हो" भाषा में मे, पर, तक सम्प्रदान आदि के चिह्न निम्न प्रकार लगाये जाते हैं।[*2]

चिह्न	*हो*	*प्रयोग*	*अर्थ*
पर	रे	कोरकोमरे	विस्तर पर या खाट पर
में	रे	ओव: रे	घर में
तक	ते	ओव: ते	घर तक
से	एते	ओव: एते	घर से

उपर्युक्त प्रत्ययों में "एते" का स्वर व्यंजन वर्ण के बाद (अन्त में) दीर्घ एवं स्वर के बाद ह्स्व (छोटा) उच्चारित होता है। कुछ शब्दों में, जैसे "ती" के साथ एते नहीं जोड़कर "ते" जोड़ा जाता है। यथा - ती ते (हाथ से)।

इसी प्रकार विशेषणों के साथ जुड़ने वाले प्रत्ययों का प्रयोग हो भाषा में निम्न

हो ग्रामर एण्ड वोकाव्यूलरी - जे. डीनी, एस. जे. - पृ. ६

हो ग्रामर एण्ड वोकाव्यूलरी - जे. डीनी, एस. जे. - पृ. १०

हो ग्रामर एण्ड वोकाव्यूलरी - जे. डीनी, एस. जे. - पृ. १०-११

प्रकार होता है।*3

प्रत्यय	*हो रूप*	*उदाहरण*	*अर्थ*
में/पर	रे	नेन रे/नेरे	यहाँ
में/पर	ते	एन ते	वहाँ
में/पर	रे	ओकोनरे	कहाँ
तक	ते	मेनते/नेते	यहाँ
से	एते	नेन एते	यहाँ से
से	एते	एन एते	वहाँ से
से	एते	ओकोनएते	कहाँ से

उपर्युक्त प्रत्ययों के पश्चात् ''ता:'' एवं ''पा'' जोड़कर किसी निश्चित स्थान या लगभग स्थान का बोध कराया जाता है। यथा -

नेनता: ते	ठीक इस स्थान तक
नेनपाते	लगभग इस स्थान तक

''ता:'' एवं ''पा'' को अन्य संज्ञा एवं सर्वनाम के साथ जोड़कर भी सामान्य अर्थ निकाला जाता है। यथा -

अञता: ते	मुझ तक
हातुपाते	ग्राम के निकट तक (आस-पास तक)

इसी प्रकार ''हो'' भाषा में अन्य विशेषण हैं, यथा - दोर, हान, तोर, तेर जिनके साथ ते, रे एते को जोड़कर स्थान की दूरी आदि का संबंध जाना जाता है।

''हो'' भाषा में भी सकर्मक एवं अकर्मक क्रियाएँ होती हैं। इन क्रियाओं के अन्त में कारक का चिह्न लगाकर वाक्य पूरा किया जाता है।*1 यथा -

चिह्न	*क्रिया*	*प्रयोग*	*अर्थ*
में	दुब	दुब में	तुम बैठो

*1 हो ग्रामर एण्ड वोकाब्यूलरी - जे. डीनी, एस. जे. - पृ. १२

बेन	दुब	दुब बेन	तुम दोनों बैठो
पे	दुब	दुब पे	तुम सभी बैठो

कुछ क्रियाओं में "में" लगाकर "म" ही जोड़ना उच्चारण की दृष्टि से ठीक होता है। यथा – "हुजु" (आना) के साथ "में" के स्थान पर "म" – "हुजु:म" बोला जाता है।

क्रिया को कर्तृवाच्य के रूप में प्रयुक्त करने के लिये "हो" में यदि शब्द का अन्त "स्वर" से होता है तो "न" एवं व्यंजन से होता है तो "एन" जोड़ दिया जाता है।*1 यथा –

मूल शब्द	*अर्थ*	*चिह्न*	*प्रयुक्त शब्द*	*अर्थ* (हिन्दी)
तम	मारना	एम	तमेम मे	अपने को पीटो
ओड़ा	नहाना	न	ओड़न में	अपने नहाओ
हपा	चुप रहना	न	हपन में	चुप रहो
उटा	उठाना	न	उटन में	उठ जाओ

"हो" भाषा में कर्मवाच्य में क्रिया को बदलने के लिये "वो:" लगाया जाता है। "हो" में प्राय: किसी कार्य के होने का अर्थ या भाव ही कर्मवाच्य में दर्शाया जाता है।*2 उदाहरण :-

हो	*हिन्दी*	*कर्मवाच्य*	*हिन्दी*
बुगि, बुगिन	अच्छा होना	बुगियो:, बुगिन:	अच्छा होना
हरा	बढ़ना	हरावो:	बार्धक्य
मरङ्	बड़ा होना	मरूङो	बड़ा होना
बी	पेट भरना	बियो:	भरपेट

सकर्मक क्रिया के साथ निर्जीव एवं सजीव वस्तु को दर्शाने के लिये विशेष सूचक चिह्न लगाकर उसका अर्थ ध्वनित किया जाता है। सजीव सूचक चिह्न "मे" या "म" "बेन" "पे" के बीच में "ए" लगाया जाता है।*3 यथा –

१. फल खाओ — जो जोमे मे

---

*1 हो ग्रामर एण्ड वोकाव्यूलरी – जे. डीनी, एस. जे. – पृ. १३

*2 हो ग्रामर एण्ड वोकाव्यूलरी – जे. डीनी, एस. जे. – पृ. १४

*3 हो भाषा कैसे सीखें – मोतीलाल निरूवा – पृ. २०–२१

२. तुम दोनों इसे खाओ	जोम बेन
३. तुमलोग इन फूलों को पकड़ो	बा को सबे पे
४. इस चीज को पकड़ो	नेना सबे पे

इसी प्रकार क्रिया एवं पुरुष के विभिन्न रूपों में भिन्न-भिन्न सूचक चिन्हों को लगाकर अर्थ परिवर्तन किया जाता है, यह ''हो'' भाषा की विशेषता है।

लिंग भेद ''हो'' भाषा में भी होता है। परंतु लिंग भेद बताने के लिये स्त्री-पुरुषवाची शब्दों को जोड़ना पड़ता है। इसके लिये ''कोवा'' कुई, एँगा, सान्डी आदि शब्दों का प्रयोग होता है। यथा -

लिंग	*हिन्दी*	*हो*
पुलिंग	लड़का	कोवा होन
स्त्रीलिंग	लड़की	कुई होन
पुलिंग	मुर्गा	सान्डी सिम
स्त्रीलिंग	मुर्गी	एंगा सिम

इस प्रकार कोवा-कुईं मनुष्य के लिये तथा सान्डी-एंगा पशु-पक्षी के लिये प्रयुक्त होते हैं। *1

''हो'' में नपुंसक लिंग भी होते हैं जिसका व्यवहार निर्जीव वस्तुओं के लिये किया जाता है। यथा -

जाटी	-	चटाई
करकोम	-	चारपाई

''हो'' में उभयलिंग भी होता है जिसके दोनों लिंगों (स्त्रीलिंग एवं पुलिंग) का बोध होता है। *2 यथा -

हो	*हिन्दी*
जुड़ी	साथी, मित्र
मेरोम	बकरा या बकरी

*1 हो भाषा कैसे सीखें - मोतीलाल निरूवा - पृ. २१

*2 हो भाषा कैसे सीखें - मोतीलाल निरूवा - पृ. २२-२३

होन	लड़का या लड़की
उरि	गाय या बैल

कारक के चिह्न भी "हो" भाषा में पाये जाते हैं। कर्त्ता का "ने" तथा कर्म का "को" चिह्न का "हो" भाषा का लोप हो जाता है। शेष चिह्न निम्न प्रकार प्रयुक्त होते हैं।*1

कारक	*हिन्दी चिह्न*	*हो चिह्न*
करण	से	ते
सम्प्रदान	को, के लिए	लगिड़्
अपादान	से	एते
संबंध	को, का, के	रेआ
अधिकरण	में, पर	रे
संबोधन	हे, अरे	अया, अलई, आलेया, आरे

संबोधन को छोड़कर अन्य सभी चिह्न हिन्दी की अपेक्षा "हो" में अधिक सरल एवं संक्षिप्त हैं।

हो भाषा में क्रिया का लिंग भेद नहीं होता है। परंतु क्रिया का वचन, पुरुष काल से संबंध होता है। प्राणीवाचक और अप्राणीवाचक की एक विभक्ति होती है। यथा–

आता है – हुजुः तनाए
आती है – हुजुः तनाए

सकर्मक क्रिया जब कर्त्ता के साथ मिली हुई आती है और विशेष करके उसका व्यवहार कर्त्ता ही में पड़ता हो तो अपने आगे "न" या "एन" प्रत्यय लाती है।*2 यथा–

ओड़ा से ओड़न – नहाना
ओजो से ओजोन – भार, वजन

---

*1 हो भाषा कैसे सीखें – मोतीलाल निरूवा – पृ. २५

*2 हो भाषा कैसे सीखें – मोतीलाल निरूवा – पृ. २५-२६

कर्म प्रधान क्रिया कर्म को प्रथम स्थान और कर्त्ता को इसके पीछे लाकर क्रिया के आगे "ओ" प्रत्यय जोड़ने से बनता है। भूतकाल में "ओ" का "ए" करना पड़ता है।*1 यथा -

खायी गयी	-	जोमेयाना
खाया गया	-	जोमेयाना
चला गया	-	सेनोः येना
चली गयी	-	सेनोः येना
आया था	-	हुजुः लेनाए
आयी थी	-	हुजुः लेनाए

विधि क्रिया (आज्ञा) में यदि कर्म अप्राणीवाचक हो तो क्रिया के अन्त में "ए" और प्राणीवाचक कर्म हो तो क्रिया के अन्त में दीर्घ हो जाता है। यथा–

अप्राणीवाचक	-	पकड़ो	-	सबे में
		खाओ	-	जोम में
प्राणीवाचक	-	पकड़ो	-	सबे में
		खाओ	-	जोमे में

हो भाषा में वर्तमान कालिक क्रिया सदा "तना" या "एतना" के साथ होती है।

भूतकालिक क्रिया याना, केडा, लेडा, केदा, केड, लेद, लेना आदि के साथ अन्त होती है। यथा -

मैंने देखा - अञ नेल केडा

आसन्न भूतकालिक क्रिया सदा अकैया, अकडा और अकदा या अकैअ, अकद और अकड के साथ समाप्त होती है।*2 यथा -

मैंने देखा है - आञ नेल केडाञ

---

*1 हो भाषा कैसे सीखें - मोतीलाल निरूवा - पृ. २६-२७

*2 हो भाषा कैसे सीखें - मोतीलाल निरूवा - पृ. २८ से ३०

तुम देखा है	-	आपे नेल केडापे
उसने देखा है	-	इनिः नेल केडाए

पूर्ण भूतकाल में किसी क्रिया की पूर्णता और भूतकाल की दूरता का बोध होता है। "हो" भाषा में पूर्ण भूतकालिक क्रिया प्रायः केडटाई केना, लेद टाई केना, केटाई केना या लेटाई केना और कीःअटाई केना के साथ अन्त होती है। यथा –

मैंने देखा था	–	अञनेल केडटाई केना।
उसने देखा था	–	इनिः नेल केडटाई केनाए।
तुमने देखा था	–	आपे नेलकेडटाई केना पे।

संदिग्ध भूतकाल में इदु जोरांग या चितोरांग जोड़कर इस क्रिया का बोध कराया जाता है। यथा –

मैंने देखा होगा	–	इदुञ नेल केडा।
उसने देखा होगा	–	इदुए नेला केडा।
तुमने देखा होगा	–	इदुपे नेल केडा।

अपूर्ण भूतकाल में क्रिया के अन्त में "तनटाइकेना" जोड़ दिया जाता है। यथा –

मैं देखता था	–	अञ नेलेतनटाइकेना।
वह देखता था	–	इनिः नेलेतनटाई केनाए।
तुम देखते थे	–	आपे नेलेतनटाई केना पे।

हेतु हेतु मद् भुतकाल दर्शाने के लिये धातु के अन्त में "केडते आ" या "कीतेआ" जोड़ना पड़ता है। परंतु बोलचाल की भाषा में "होनांग" जोड़ जाता है।*1

सामान्य वर्तमान काल में धातु के अन्त में "तन" और "एतन" या "इतन" जोड़ दिया जाता है। यथा –

मैं खाता हूँ	–	अञजोम तना।

*1 हो भाषा कैसे सीखें – मोतीलाल निरूवा – पृ. ३१–३२

वह खाता है	–	इनिः जोम तनाए।
तुम खाते हो	–	आपे जोम तनापे।

संदिग्ध वर्तमान काल में "इदु शब्द जोड़कर इस काल की क्रिया को पूर्ण किया जाता है। यथा –

मैं खाता होऊँगा	–	इदुञ जोमेतना।
वह खाता होगा	–	इदुए जोमेतना।
तुम खाते होगे	–	इदुपे जोमेतना।

तत्कालिक वर्तमान काल में "तना" लगाया जाता है। यथा –

मैं देख रहा हूँ	–	अञनेले तना।
वह देख रहा है	–	इनिः नेले तनाए।
तुम देख रहा है	–	अम नेले तनाम।

सामान्य भविष्यकाल में "एआ" या "ईआ" लगाकर क्रिया बनती है।३१ यथा –

मैं जाऊँगा	–	अञ सेनोआ।
तुम जाओगे	–	अम सेनोआ।
वह जाएगा	–	इनिः सेनोआ।

सम्भाव्य भविष्यकाल की क्रिया में "ए" या "एक" लगाया जाता है। यथा-

मैं खाऊँ	–	अञ जोमेअञ।
तुम खाओ	–	अम जोमेकम।
वह खाए	–	इनिः जोमेकए।

पूर्वकालिक क्रिया बनाते समय "केते" केडते, लेडते, केनते आदि जोड़ा जाता है।*1 यथा –

खाकर	–	जोमकेते

हो भाषा कैसे सीखें – मोतीलाल निरूवा – पृ. ३२-३३

आकर	–	हुजु: लेनते
उठकर	–	उटा केनते
देखकर	–	नेला केडते

"हो" भाषा में गुणवाचक विशेषण या अतिशय विशेषण का अर्थ बोध कराने के लिये "एसु" या "पूरा" शब्द जोड़ दिया जाता है। यथा –

हिन्दी	*हो*	*हिन्दी*	*हो*
अच्छा	बुगिन	बहुत अच्छा	एसु बुगिन
खराब	एडका	बहुत खराब	एसु एडका

हो भाषा की यह भी विशेषता है कि इसमें क्रियाओं के अनुरूप अलग-अलग शब्द होते हैं। यथा –

हो	*हिन्दी*
म:	कुल्हाड़ी से काटना
हड्	छड़ी से काटना
इर	हँसुआ से काटना
लटब्	कैंची से काटना
तोवड् या तोपड्	छोटे-छोटे टुकड़ों में काटना
हेसे	वृक्ष की शाखा काटना
चलु:	हल या फाल से मिट्टी काटना

हिन्दी एवं अन्य भाषाओं (लोक भाषाओं) के शब्दों के आ जाने से हो के शब्द-कोष में भी यथेष्ट वृद्धि हुई है।

हो लोक साहित्य

हो लोक साहित्य अधिकांशतः मौखिक रूप में ही विकसित होता रहा है। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व की लिखित सामग्री उपलब्ध नहीं है। "हो" लोक साहित्य का संकलन लोककथाओं के रूप में श्री शरत चन्द्र राय, डॉ. डी.एन. मजुमदार, बी. सुकुमार हलदार, कान्हू राम देवगम आदि महानुभावों ने किया। इन कथाओं का प्रकाशन मुख्यतः १६१४ से १६२६ तक काफी संख्या में हुआ। हो कथाओं, पहेलियों, कहावतों, मुहावरों, शकुन विचार आदि की सामग्री और उनकी समालोचना आदि का प्रकाशन अधिकांशतः जर्नल ऑफ बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, मैन इन इंडिया, जर्नल ऑफ द एन्थ्रोपोलोजिकल सोसाइटी ऑफ बम्बे, एसियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल आदि प्रतिष्ठित एवं ख्याति प्राप्त पत्रिकाओं में हुआ। "हो" लोक साहित्य की कई पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं जिनमें डॉ. एस.के. तियू द्वारा प्रकाशित "तुरतुङ", "सइयाँ मरसल" आदि मुख्य हैं, जो हो भाषा एवं साहित्य (विशेषकर लोक साहित्य) की प्रगति की दिशा में काफी सहायक रही है। इसके अतिरिक्त राँची से प्रकाशित जनसम्पर्क विभाग, बिहार की पत्रिका "आदिवासी" भी "हो" लोक कथाओं, गीतों आदि को प्रकाशित करती रही है। राँची से प्रकाशित "जोहार" पत्रिका भी हो भाषा के विकास में प्रयत्नशील है। कोल्हान सकम भी पाक्षिक पत्रिका है।

हो भाषा-साहित्य की अद्यतन प्रकाशित पत्रिकाएँ :-

पत्रिका का शीर्षक	*अवधि*	*प्रकाशन स्थान*
कोल्हान सकम	मासिक	जमशेदपुर (पू. सिंहभूम)
सरण्डा सकम	वार्षिक	चाईबासा (प. सिंहभूम)
सिंहभूम सकम	वार्षिक	राँची
उपरूम	वार्षिक	चाईबासा (प. सिंहभूम)
सेतेङ	वार्षिक	तदैव
जोहार	मासिक	तदैव
आरसी	वार्षिक	दिल्ली
डियङ्	त्रैमासिक	तदैव

श्री डी. एन. मजूमदार ने अपनी पुस्तक "द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब" में

कतिपय "हो" लोक कथाओं का संकलन किया है जो पूर्व में मौखिक साहित्य के रूप में प्रचलित रही होगी। हो भाषा एवं साहित्य के विकास के लिये कुछ अन्य विद्वानों ने भी "हो" भाषा संबंधी कुछ कार्य किये हैं। इनमें जयदेव दास अभिनव द्वारा रचित आंदी और विवाह, सरजोम बादुंबा, हो भाषा और साहित्य, डब्लू. जी. आर्चर का "हो दुरङ", सी.एच. बोम्पास का फॉकलोर ऑफ कोल्हान आदि उल्लेखनीय कार्य हैं।

हो शिष्ट साहित्य

"हो" लिखित साहित्य में निम्नांकित पुस्तके प्रकाशित हुई हैं जिन्हें हो शिष्ट साहित्य में रखा जा सकता है –

१.	सेंगेल	श्री सतीश कुमार कोड़ाह
२.	हो दुरङ पोथी	श्री कान्हू राम देवगम
३.	हो चपाकड़् कहनी	श्री सतीश कुमार कोड़ाह
४.	चास रे या अताक	तदैव
५.	गेल हगेयो	तदैव
६.	एरे उई अ	तदैव
७.	सतीश रूमुल	तदैव
८.	सतीश तन्त्र संहिता	तदैव
९.	दिशुम रूमुल मगेदुरङ	श्री शिवचरण बिरूवा
१०.	आदिवासी सिविल दुरङ	डॉ. दुर्गा पुरती
११.	आदिवासी देयोंवा	तदैव
१२.	आदिवासी गुनी	डॉ. दूर्गा पुरती
१३.	उरिः केडा कोवाः	तदैव
१४.	बोंगा बरूको	प्रधान गहराई
१५.	होबु हाने को	तदैव
१६.	मरांग बोंगा	तदैव
१७.	हो होन को	गोसाई देवगम
१८.	मोड़े को नितिर सकम	राम सिंह कुटिया
१९.	वारङ् चिति	लाको बोदरा

२०.	पोम्पो	तदैव
२१.	शाहर होरा	तदैव
२२.	रघुवंश	तदैव
२३.	होरा बारा	तदैव
२४.	हो हयम् पहम पुथी	तदैव
२५.	हलङ्-हलपुङ्	तदैव
२६.	सुड़ा सगेन	रामो बिरूवा
२७.	दिशुम रूमुल	डॉ. सोनेया कुमार तियु
२८.	हो दिशुम हो होन को	धनुर सिंह पूर्ति (सात भागों में)
२९.	हो दुरंग	डब्लू.जी. आर्चर (गीत संग्रह)

हो भाषा में हिन्दी से कुछ अनुवाद का कार्य भी हुआ है जिसमें पद्मश्री देवेन्द्र सामन्त द्वारा अनुवादित सत्यनारायण व्रत कथा, महात्मा गाँधी आदि पुस्तकें हैं। राँची से कल्याण विभाग के सहयोग से प्रकाशित "जोहार" पत्रिका "हो" भाषा के साथ-साथ छोटानागपुर की अन्य जनजातियों के भाषाओं के विकास का कार्य कर रही थी। हो भाषा-भाषी अन्य यशस्वी रचनाकारों में सर्वश्री देवेन्द्रनाथ सिंहकू, ए.के. पिंगुवा "अशान्त", बलराम पाट पिंगुआ, योगेन्द्र मुनि, बी.एल. तामसोय "अमन" मुनिचक्रधर गुइयाँ आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। हो भाषा-साहित्य को विभिन्न विधाओं पर सृजन के कार्य में ये सम्पूर्ण निष्ठा से लगे हुए हैं। इस पुस्तक के लेखक की दो पुस्तकें हो भाषा और साहित्य का इतिहास तथा हो कोअः कजिकुड़ि केजि को किताब भी महत्वपूर्ण रचना है।

हो लोक गीत राष्ट्रीय भावना की कविता, ललित निबन्ध, हो पर्व-त्योहार, हो संस्कृति के विकास आदि से संबंधित अनेक रचनाएँ प्रकाशित हो रही हैं जो "हो" भाषा-साहित्य के विकास के मार्ग को प्रशस्त कर रही हैं।

हो भाषा के विकास के लिये र१६१५ ई. में श्री एल. बरो ने "हो" व्याकरण की रचना की थी, जो पुनः प्रकाशित नहीं हो सकी है। रेव. ए. नोट्रोट ने "ग्रामर ऑफ द कोल" की रचना की थी। "इनसाइक्लोपेडिया मुण्डारिका" जॉन हॉफमैन द्वारा रची गयी जो मुण्डारी व्याकरण के साथ-साथ ही शब्दकोष के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण कृति है।

"जेवियर हो प्रकाशन" सन्त जेवियर्स उच्च विद्यालय, लूपुंगुट्टू, चाईबासा द्वारा "हो" भाषा एवं साहित्य के विकास की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किये जा रहे हैं। उक्त प्रकाशन से प्रकाशित जे. डीनी, एस.जे. द्वारा रचित "हो ग्रामर एण्ड वोकव्युलरी" तथा "हो इंग्लिश डिक्शनरी" महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हैं। इस प्रकार हो लिखित साहित्य में लोककथा, लोकगीत, निबंध, तंत्र-मंत्र संबंधी रचनाएँ, पहेली, बुझौवल, कहावत एवं मुहावरा आदि उपलब्ध हैं। शकुन विचार पर भी कुछ रचनाएँ उपलब्ध हैं जिनका संकलन एवं प्रकाशन विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में होता रहा है। डॉ. दुर्गा पुरती ने हो भाषा में विभिन्न जड़ी-बुटियों से पशु एवं मनुष्य की चिकित्सा संबंधी पुस्तकों की रचना की है। श्री सतीश कुमार कोड़ाह ने तंत्र-मंत्र पर पुस्तकें लिखी हैं। श्री धनुर सिंह पूर्ति ने "हो दिशुम हो होन को" पुस्तक सात खण्डों में लिखी है, जिनमें जन्म, मरण, विवाह, शिकार, खेल, पर्व-त्योहार, लोक-कथा आदि का संकलन किया है। हो लिखित साहित्य का विकास शनैः-शनैः, परंतु सही रूप में हो रहा है, यह उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है।

वर्तमान में हो भाषा के साहित्य सृजन (लेखन) में कई उल्लेखनीय हस्ताक्षर अपना सक्रिया योगदान दे रहे हैं। इनमें कमल लोयन कोड़ा 'हो', घनश्याम गगराई कासराव कुदादा, डोबरो बुड़िउली, साधुचरण देवगम, डॉ. जानुम सिंह सोय, सचिन्द्र बिरूवा, जवाहर लाल बांकिर, डॉ. दमयन्ती सिंकू, तिलक बारी घनश्याम बोदरा आदि प्रमुख है। लेखक (डॉ. सिन्हा) द्वारा लिखित एवं प्रकाशित 'हो लोक कथा : एक अनुशीलन', 'हो भाषा और साहित्य का इतिहास' तथा 'हो कोअः कजि जुड़ कजि को' पुस्तकें हो भाषा और साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रही हैं।

द्वितीय अध्याय

"हो" लोक–कथा : मिथ

(1) मिथ की सामान्य अवधारणा --

आंग्ल भाषा में "मिथ" को ही हिन्दी में "मिथक" या "धर्मगाथा" के अर्थ में लिया गया है। मिथ, जैसा कि इसके नामकरण से ही स्पष्ट है, सत्य नहीं होता। जो कहानी को शासित करे, वह मिथ या मिथक है।

मिथ या धर्मगाथा की कथा उस हद तक सत्य मानी जाती है जो किसी युग में घटित होकर किसी समाज, उसके देवी-देवताओं, वीरों, सांस्कृतिक विशेषताओं एवं धार्मिक विश्वासों आदि में अतिप्राकृत विशिष्टताओं को सार्वभौमिक रूप में स्पष्ट करती है।*1

मिथ की सत्यता पर प्रकाश डालते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है कि "मिथ और आख्यान विश्वास करने वाले व्यक्तियों द्वारा सत्य माने जाते हैं। हम अपने मिथों और आख्यानों को मनोरंजन के लिये गढ़ी गयी विचित्र या विदेशी कथाएँ नहीं, वरन् वास्तविक घटनाओं और अभिप्रायों का विवरण मानते हैं।"*2

मिथ का प्रयोजन प्राक्सृष्टि और सृष्टि के आदिम युग की उस वास्तविकता की व्याख्या प्रस्तुत करना है जो वर्तमान के सन्दर्भ में भी अपनी सार्थकता रखती है। वस्तुतः मिथ को मिथ बनाने वाली विशेषता है - इसका काल के दो स्तरों पर संचरण। वह अतीत में घटित होकर भी कालातीत है, यह हर क्षण अनुभूत होने वाला वर्तमान है जो भविष्य में भी इसी रूप में जीवित रहेगा।*3

मिथ केवल आदिम जातियों में ही नहीं वरन् आदिम स्तर से आगे बढ़ी हुई जातियों में भी प्रचलित है। इसका एक कारण बहुत से मिथों का आदिम स्थिति से परवर्ती स्थितियों में प्रवाहित होना है। आधुनिक मनुष्य क्रमशः बौद्धिक और संशय प्रिय होता गया है। इस धारणा के आधार पर विकासवादी चिन्तकों ने यह अनुमान किया है

---

*1 लोक कथा विज्ञान - श्री चन्द्र जैन, पृ. २२

*2 सोशल सायकॉलाजी - किम्बाल टॉंग, पृ. १६६

*3 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. प्रो. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. २

कि ये मानव संस्कृति की एक विशेष स्थिति की ही रचना हो सकती है। मिथ के उद्‌भव और विकास के विश्लेषण हेतु फ्रेजर ने मानव संस्कृति मात्र के विकास को तीन युगों में विभाजित किया - १. जादू का युग, २. धर्म का युग और ३. विज्ञान का युग। जादू के युग में मनुष्य प्रकृति की सजीवता में विश्वास करता था और इस विश्वास ने मिथों को जन्म दिया - दिनानुदिन अनुभव के तथ्यों को मिथों में रूपांतरित करने वाला सर्वप्रमुख कारण समस्त प्रकृति की सचेतनता है जिसका सर्वोच्चरूप है "मानवीकरण"।[*1]

लेवीब्रुल और दुर्खीम ने आदिम जातियों के विशिष्ट मनोविज्ञान को आदिम मनोवृत्ति की संज्ञा दी है और यह कहा है कि यह मनोवृत्ति "प्राक्तार्किक" है। अभिव्यक्ति के धरातल पर यह मनोवृत्ति एक ओर मिथसर्जक कल्पना बन जाती है तो दूसरी ओर जादू-मूलक विधि-विधान। उनके अनुसार प्राक्तार्किक या प्राक्‌वैज्ञानिक युग की समाप्ति के साथ मिथसर्जक कल्पना भी समाप्त हो जाती है।

जर्मन मनोवैज्ञानिक बुण्ड्ट ने मिथ की उद्‌भावना के विश्लेषण के लिये मानवजाति के सामाजिक विकास को तीन क्रमिक युगों में विभाजित किया है- (१) टोटम युग, (२) बीर युग और (३) विज्ञान युग। प्रथम दो युगों का संबंध उन्होंने मिथसर्जक कल्पना से बताया है। टोटम युग में (गोत्र प्रतीक युग में) देवी, देवता, दानव और अन्य चमत्कारपूर्ण शक्तियों के मिथ विकसित हुए तथा वीर गाथा काल में आधिभौतिक शक्तियों और जादू की सहायता से अद्‌भुत कृत्यों के करने वाले सांस्कृतियों नायकों के मिथों का विकास हुआ।

परंतु किम्बाल यंग के अनुसार यह सोचना असंगत है कि मनुष्य वैज्ञानिक युग में मिथ से मुक्त हो गया। उनके अनुसार मिथ मानव मनोविज्ञान की एक अनिवार्य विशेषता है। मिथ, भौतिक और सामाजिक, सांस्कृतिक जगत् के साथ सामंजस्य की आवर्तक समस्याओं से उत्पन्न है। मिथ आख्यान मानव-समाज और संस्कृति के लिये उसी प्रकार अनिवार्य है जिस प्रकार अपने उपयोगितावादी लक्ष्यों को और भौतिक विश्व को जोड़ने के लिये यान्त्रिक आविष्कार और बौद्धिक साधनों का व्यवहार।[*2]

रस्किन ने मिथ को एक विशिष्ट अर्थ संबद्ध कहानी माना है जो कुछ असाधारण स्थितियों या घटनाओं को साधारण रूप में प्रस्तुत करती है। पहले

---

*1 प्रिमिटिव कल्चर - प्रथम भाग, फ्रेजी - पृ. २८५

*2 सोशल सायकॉलाजी - किम्बॉलयंग, पृ. २१०, २२०, २२१

आदिमानव समूह ने प्रकृति के दिव्य व्यापारों को देखा और उन्हें मूर्त रूप में शब्द का अर्थ माना। प्राकृतिक सत्ता में सूर्य, आकाश, मेघ, सागर, तदुपरान्त उसका पुरुष रूप अवतार जो एक ऐसा विश्वसनीय तथा स्पष्ट रूप ग्रहण कर लेता है कि उससे हाथ मिलाए आप ऐसे घूम-फिर सकें जैसे अपने भाई अथवा बहिन के साथ कोई शिशु।*1 इस प्रकार इन्होंने मिथ में प्रकृति के मानवीकरण के तत्व को प्रधान माना है।

बर्न ने मिथ का और भी विस्तृत अर्थ दे दिया है। वे इन्हें "कारण निरूपक कहानी" मानते हैं। इसमें विश्व, उसकी उत्पत्ति, प्रलय, जीवन-मरण, मनुष्य, पशु, पक्षी, जातीय भेद, व्यवसाय भेद, धार्मिक उपचार, पैतृक प्रथाएँ तथा रहस्यपूर्ण व्यापारों के कारणों की व्याख्या रहती है। यह कारण प्रायः असम्भव ही होता है, पर जो उन धर्मगाथाओं (मिथ) को मानते हैं वे उनपर विश्वास भी करते हैं।*2

मिथ की व्याख्या करनेवाले यास्क (प्राकृतिक और ऐतिहासिक सम्प्रदाय, ७०० ई.पू.) ने वैदिक कथाओं की व्याख्या करनेवाले नैरूक्त में ऐतिहासिक सम्प्रदायों का उल्लेख किया है। निरुक्त वैदिक कथाओं को प्राकृतिक घटनाओं और आध्यात्मिक अभिप्रायों का रूपक मानते हैं। वे इन्द्र को विद्युत् और वृत्र को मेघ का मानवीकरण मानते हैं तथा इन्द्र-वृत्र संग्राम को विद्युत और मेघ का रूपक।*3

एपि कामरमस (६०० ई. पू.) और थियोगेनस (५०० ई.पू.) के अनुसार "ग्रीक देवता प्राकृतिक पदार्थों के मानवीकरण हैं। प्रकृतिवादी सम्प्रदाय के विद्वानों के अनुसार मिथ प्राकृतिक व्यापारों में आदिम मनुष्य की अतिशय रूचि का परिणाम है। प्रत्येक मिथ अपने अन्तिम विश्लेषण में किसी-न-किसी प्राकृतिक व्यापार की कथात्मक अभिव्यक्ति है। इस कथात्मक अभिव्यक्ति के आधार हैं मानवीकरण और प्रतीकात्मकता।" मैक्समूलर आजीवन यही सिद्ध करता रहा -"आदिम मनुष्य के कवित्वपूर्ण मिथों का प्रेरक सूर्य है।" उसके अनुसार "प्राचीन आर्य जाति के मिथ प्रकाश और अन्धकार के संघर्ष और अन्धकार पर प्रकाश की विजय के चिरन्तन विश्वनाटक की कथात्मक अभिव्यक्तियाँ हैं।*4 ऐतिहासिक सम्प्रदाय मिथ को अतीत की वास्तविक

---

*1 लोक-कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन - पृ. २२

*2 लोक-कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन - पृ. २२

*3 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. प्रो. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. ५

*4 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. प्रो. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. ६

घटना मानता है। यास्क ने नैरुक्तों से ऐतिहासिक का भेद बतलाते हुए कहा है कि जहाँ नैरुक्त वृत्र को मेघ मानते हैं, वहाँ ऐतिहासिक उसे त्वाष्ट्र नामक असुर-'तत्को वृत्रः मेघ इति नैरुक्ताः त्वाष्ट्रोसुर इत्यैहासिकाः।'[*1]

एच.यू. बायर की मान्यता है कि "मिथों में ऐतिहासिक सामग्री मिलती है।" परंतु लोवी के मतानुसार - "आदिम जातियों में इतिहासबोध नहीं होता और उनकी मौखिक परम्पराओं का अपने आप में कोई ऐतिहासिक मूल्य नहीं हैं।"[*2]

एक सिद्धान्त यह भी है कि मिथ की उत्पत्ति भाषा से होती है। कभी स्पेन्सर ने यह कहा था कि "प्रकृति-पूजा का रहस्य प्राकृतिक वस्तुओं (सूर्य, चन्द्र आदि) के नामों की भ्रान्त व्याख्या में सन्निहित है। मैक्समूलर का प्रकृतिवाद मिथ के इसी दृष्टि से किये गये भाषिक विश्लेषण पर आधारित है। भाषा की स्पष्टता ही मिथों को जन्म देती है। ड्यूकेलियन और पाइरहा की कथा में यह कहा गया है कि "उन्होंने प्रलय की समाप्ति के बाद पत्थर फेंके जिनसे मनुष्य जाति की उत्पत्ति हुई"। ग्रीक भाषा में पत्थर और मनुष्य समान या श्रुतिसम शब्दों द्वारा द्योतित किये जाते हैं।[*3]

शब्द पहले अपने मूल या व्युत्पत्ति अर्थ में प्रयुक्त होते थे। एकार्थक शब्दों के अर्थ-विच्छेद के बाद उनके पारस्परिक संबंध की व्याख्या के रूप में यह कहा जाने लगा कि वे वस्तुतः उनके द्वारा मानवीकृत वस्तुएँ - एक दूसरे के पिता-पुत्र, भाई-बहन इत्यादि हैं। अनेकार्थक शब्दों की भी नयी व्याख्या की जाने लगी। सूर्य की करों (किरणों) से यह कथा विकसित हुई कि सूर्य के हाथ हैं और ऋग्वेद में यह कहा गया कि "जब सूर्य का एक हाथ खो गया तो उनका दूसरा हाथ जोड़ दिया गया।"[*4]

धात्वर्थ से विच्छिन्न शब्दों द्वारा अर्जित नये अर्थों की संगति की व्याख्या एक अनिवार्यता बन जाती है। यही वह प्रक्रिया है जो पुरूरवा को राजा बना देती है और उर्वशी को अप्सरा। धात्वर्थ की दृष्टि से पुरूरवा (पुरू) बहुत रव करने वाला अर्थात सूर्य है। पुरूरवा अपने को वसिष्ठ कहता है और वसिष्ठ सूर्य का ही नाम है। उर्वशी उषा देवी है।[*5]

---

*1 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. प्रो. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. ११

*2 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. प्रो. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. ११

*3 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. प्रो. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. १२

*4 ऋग्वेद - १-२२-५

*5 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. प्रो. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. १३

सर जार्ज कॉक्स ने मैक्समूलर के व्युत्पत्तिवाद को स्वीकार करने के बावजूद मिथ को भाषा की विकृति नहीं माना। उसने इसको स्मृतिभ्रंश (फेल्योर ऑफ मेमोरी) या विस्मरण माना। वस्तुतः मिथों की रचना के प्रसंग में भाषा को विकृति की अपेक्षा स्मृतिभ्रंश या विस्मरण का प्रयोग नहीं मानना कहीं अधिक संगत है।

मनोविश्लेषण के विकास के बाद मिथ पर विचार करने की दृष्टि बदल जाती है। मनोविश्लेषण और मनोवैज्ञानिक-सांस्कृतिक विचारक इसे मनुष्य के अवचेतन से संबंधित मानते हैं। फ्रांज बोआज की मिथ संबंधी अनेक धारणाएँ इस मान्यता के बहुत समीप हैं।

फ्रायड और युंग ने मिथ, आख्यान, लोक कहानी आदि पर अपने-अपने ढ़ंग से विचार किया है। फ्रायड के अनुसार प्रतीकित धारणाएँ स्थूल और मूर्त्त हैं और उनमें यौन भावना का महत्व सर्वाधिक है। स्वप्न और मिथ जिनकी आधारभूत प्रक्रिया प्रतीकीकरण है, समान रूप में पर्याप्त सहायक हैं। फ्रायड ने "टोटम ऐण्ड टेबू" में ओडीपस की प्रसिद्ध कथा की व्याख्या इस प्रकार की है – "आदिम मनुष्य पहले कबीले में रहता था। ईर्ष्यालु पिता अपने तरूण पुत्रों को भगा दिया करता था तथा सभी स्त्रियों को अपने अधीन रखता था। सभी भगाये गये भाइयों ने मिलकर पिता से प्रतिशोध लेने का निर्णय किया। वे उसे मारकर खा गये। गोत्र-प्रतीक (टोटम) का भोज इस प्रथम अपराध का समारोह है, जिससे नैतिक बंधनों का आरम्भ होता है। इस गोत्र प्रतीकवाद से दो निषेधों का जन्म होता है। वे हैं- गोत्र-प्रतीक की पवित्रता और असगोत्री विवाह।

ओडिपस-ग्रंथि का आधार मनोजैविक है, इसलिये यह समस्त मानव जाति की मानसिक सृष्टियों की व्याख्या करने में समर्थ हैं।ब्रील ने आदम और हौवा की कथा को मानव के शैशव का वर्णन माना है। उस शैशव में निश्चिन्तता, नम्रता और स्वतंत्रता का राज्य था। उसके बाद यौन-भावना का प्रतीक सर्प आया ओर उसके आते ही सारी परिस्थिति बदल गयी।[*1]

सर अर्नेस्ट जोन्स ने अवचेतन के प्रसंगों को यौन-भावना-परक व्याख्या अपने "कान द्वारा मैडोना का गर्भाधान" शीर्षक निबंध में की है।[*2] जिस प्रकार भारत में कुन्ती के कान द्वारा कर्ण का जन्म और मरुत द्वारा अंजना के गर्भाधान की कथाएँ

बेसिक प्रींसिपुल्स ऑफ साइकोएनेलिसिस-ब्रील-१६६० : ६३

एसेज इन अप्लाइड साइकोएनेसिस – अर्नेस्ट जौन्स – पृ. २६६-३५७

प्रचलित हैं, उसी प्रकार कभी यूरोप में यह विश्वास प्रचलित था कि 'पवित्र आत्मा के श्वास ने "मेरी" के कान से उसके गभ्र में प्रवेश किया और उससे ईसा का जन्म हुआ। सर जोन्स ने यह प्रमाणित किया है कि कान योनि का प्रतीक है और श्वास वीर्य का। इसी तरह श्वास, वायु, ध्वनि, वाणी और शब्द वीर्य का प्रतीक हैं। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार प्रजापति के मुख के श्वास से मनुष्य की रचना हुई।*1

युंग ने उन आदि प्रारूपीय रूढ़ियों का निर्देश किया है जो स्वप्न, मिथ, लोक, कहानी और कविता में आवृत्त होती है, जैसे छाया बुद्धिमान, वृद्ध, बालक, माता सुन्दरी आदि। बालक का प्रतीक केवल परागामी ही नहीं, प्रतिगामी अभिप्राय भी रखता है। वह आगामी सम्भावनाओं का प्रतीक है-मिथक मुक्ति दाताओं में अनेक बाल देवता हैं।

मिथ का स्वरूप निर्वैयक्तिक और सामाजिक है। इसके नायक व्यक्ति न होकर सम्पूर्ण या कबीले हैं। उनके कृत्य प्राकृतिक शक्तियों के विरूद्ध मानवीय संघर्ष और उन पर सामाजिक शक्तियों की विजय के प्रतीक हैं। मिथ में एक ओर समाज और व्यक्ति हैं तो दूसरी ओर प्रकृति और मानव जाति के पारस्परिक संबंध, काव्यात्मक फैन्टेसी के रूप में संकलित होते हैं।

मिथ के विश्लेषण के संदर्भ में प्रकृतिकरण भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है जितना कि मानवीकरण। चन्द्रमा को नायिका का मुख कहकर प्रकृति का मानवीकरण किया जाता है तो नयिका के मुख को चन्द्रमा कहकर मानव का प्रकृतिकरण।*2

अवतारों और लोकनायकों के चरित्रों में प्रकृति विषयक अभिप्रायों का समावेश होता रहा है। एक ओर उनका चरित्र सामान्य मनुष्य के चरित्र से बहुत भिन्न नहीं है तो दूसरी ओर वह अपनी असाधारणता में उससे बहुत भिन्न भी। अवतारों और लोक नायकों में धीरे-धीरे लोकोत्तरता का यह पक्ष इतना प्रबल हो जाता है कि वे स्वयं प्रकृति-प्राकृतिक शक्तियों एवं नियमों के प्रतीक बन जाते हैं। सूर्य और चन्द्रमा की तरह उनके मुखमण्डल के चारों ओर ज्योति का बलय मिलता है उनके एक संकेत पर पहाड़ हिलने लगते हैं और आँधी थम जाती हे। गीता में कृष्ण का विराट् रूप इसी प्रक्रिया की एक परिणति है।

अनुष्ठान और मिथ की घनिष्ठता, संस्कृति के अध्येताओं के लिये एक

---

*1 लोक साहित्य और संस्कृति – डॉ. प्रो. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. २७

*2 द स्ट्रक्चरल स्टडी ऑफ मिथ एण्ड टोटयिज्म, सम्पादक – एडमण्ड लोच १६६७ (लन्दन)।

स्वयंसिद्ध तथ्य रही है। मिथ, अनुष्ठान के रहस्यों, उसके आरम्भ होने के कारणों, उसकी आयोजन विधि और माहात्म्य का उद्घाटन करने के लिये कहे जाते हैं। यह धारणा बहुत प्राचीन है कि अनुष्ठान का जन्म मिथ से हुआ है। किन्तु विभिन्न संस्कृतियों के क्षेत्र में किये गये कार्यों से यह सिद्ध होता है कि अनुष्ठान ही प्राथमिक और पूर्ववर्ती हैं तथा मिथ परवर्ती।

मिथ के स्वरूप के संबंध में पिछले पन्द्रह वर्षों में सबसे महत्वपूर्ण और सर्वाधिक सम्भावनापूर्ण कार्य क्लाद लेवी स्त्रास का हैं। लेवी स्त्रास से एक नये विज्ञान- मिथ विज्ञान का आरम्भ होता है जो किसी भी समाज विज्ञान की समकक्षता कर सकता है। मिथ के व्यावहारिक गठनात्मक विश्लेषण की दृष्टि से लेवी स्त्राव की "आसदीवाल की कहानी" (१९६३) एक महत्त्वपूर्ण कृति है।

"आसदीवाल की कहानी" का विश्लेषण हो या मिथ का सिद्धान्त निरूपण- लेवी स्त्रास सर्वत्र हेगेल और मुख्यतः कार्लमार्क्स के द्वन्द्ववाद से प्रभावित रहा है। वह स्वयं इस बात का उल्लेख करता है, किंतु वह फ्रायड के मनोविश्लेषण से भी अपनी विचार पद्धति की संगति ढूँढ़ लेता हैं। *1

"आसदीवाल की कहानी" में ऊपर और नीचे, पृथ्वी और आकाश, समुद्र और पर्वत, जल और स्थल, पैतृक आवास और मातृक आवास, एक विवाह और बहु विवाह आदि विरोधियों की योजना मिलती है और मार्क्सवादी द्वन्द्ववाद के अनुसार उनकी संवादी परिणति भी। वस्तुतः मिथ का कार्य ही संस्कृति की आधारभूत मान्यताओं और आधार-वाक्यों के अन्तर्विरोधों का चित्रण और निराकरण करना है। *2

मिथ सामाजिक अभिप्रायों के सम्प्रेषण का एक महत्वपूर्ण साधन है। उत्सव, अनुष्ठान, अविश्वास आदि के साथ इसका घनिष्ठ संबंध है और यह मुख्यतः अनुष्ठान के साथ एक सम्मिलित इकाई की रचना करता है। कभी आनुष्ठानिक कृत्य मिथ के नाट्य रूप में आयोजित होते हैं और कभी अनुष्ठान में मिथ का पाठ केन्द्रोन्मुखकृत्य हो जाता है। *3

निष्कर्षतः मिथ मानव जाति के आदि जीवन से जुड़ा हुआ एक अविच्छिन्न अंग है। यदि विश्व की पूरी संस्कृति को नष्ट कर दिया जाय तो भी धर्म और मिथ नष्ट

---

*1 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. प्रो. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. ३७, ३८

*2 द सेवेज माइण्ड - युंग - १९६६ : ५

*3 लोक-कथा और संस्कृति - डॉ. दिनेश्वर प्रसाद - पृ. २०

नहीं हो पायेंगे – वे अगली पीढ़ी में ही फिर से जी उठेंगे। मिथ के अभाव में जीने की कल्पना कुछ वैसी ही असम्भव है जैसी अवयवों के अभाव में शरीरधारी होने की।*1

2. "हो" मिथों का विवरण –

"हो" समाज में प्रचलित एवं हो भाषा में उपलब्ध मिथों को अध्ययन एवं विश्लेषण की दृष्टि से दो भागों में विभक्त करना उपयुक्त होगा -

(क) तत्त्व शास्त्रीय (ख) सामाजिक मिथ

(क) तत्त्व शास्त्रीय – इस वर्ग में ब्राह्माण्डिक मिथ जैसे - सूर्य, चन्द्रमा, तारा, आकाश, धरती आदि की उत्पत्ति कथाएँ, मानव की सृष्टि, देवताओं, बोंगाआदि की कथाएँ आती हैं।

अन्य आदिम जातियों की तरह "हो" जाति के जीवन में भी मिथों का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। उनके मिथों में सृष्टि की उत्पत्ति, विश्व की सृष्टि की अनिवार्यता, विभिन्न "बोंगा" का उद्‌भव आदि की कथाएँ अनवरत रूप से आदिकाल से "मुनुजगर" के नाम से प्रचलित हैं। पितरों की प्रेतात्माओं की उपस्थिति, उनके प्रभाव आदि में "हो" समाज अभी भी शामिल होता है। मैक्समूलर के सौरवाद का दर्शन "हो" मिथों में मिलता है यहाँ सूर्य "सिंगबोंगा" के रूप में उदित होकर उनके जीवन को शासित करता है। वैदिक आख्यानों की मिथकीय व्याख्या करने वाला निरुक्त की तरह परसत्ता (परमात्मा) का प्रकृतिकरण या प्रतीकीकरण का दर्शन भी "हो" मिथों में मिलता है। उन्मुक्त एवं स्वच्छन्द होकर सघन वनों एवं दुर्गम घाटियों में बसने वाली "हो जनजाति" का जीवन प्रकृति एवं प्राकृतिक शक्तियों से अधिक शासित रहा है। अतः "हो" मिथों में प्राकृतिक व्यापारों के मानवीकरण या प्रतीकीकरण की उद्‌भावना प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में देखने को मिलती है।

सृष्टि कथाओं के अनेक रूप "हो" मिथों में वर्तमान हैं जिनमें परमात्मा (सिंगबोंगा) का अवतरण, बुरूबोंगा का प्रादुभाव, ओते (धरती) की उत्पत्ति, दुरूदुम्बु (पेड़ पौधे) के उद्‌भव आदि का दिग्दर्शन स्पष्टतः मिल जाता है। प्रकृति की सचेतनता, जीवन एवं समाज को नियंत्रण करने की उसकी अपार शक्ति, विभिन्न बोंगाओं

---

*1 हो दिशुम हो होन को (भाग-७) - श्री धनुर सिंह पूर्ति - पृ. १-२

(देवताओं) को सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन, कृषि, पशुधन आदि पर कृपा एवं कुप्रभाव (आक्रोश) का सुस्पष्ट चित्रण उनकी विशेषता है। फ्रायड और युंग की मनोविश्लेषण शास्त्रीय व्याख्या के संदर्भ में "हो" जनजाति भी अपने अवचेतन की प्रक्रियाओं एवं दमित इच्छाओं से प्रभावित होकर अपने मिथों में भी अवतारों और लोकनायकों के चरित्रों में प्रकृति विषयक अभिप्रायों एवं उनमें प्राप्त लोकोत्तरता एवं अतिप्राकृतिक शक्ति का प्रतिरोपण किया जाता रहा है। प्रकृति के साथ मानव का तादात्म्य संबंध "हो" मिथों की प्राण शिखा है। यह विशेषता प्रकृति से रात-दिन के निकट साहचर्य के कारण और प्रकृति के पदार्थों में मानवीय (या ईश्वरीय) चेतना के अवलोकन (या प्रत्यारोपण) के कारण ही सम्भव हो सकी है।

यहाँ कुछ प्रसिद्ध "हो" मिथों के उदहारण दिये जा रहे हैं।

1. ओते दिशुम वइयनतेयः जगर[*1] (धरती बनने की कथा) - इस मिथ में सृष्टि की उत्पत्ति कथा कही गयी है। इस मिथ के अनुसार "सिंगबोंगा" ने जब चारों ओर पानी-ही-पानी देखा तो उसके मन में यह विचार आया कि इस पानी को हटाकर धरती का निर्माण कैसे किया जाय। अतः ईश्वर ने सर्वप्रथम कछुवा और केंकड़ा का सृजन किया और उन्हें धरती के निर्माण का काम सौंपा। वे जब इस कार्य में असफल रहे तो सिंगबोंगा ने अपनी जाँघ के मैल से दो चेरा (अर्थ वर्म) पैदा किया - एक को स्त्री और दूसरे को पुरुष बनाया। ये चेरा द्वय को पानी के भीतर भेजकर धरती बनाने का कार्य सौंपा। वे पानी के भीतर जाकर नीचे से मिट्टी को ऊपर निकालना शुरू किये और मिट्टी का पहाड़ बना दिया। वही बाद में कड़ी मिट्टी में परिणत होकर "धरती" बन गया। जो गड्ढे बचे रह गये वे समुद्र हो गये। धरती के निर्माण में चेरों का सहयोग रहा। अतः वे आज भी धरती के भीतर रहते हैं। पर कछुवा और केकड़ा धरती नहीं बना सके इसलिये वे आज भी पानी में रहते हैं।

2. ओते हासारे दरू–दुम्बु ओन्डो जिव को बइयनतेयः जगर[*2] (खेत, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु के बनने की कथा) - यह

---

*1 हो दिशुम हो होन को (भाग-७) - श्री धनुर सिंह पूर्ति - पृ. ३-४

*2 हो दिशुम हो होन को (भाग-७) - श्री धनुर सिंह पूर्ति - पृ. ५, ६, ७

कथा पृथ्वी पर खेत, जीव-जन्तु एवं पेड़-पौधे के सृजन के मिथ से संबंधित है। इसमें पेड़-पौधे आदि के साथ-साथ मानव-सृजन की कथा भी सन्निहित है।

प्रारम्भ में तो सिंगबोंगा ने कछुवा, केकड़ा और चेरा का सृजन किया था। परंतु असमतल धरती को समतल करने तथा उस पर अन्य जीवों-पशुओं तथा वनस्पतियों के सृजन हेतु हाथ-पैर सम्पन्न किसी ऐसे जीवधारी की आवश्यकता थी जो कि धरती का श्रृंगार कर सके। अतः सिंगबोंगा ने दो भुजाओं से सम्पन्न "सुरमि-दुरमि" का सृजन किया। यही प्रथम अथवा आदिम मानव-युगल हुए। सृष्टि की सृजन श्रृंखला को आगे बढ़ाने के लिये सिंगबोंगा ने विभिन्न वन्य पशुओं का सृजन किया और उनके सहयोग से धरती को शस्यश्यामला (समतल एवं उपजाऊ) बनाने का आदेश सुरमि-दुरमि को दिया। यह कार्य उन लोगों ने बड़े मनोयोग से किया। "हो" प्रदेश में उन लोगों ने पेय-जल की सुविधा के लिये दस-पोखरा (तलाब) का भी निर्माण किया। उनके कठिन परिश्रम से धरती पर पेड़-पौधे उग आये और चारों तरफ हरियाली छा गयी।

अभी भी "हो" प्रदेश में यह एक मिथक प्रचलित है कि सुरमि-दुरमि द्वारा निर्मित कई पोखरें पहाड़ियों के ऊपर एवं नीचे हैं। आज भी अन्य बोंगा (देव) की तरह सुरमि-दुरमि की पूजा होती है और विशेष रूप से करते हैं।

3. *मनवा सिरजोनेयन जगर*[*1] (मनुष्य के सृजन की कथा) - सुरमि-दुरमि अर्द्ध-मानव प्राणी थे और पूर्ण मानव के सृजन का कार्य "सिंगबोंगा" ने बाद में किया। सुरमि-दुरमि आदिम मानव-जाति के विकास की कड़ी थे। सुरमि-दुरमि द्वारा रचित सुरम्य प्रकृति को देखकर सिंगबोंगा बहुत प्रसन्न हुए और सृष्टि के नवलतम उपहार के रूप में सृजित तरु-वाटिकाओं को देखकर उनकी सुरक्षा, उपयोग एवं विकास की चिन्ता उन्हें हुई। अतः उन्होंने मिट्टी की मूर्ति बनाकर उसमें प्राण का प्रतिरोपण किया और "लुकुहड़म" या "लुकु" नाम से संबोधित किया। वह अकेला पुरुष सृजन करने में असमर्थ था। इसलिये सिंगबोंगा ने उसकी बायीं पसली की हड्डी निकाल कर (जब वह सोया था) एक स्त्री का निर्माण किया जिसका नाम "लुकुमी" (लुकुमी बूढ़ी) पड़ा। सम्भवतः यही "लुकुमी" नाम आगे चलकर "लक्ष्मी" के रूप में

---

*1 हो दिशुम हो होन को (भाग-७) - श्री धनुर सिंह पूर्ति - पृ. ७, ८, ९

विकसित हुआ। इस प्रकार "हो" मिथ में आदि पुरुष "लुकु" और आदि नारी "लुकुमी" हुई जिनसे मानव जाति का सृजन एवं विकास हुआ।

इस मिथ में आदिम मानव के मनोवैज्ञानिक एवं बौद्धिक विकास की कथा का निरूपण आगे किया गया है। "सिंगबोंगा" ने उन्हें (लुकु एवं लुकुमी) जंगल में पाये जाने वाले "जोजो" (इमली) फल को छोड़कर अन्य फलों को खाने का आदेश दिया था। परंतु बहुत दिनों तक अपनी उत्सुकता को रोक रखने के बाद दोनों ने आत्म नियंत्रण खो दिये और "जोजो" फल को खा लिया। उसके खाते ही उनके मन में "लज्जा" के भाव का उदय हुआ और वे अपने को नंगा महसूस करने लगे। वे पेड़ की पत्तियों से अपनी लज्जा (नंगापन) को ढ़कने को आतुर हो गये। उनके "शर्म" को ढकने का काम परिधान के रूप में "लपटा घास" ने किया और परिधान की आवश्यकता एवं निर्माण का यह प्रथम चरण हुआ।

इस मिथ में एक अन्य उल्लेखनीय तत्त्व है – नई पीढ़ी के सृजन एवं उनके कल्याण हेतु "बोंगा" की पूजा-अर्चना की।

जब लुकु और लुकुमी साथ रहकर भी बच्चा पैदा नहीं कर सके तो सिंगबोंगा ने उन्हें सबई घास की रस्सी बनाकर "गंडू" (खाट) के निर्माण की प्रेरणा दी और जब वे निकटम शारीरिक सम्पर्क में आये तो उनमें यौन-संबंधों का विकास हुआ और तदुपरान्त उनके बाल-बच्चे हुए।

बच्चों को बढ़ने के बाद वे रोगग्रस्त हो गये। अभी तक उन्हें रोग और रोगमुक्ति के संबंध में कोई जानकारी नहीं थी। अतः चिन्तित होकर दोनों सिंगबोंगा को खोजने निकल पड़े। सिंगबोंगा उन्हें एक वृद्ध पुरुष के रूप में मिले। सिंगबोंगा ने उन्हें एक "पुंडिसिम" (सफेद मुर्गा) की बली देने एवं डियङ् (हड़िया) को समर्पित करने का आदेश दिया। ऐसा करने से उनका बच्चा रोग मुक्त हो गया। इस प्रकार "हो" समाज में मुर्गा की बली और डियङ् (हड़िया) बनाकर "बोंगा" को चढ़कर पीने की परम्परा शुरू हुई।

इस प्रकार इस मिथ में मानव के सृजन, मानव प्रवृत्तियों का जन्म, उसके मानसिक विकास के साथ-साथ यौन-भावना का उदय, परमतत्त्व (सिंगबोंगा) के प्रति आस्था और विश्वास, उसे प्रसन्न करने का विधान आदि का समावेश एक साथ किया गया है। इस मिथ का आनुष्ठानिक महत्त्व भी यथेष्ट हैं।

इस मिथ का अवसान होता है – मानव द्वारा परमतत्त्व (सिंगबोंगा) के साक्षात्

दर्शन में अवरोध की घटना से। जब लुकु बूढ़ा और लुकुमी बूढ़ी सिंगबोंगा को अपना अंश (बलि का अंश) ग्रहण करते अपनी आँखों से देख लिया तो ईश्वर (सिंगबोंगा) अप्रसन्न हो उठे। उन्होंने "सोसो" (भेलवा फल) का रस उनकी आँखों में डाल दिया और उनकी उज्ज्वल आँखें काली हो गयीं। इसके बाद वे "सिंगबोंगा" को साक्षात् देखने में असमर्थ हो गये। तब से कोई भी मनुष्य "सिंगबोंगा" को साक्षात् नहीं देख पाया।

इस मिथ के विवेचन से ईश्वर एवं प्रकृति का मानवीकरण, प्रकृति के नाना रूपों का प्रतीकीकरण, परमतत्त्व की सर्वव्यापकता, कालक्रमानुसार विभिन्न मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों का उद्भव एवं विकास आदि के तत्त्व प्रमुख रूप से परिलक्षित होते हैं। मानव के सृजन एवं विकास की कथा का एक रूपक इस मिथ में प्रादुर्भूत हुआ है।

4. सेंगेल गमा (अग्निवर्षा) — एक मिथ "आग की वर्ष" (सेगेल गमा) के शीर्षक से सम्बन्धित है जो "प्रलय" का रूपक है। इस मिथ में यह वर्णित है कि मानव-सृष्टि के बहुत दिनों बाद संसार में मनुष्यों की जनसंख्या अत्यधिक बढ़ गयी और अधिकांश लोग "सिंगबोंगा" के बताये रास्ते को भूलकर कुमार्गगामी हो गये। लोग भले-बुरे की पहचान भूल गये। तब "सिंगबोंगा" ने आग की वर्षा कर उन्हें समाप्त करने का विचार किया। उसने "अग्निवर्षा" का आवाहन किया। सभी जंगल, पेड़-पौधे जलने लगे, पानी सूख गया और सभी जीवधारी मरने लगे। "हो" बुजुर्ग लोग कहते हैं कि वे मरकर पत्थर हो गये। कहीं-कहीं पहाड़ों पर हाथी, बाघ, भालू भी पत्थर बन गये। उड़ीसा के मयूरभंज जिला के निकट एवं सिंहभूम जिला के बेनीसागर नामक स्थान में अग्नि वर्षा से मरे मनुष्यों की पत्थर की मूतियाँ अभी भी है – ऐसी किंवदन्ती है।

लेकिन इस "सेंगेल गमा" से अप्रभावित नगेएरा (जल की देवी) ने दो मानव युगल तथा सभी जीवों की एक-एक जोड़ी सुरक्षित बचा लिया। इन सभी को वह मरने से बचा ली, यह जानकर सिंगबोंगा बहुत क्रोधित हुए और उसे शाप दिये कि तुमने मेरी इच्छा के विरुद्ध यह काम किया है। अतः तुम हमेशा इधर-उधर भागती फिरोगी। अन्ततः नगेएरा द्वारा बचाये गये मानव-युगल से ही आगे चलकर मानव-सृष्टि का विकास हुआ।*1

---

*1 मुण्डा लोक कथाएँ – श्री जगदीश त्रिगुणायत – पृ. ४४

"मुण्डा लोक कथाएँ" पुस्तक में "मनवा कोवः दोबड़ा जोनोम" शीर्षक मिथ में जल प्रलय की कल्पना की गयी है जो आदि पुरुष "मनु" के मिथ पर आधारित है।*1

इस मिथ में प्रलय की जो कल्पना की गयी है वह तत्कालीन होते हुए भी सार्वकालिक है। प्रलय की परिकल्पना एवं घटना समस्त विश्व साहित्य में किसी-न-किसी रूप में वर्णित है। सृष्टि का निर्माण एवं विनाश एक अवश्यम्भावी सत्य है जो किसी-न-किसी रूप में प्रागैतिहासिक युग से घटित होता रहा है। जल प्रलय की कथा और उसमें मनु और सतरूपा अथवा कामायनी का मिथक इस मिथ से काफी साम्य रखता है।

अतिप्राकृतिक शक्तियाँ और उनका प्रभाव मिथ का एक विशिष्ट तत्त्व है। "हो" समाज में यह विचारधारा चिरकाल से विद्यमान है कि सिंगबोंगा को अप्रसन्न करने से सर्वनाश अवश्यम्भावी है। अतः हर अवसर पर वे सिंगबोंगा को प्रसन्न करने एवं उनके कोप से बचने का यथेष्ट प्रयत्न करते हैं

5. असुर कोरेयः जनागर (असुर की कथा) — इस मिथ में एक खण्ड प्रलय अथवा एक ज़ाति या वर्ग विशेष के विनाश की कथा है जो सिंगबोंगा के कोपभाजन होने का उदाहरण है।

यह कथा इस प्रकार प्रचलित है कि "हो" प्रदेश में प्राचीनकाल में "असुर" रहा करते थे जो लोहा गलाने का कार्य करते थे। वे कच्चे-हरे पेड़-पौधे को काटकर लोहा की भट्ठियाँ झोंकते थे जिससे पेड़-पौधे नष्ट होने लगे और प्रदूषण से जीव-जन्तु का नाश होने लगा। सभी लोग त्राहि-त्राहि करने लगे। तब सिंगबोंगा ने विचार किया कि इसे रोकना चाहिये। उसने बारी-बारी से लङ् चिड़िया, हंस, सोनादीदी और चन्दाकुई पक्षियों को तथा अन्त में अपने उड़ने वाले घोड़े को असुरों को लोहा गलाने के कार्य को बन्द कराने के लिये दूत बनाकर भेजा। पर वे इन ईश्वरीय दूतों को विरूपित कर उन्हें वापस भेज दिया और लोहा गलाते रहे। इससे सिंगबोंगा बहुत नाराज हुए। अन्ततः वे एक खुजली वाला लड़का (खोरहा सिटिया) का रूप धारण कर असुरों की बस्ती में गये और एक बूढ़ा-बूढ़ी के घर में नौकर का कार्य करने लगे। अपनी इस नौकरी के मध्य

*1 हो दिशुम हो होन को (भाग-७) – श्री धनुर सिंह पूर्ति – पृ. १३-२१

सिंगबोंगा द्वारा कई पारलौकिक कार्यों का प्रदर्शन किया गया। परंतु असुर उन्हें पहचान नहीं सके। अन्ततः असुर उन्हें बलि देने के निमित्त ले आये और उस लड़के (अवतार) ने लोहे की भट्ठीमें प्रविष्ट होकर स्वर्ण प्राप्त करने तथा स्वस्थ होकर बाहर निकल जाने के पारलौकिक कार्य का प्रदर्शन किया। पर भौतिकवादी असुर इस ईश्वरीय लीला को नहीं समझ सके। अन्ततः सभी असुर सोना प्राप्त करने की लालसा से भट्ठी में प्रविष्ट हुए और जलकर खाक हो गये। सिंगबोंगा तत्पश्चात् अन्तर्धान हो गये। *1

यह मिथ "हो" समाज में अत्यन्त पवित्र माना जाता है। मुण्डा समाज में भी यह प्रचलित है और एक धार्मिक कथा के रूप में मान्य है। "मुण्डा लोक कथाएँ" पुस्तक में इस कथा से मिलती-जुलती असुरों के विनाश की कथा "सिंगबोंगा" शीर्षक मिथक के रूप में संकलित है जो एक गीति कथा के रूप में प्रस्तुत की गयी हैं। *2

इस मिथ में ईश्वर की सर्वव्यापकता, सर्वशक्ति सम्पन्नता एवं आसुरी प्रवृत्ति के नाश की परम्परा की पुष्टि होती है। कृष्ण ने जिस प्रकार कंस का एवं कालियानाग का दमन कर लोक की रक्षा की थी, उसी प्रकार सिंगबोंगा ने आसुरी प्रवृत्ति से ग्रस्त असुरों का नाश किया। "खुजली वाला लड़का" जो एक घृणित रोग से ग्रस्त था, ईश्वरीय अवतार बन गया। वह सामाजिक एवं भावनात्मक घृणा का प्रतीक बनकर आया जो घृणा की एवं दम्भ की भट्ठी में सभी असुरों को जलाकर भस्म कर गया जो भौतिकतावादी एवं तामसिक प्रवृत्तियों के प्रतीक थे। पृथ्वी एवं जीवधारियों की रक्षा के लिये एवं पाप का नाश कर पुण्य की प्रतिष्ठा कायम करने के लिये विश्व के हर साहित्य में अवतारवाद की परिकल्पना की गयी है। तामसिक प्रवृत्तियाँ हमेशा-हमेशा सात्त्विक प्रवृत्तियों से पराभूत होती रही हैं। कृष्ण ने गीता में इसी तथ्य को उद्घोषित करते हुए अर्जुन से महाभारत के युद्ध-क्षेत्र में कहा था -

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।। *3

अर्थात् हे भारत (अर्जुन), जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती

*1 मुण्डा लोक कथाएँ - श्री जगदीश त्रिगुणायत - पृ. १२७-१६७
गीता - अध्याय - ४ श्लोक ७, ८
हो दिशुम हो होन को (भाग-७) - श्री धनुर सिंह पूर्ति - पृ. १११-१२

है, तब-तब ही मैं अपने रूप को रचता हूँ अथवा प्रकट होता हूँ।

क्योंकि साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिये तथा दुष्टों का नाशकर धर्म की स्थापना करने के लिये युग-युग में प्रकट होता हूँ।

गीता में कृष्ण की उक्ति "असुर कोरेयः जनागर" में पूर्णतः सत्य होकर उपस्थित होती है। पाप का स्रोत दुष्कर्म है। असुरों के दुष्कृत्य से ही संसार के (असुर-हो प्रदेश के) जीवधारी नष्ट होने लगे थे। अतः विश्व में सृष्टि की रक्षा करने के लिये दुष्टकारी असुरों के नाश करने के लिये कृष्ण की तरह सिंगबोंगा अवतरित हुए। पराशक्ति से युक्त "सिंगबोंगा" एक लौकिक-चाकर (नौकर) के रूप में असुर समाज में रहता है और कृष्ण की तरह ग्वाल-बाल रूप में रहकर ही अनेकों अतिप्राकृतिक कार्य कर दिखाता है। इस प्रकार असुरों के नाश से अपकर्म से पाप-युग का अन्त होता है और सत्कर्मों से परिपूर्ण एक धर्मयुग की पुनर्स्थापना होती है। इस मिथ के बाल देवता ("येरो" कोवा) न केवल वर्तमान में एक सुखद जीवन का प्रादुर्भाव करता है वरन् भावी सम्भावनाओं का भी जनक होता है। इस प्रकार कृष्ण के मिथ का रूपक "असुर कथा" में अपने सभी तत्वों के साथ स्थापित होता है।

आनुष्ठानिक मिथ

6. लोचोमी (उरिः) रेय जगर (लक्ष्मी की कथा) – "गोटो बोंगा" की उत्पत्ति कथा इस मिथ से वर्णित है। इस कथा में यह आभास मिलता है कि हो जाति के लोग गाय-भैंस के लक्ष्मी की तरह मानते हैं और उनकी पूजा विशेष अवसर पर करते हैं। उनका विश्वास है कि गाय-भैंस के निवास स्थान में (गोहाल में) "गोटो बोंगा" निवास करते हैं जो उनके मवेशियों की रक्षा करते हैं।

उपर्युक्त मिथ में यह वर्णित है कि एक बार सिंगबोंगा ने "गोटोबोंगा" को बुलाया और उसे धरती पर पहले वर्ष में एक बार फिर महीना में एक बार तथा फिर सप्ताह में एक बार जाकर रहने का उपदेश दिया और पशुधन का कार्य सौंपा। पशुओं ने उनसे शिकायत की कि मनुष्य उन्हें मारते हैं और गर्मी-वर्षा-जाड़ा हर समय हलों में जोतते हैं। अतः वे मानव-समाज से दूर भागने की बात कहने लगे। पर सिंगबोंगा ने उन्हें बताया कि अब से मनुष्य तीन बार (दिन-रात मिलाकर) खायेंगे और तुम्हें विश्राम देंगे। हल चलाते समय वे खैनी का प्रयोग करेंगे और उस समय भी विश्राम देंगे।

सिंगबोंगा ने यह भी कहा कि मनुष्य द्वारा छड़ी से मारने से पूर्व की तरह उनकी संतानों को जख्म नहीं होगा। सिंगबोंगा ने यह भी प्रावधान किया कि वर्ष में एक बार "हो" लक्ष्मी पूजा करेंगे और सभी मवेशियों को सजा कर उनका सम्मान करेंगे। ऐसा आश्वासन पाकर लक्ष्मी (गोटोबोंगा) रुक गईं और अभी तक उनकी संतानें खेत जोतने का कार्य करती है।

उपर्युक्त मिथ को आनुष्ठानिक मिथ भी कहा जाता है। हो समाज में "गोटोबोंगा" की आराधना मागे पर्व के मध्य की जाती है जिसके लिये विभिन्न प्रकार के अनुष्ठान सम्पन्न होते हैं। इस आराधना के पीछे यह लोक विश्वास है कि "गोटोबोंगा" के प्रसन्न रहने से ही पशुधन स्वस्थ एवं रोगमुक्त रहेंगे। पशुधन की वृद्धि में भी "गोटोबोंगा" सहायक होता है।

7. मागे परब (माघे पर्व) - हो भाषा में मागे का अर्थ होता है - मा-अः गे अर्थात् माँ का ही। इसके पीछे यह सिद्धान्त कार्य करता है कि मागे माँ अर्थात् धरती माँ का पर्व है और साथ ही गो माता का भी पर्व है क्योंकि धरती और गो माता का अन्योन्याश्रय संबंध है। साथ ही यह भी कहा जाता है कि "हो" पितृ-प्रधान परिवार के होने के बावजूद भी "माँ" का महत्त्व (नारी का महत्त्व) इनमें अधिक रहा है[*1] ये देवी (शक्ति) के भी उपासक रहे हैं। इनका देवी मन्दिर प्राकृतिक प्रांगण में द्रुमों का कुंज हुआ करता है जिसे "जहेर" कहा जाता है जहाँ "जहेर एरा" (जहेर की देवी) निवास करती है। "मागे पर्व" के संबंध में यह मिथ प्रचलित है कि "आदिकाल" में एक स्त्री एवं पुरुष थे जो पूर्णतः आदिम जीवन बिता रहे थे। कालक्रमानुसार उन्हें सात पुत्रियाँ हुईं। पर पुत्र के बिना वंश चलाना असम्भव था। जब ये बूढ़े हो गये तो एक साल वृक्ष के नीचे पुत्र की कामना से अपने इष्टदेव की पूजा करने लगे। पाँच दिन पूजा करने के बाद छठे दिन उन्हें वहाँ एक वृद्ध महिला का दर्शन हुआ। महिला स्वयं देवी थीं। उन्होंने उनकी पूजा से संतुष्ट होकर आशीर्वाद दिया कि उस दिन अर्द्धचन्द्रमा पूर्ण हो जायगा उसी दिन उन्हें वांछित फल मिलेगा। पूर्णिमा के दिन उसी साल वृक्ष के नीचे उन्हें एक अबोध बालक घुटनों के बल चलता मिला। वे उस बच्चे को लेकर घर लौटे और वही बालक बड़ा

*1. मागे परब - आदिवासी गणतन्त्र दिवस विशेषांक जनवरी १६७३ - श्री डी. बी. चातर, पृ. १८-२०

होकर उन "सात बहिनों" से समागम कर मानव सृष्टि का विस्तार किया। इसी मध्य वह वृद्धा (देवी) पुनः प्रगट हुई और उस लड़के से, जो युवक हो चुका था, अपनी अर्चना करने का निर्देश दिया। उसने यह भी कहा कि यदि वे उसकी पूजा नहीं करेंगे तो वे रोगग्रस्त हो जायेंगे और उनके वंश का नाश होगा।

तदनुसार वह युवक सपरिवार माघ मास की पूर्णिमा के दिन साल वृक्ष के नीचे "देवी" की पूजा करने लगा। तब से यह पर्व "मागे पर्व" के नाम से प्रचलित हुआ जो अब किसी निर्धारित तिथि को नहीं मनाया जाता है। यह अब सामान्यतः धान कटने के बाद ही मनाया जाता है।*1 इस पर्व के प्रथम दिन "ओते इलि" (धरती को डियंग से पूजा) होता है जिस दिन उपवास किया जाता है। इस अवसर पर घर-घर से "हंड़िया" (डियंग) लेकर लोग "दिउरी" (पुजारी) के घर जाते हैं और धरती माता को अर्पित कर उसकी पूजाकर कृपा प्राप्त करने की कामना करते हैं।

दूसरे दिन मुर्गा की बलि एवं हँड़िया "गोटो बोंगा" को दिया जाता है (अर्पित किया जाता है)। गोटो बोंगा से भी यह प्रार्थना की जाती है कि हे माँ! तुम हमें छोड़ कर मत जाना, तुम्हारे आशीर्वाद से हम जीते हैं, तुम्हारे श्रम का फल हम खाते हैं।

तीसरे दिन "मागे गुरूई" होती है। इस दिन लोग नये-नये बर्तनों में भात और बोरा का दाल बनाकर हँड़िया के साथ अपने पितरों का तर्पण करते हैं। इस दिन दिउरी (पुजारी) अपने चेलों के साथ गाँव से बाहर किसी निश्चित जगह रात बिताता है और "माँ" (देवी) की पूजा आरम्भ करता है।

चौथे दिन "मराँग परब" (बड़ा पर्व) होता है। इस दिन सभी को नया वस्त्र धारण करना पड़ता है और "दिउरी" सरना (जायरा) में जाकर पूजा करता है और मुर्गा की बलि देता है। वहाँ से लौटकर अर्थात् जहेर देवी की उपासना के उपरान्त नाच-गाना एवं खाना-पीना शुरू होता है जो रात भर अनवरत चलता रहता है।

इस प्रकार "देवी" का आविर्भाव, उनकी पूजा एवं उनकी कृपा से स्वस्थ एवं सानन्द जीने की परिकल्पना "मागे परब" शीर्षक मिथ में परिलक्षित होता है।

8. हेरो पर्व की कथा – "हेरो पर्व की कथा" भी एक आनुष्ठानिक मिथ है जिसमें "सृजन" के विभिन्न चरणों की व्याख्या मिल जाती है। मानव के इस

---

*1 "आदिवासी"-२६ अगस्त, १६७१ - श्री बुधराम हेम्ब्रम।

मिट्टी की काया में पाँच तत्त्व का प्रादुर्भाव हुआ और मानव-समाज में नीति-शास्त्र की आवश्यकता का अनुभव कब हुआ - यह मिथ उक्त तथ्यों को उजागर करता है।

इस मिथ के अनुसार - "प्राचीनकाल में चार भाइयों का एक परिवार रहता था। उसके गाँव के एक और छोर पर एक दूसरा परिवार रहता था जो "होरो" नाम से एक पर्व मनाता था। इस पर्व में वह चावल के आटा की रोटी बनाता था और उसी से मनुष्य और घोड़ों का चित्र (भीत्ति चित्र) दीवाल पर बना देते थे। इसी प्रकार एक दिन एक भाई उस घर के पास से जाते समय उस भीत्ति-चित्र को देखा और एक लड़की की अनुकृति बनाकर उस भीत्ति-चित्र पर टाँग दिया। दूसरा भाई जब उस मूर्ति को देखा तो उसपर मिट्टी का लेप चढ़ा दिया। तीसरा भाई उसे मूँगा-मोती से सजा दिया। चौथा भाई जब उस सुन्दर नारी-मूर्ति को देखा तो "सिंगबोंगा" से उसमें प्राण डालने की प्रार्थना की। "सिंगबोंगा" ने उसमें प्राण डाल दिया तो वह एक सुन्दर युवती बन गयी। चौथा भाई उसे घर लाया। जब अन्य भाइयों को मालूम हुआ कि यह नारी उन्हीं की कृति है तो सभी उस पर अपना अधिकार जताने लगे। अन्त में पंचों के निर्णयानुसार वह बड़े भाई की पत्नी बनी। इसके बाद से "हो" लोग भी "हेरो" का त्योहार मनाने लगे।

निष्कर्षतः "हेरो" सृजन का पर्व है। यह पर्व धान बुनने के समय मनाया जाता है। जब धरती गीली होकर बीज को अपने गर्भ में धारण करने हेतु सक्षम हो जाती है, तब "हो" जनजाति के लोग बड़े धूम-धाम से "हेरो" पर्व मनाते और धान-बीज का वपन करते हैं। यह सृजन का पर्व है और सृजन का स्रोत "नारी" का भीत्ति-चित्र एक प्रतीक के रूप में आदिकाल से चला आ रहा है। "हो" बाबा (धान) को धान एँगा (धान माता) भी कहते हैं। धान वपन का कार्य उनके लिये एक सामान्य क्रिया नहीं है वरन् एक याज्ञिक अनुष्ठान है जिसमें वे "सिमसांडी" (मुर्गा) की बलि भी देते हैं।

9. जोमनामा (नया खाना) — यह पर्व अगस्त माह में मनाया जाता है जब गोड़ा धान तैयार हो जाता है। धान से चावल तैयार कर उसे "सिंगबोंगा" को अर्पित किया जाता है। यह भी "लक्ष्मी" माँ की पूजा के रूप में मनाया जाता है।

"हो" लोग इस अवसर पर इस प्रकार गीति-कथा कहकर, गाकर एवं नृत्यकर इसे मनाते हैं-"आओ भई-बहनों, भादो मास जा रहा है और नया धान काटने चलो। घर-आँगन को गोबर से लीप-पोत दो और "लक्ष्मी" माँ का स्वागत करो। आज गाँव का दिउरी पूजा-स्थल पर लाल मुर्गा की बलि देगा। चलो, नया चूड़ा को भेलुवा के

पत्ता पर रखकर अपने पितरों को अर्पित करें। उन्हें नया चावल का हँड़िया अर्पित करें। हे सिंगबोंगा! हमलोगों को इसी प्रकार सुखी रखना।*1

इस गीति-कथा में कृषि कर्म में धार्मिक अनुष्ठान की झलक मिलती है। "जोमनामा" की परम्परा आदिकाल से चली आ रही है जिसे "हो" बूढ़े समारोह के साथ मनाते हैं।

(ख) सामाजिक मिथ — इस वर्ग के अन्तर्गत वैसी कथाएँ आती हैं, जिनके द्वारा सामाजिक संरचना संबंधी तथ्यों की व्याख्या की जाती है। "हो" जनजाति के सामाजिक जीवन का विकास विभिन्न गोत्रों का प्रादुर्भाव, उनके टोटेम, विवाह में "गोनोङ" (दहेज) की प्रथा की उत्पत्ति, प्रेतात्माओं का निवास आदि की झलक उनके मिथों में मिलती है। कतिपय मिथ तत्त्व शास्त्रीय होते हुए भी सामाजिक मिथ के तत्त्वों से परिपूर्ण है। खैनी, हँड़िया, वस्त्र का जन्म, खाट की उत्पत्ति आदि कथाएँ इस वर्ग के मिथ में "हो" समाज में काफी प्रचलित हैं।

1. जति ओन्डो : पइटि हटिङ् (जाति एवं कर्म का बँटवारा) — जाति एवं कर्म का बँटवारा सामाजिक सुव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग आदिकाल से माना जाता रहा है। इस मिथ में उसी व्यवस्था पर प्रकाश पड़ता है। इस मिथ में उसी व्यवस्था पर प्रकाश पड़ता है। इस मिथ के अनुसार - "जब मानवों की जनसंख्या बहुत अधिक हो गयी तो "सिंगबोंगा" ने विचार किया कि अब मनुष्यों के बीच काम का बँटवारा कर देना चाहिये। उसने मनुष्यों को बुलाया और धान, घोड़ा, बकरी, गाय, लाठी, सूता आदि सभी सामानों को इकट्ठा करवाया। एक आदमी डंडा लेकर घोड़े पर सवार हो गया उसे पालन-पोषण करने का आदेश मिला। वह "दिकू" (गैर-आदिवासी) के नाम से जाना गया। एक आदमी धान का बिजड़ा ले आया। वह "महतो" बना और उसका काम व्यापार करना हुआ। एक आदमी केन्द की लाठी पकड़ा और उसे "गोप" (गौड़) माना गया तथा उसका कार्य गोचारण (गोपालन) हुआ। एक व्यक्ति लोहा पकड़कर ले आया, उसे "कमार" या "लोहार" माना गया। सूता पकड़ने वाला "तांती" (पिआंय) हुआ जिसका कर्म वस्त्र बुनना हुआ। बाँस पकड़ने वाला "महली"

---

*1 हो दिशुम हो होन को (भाग-७) - श्री धनुर सिंह पूर्ति - पृ. ६-१०

हुआ जिसका पेशा खाँची-टोकरी आदि बनाना हुआ। कुछ लोग धान का पौधा लेकर आये जो "चासी" (कृषक) बने।

इस प्रकार हो समाज में कर्म के बटँवारे की व्यवस्था "सिंगबोंगा" (ईश्वर) द्वारा की गयी, यह तथ्य उनके लोक विश्वास से जुड़ा हुआ है। अभी भी "हो" समाज में "हो" कृषि का, महतो व्यापार का, तांती वस्त्र बुनने का, कमार लोहा का, महली बाँस का तथा गोप या गौड़ चरवाहा का कार्य करता है।

2. गोनोङ् (दहेज) की कथा – विवाह में गोनोङ् (दहेज) या वधु मूल्य की कथा का एक रोचक मिथ "हो" समाज में प्रचलित है। इस मिथ के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि बहुत पूर्व "हो" सामाज में "गोनोङ्" लेने या देने की प्रथा नहीं थी। उसका प्रादुर्भाव परवर्ती काल में हुआ है। "गोनोङ्" की उत्पत्ति का मिथ संक्षेप में निम्न प्रकार है –

पुराने जमाने में बिना मुँह को ढँके जम्हाई लेना हो जनजाति में अशुभ लक्षण माना जाता था। जो कोई बिना मुँह ढँके जम्हाई लेता, उसे उसके भाग्य के भरोसे बाघ के माँद के दरवाजे पर छोड़ दिया जाता था। एक बार एक मुण्डा (गाँव का प्रधान) की लड़की ने ऐसी गलती की तो उसे बाघ के माँद के सामने लाकर रखा गया। यह कार्य एक चरवाहा छिपकर देख रहा था। उसने अपने तीर के निशाने से उस माँद में रहने वाले बाघ को मार दिया और उस युवती को बचा लिया और उसे अपने घर ले जाकर अपनी पत्नी बना लिया।

कुछ दिनों के बाद एक तांती, जो मुण्डा के गाँव का निवासी था, कपड़ा बेचने के क्रम में उस लड़की को पहचान लिया और उस लड़के से मुण्डा के कोपभाजन बनने से बचने का निर्देश दिया। मुण्डा के कोप से बचने के लिये उस चरवाहा ने तांती से उस लड़की के बदले मुण्डा को (लड़की के पिता को) तीन गायें तथा एक भैंस देने का संवाद भिजवाया। मुण्डा ने इसे स्वीकार कर शादी के संबंध में अपनी सहमति दे दी।

तभी से "जम्हाई" लेने के संबंध में पूर्व की यह अमानवीय सजा समाप्त कर दी गयी और कन्या के लिये "गोनोङ्" (दहेज) लेने की प्रथा चल पड़ी।*1

उपर्युक्त कथा से यह ध्वनित होता है कि "हो" समाज में पूर्व में अन्तर्जातीय या विजातीय विवाह अथवा समाज की रीति-नीति के बाहर वैवाहिक संबंधों को मान्यता

---

*1 द जनरल ऑफ बिहार एण्ड रिसर्च सोसाईटी - १९२२ श्री. वी. सुकुमार हालदार, वाल्यूम-७-भाग-२ पृ. १२७-१२९

दिलाने के लिये उत्कोच स्वरूप कुछ चल-सम्पत्ति पशुधन आदि देना पड़ता था। उक्त कथा का नायक "चरवाहा" निश्चय ही गोप या गौड़ जाति का होगा और मुण्डा की पुत्री "हो" जाति की। आगे चलकर "गोनोङ्" की यह प्रथा रूढ़ि हो गयी और सामान्य रूप में वैवाहिक रीति के लिये एक सामाजिक मान्यता प्राप्त विधान बन गयी। अब "हो" समाज में गोनोङ् हर लड़की के लिये लड़के वाले को देना पड़ता है।

3. नरभक्षी की कथा – "हो" समाज में आत्मा की अमरता एवं "पुनर्जन्म" का लोक विश्वास बहुत प्रबल है। "हो" जनजाति के लोग विश्वास करते हैं कि किसी व्यक्ति की यदि मृत्यु हो जांय तो उसका पुनर्जन्म शीघ्र किसी-न-किसी रूप में होगा। साथ ही शरीर का कोई अंग या अंश मिट्टी में गाड़ दिया जाय तो वह उस व्यक्ति के पुनर्जन्म (शरीर धारण) में सहायक होता है। मरने के बाद आत्मा भटकती रहती है और पुनर्जन्म के लिये माध्यम खोजती है। "हो" परिवार में एक लड़के कर नामकरण उसके दादा (ताता) के नाम पर रखा जाता है। इसके पीछे यही मान्यता है कि दादा की आत्मा जरुर अपने पौत्र में प्रविष्ट होकर जन्म लेती है। साथ ही इस मिथ से यह भी परिलक्षित होता है कि पूर्व में मानव मनुष्य-भक्षी भी होता था।

उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि "मनुष्यभक्षी की कथा" शीर्षक मिथ से होती है। इस कथा में एक परिवार के सात भाई और एक बहन की कहानी है। सातों भाई की एकलौती बहन एक बार अपने ससुराल से पिता के घर आई तो सब्जी काटते समय उसकी उँगली कट गयी और बहुत सारा खून सब्जी में मिल गया। जब सब्जी बनकर तैयार हुई तो भाइयों को काफी सवादिष्ट लगी और इस स्वाद का कारण जब उन्हें अपनी बहन का खून सब्जी में मिल जाना ज्ञात हुआ तो उन लोगों ने यह विचार किया कि जब इसका थोड़ा खून स्वादिष्ट है तो इसका मांस अवश्य और अधिक स्वादिष्ट होगा। ऐसा विचार करके उन लोगों ने उसे मार कर खा जाने का निर्णय लिया। वे उसे बहाना बनाकर सघन वन में ले गये। वहाँ उसे पेड़ पर चढ़ा दिया। सभी छः भाई बारी-बारी से उसपर तीर चलाए, पर वह बचती गयी। अन्त में अनिच्छित छोटा (सातवाँ) भाई को डरा धमका कर उससे तीर चलाने को कहा गया। वह बहन से बहुत प्यार करता था और उसे मारना नहीं चाहता था। पर सभी भाइयों के प्रताड़ना से उसे तीर चलाना पड़ा और वह इसके तीर से उसकी बहन मारी गयी। उसके बाद छोटे को

छोड़कर अन्य छः भाइयों ने उसका मांस खाया, छोटा भाई उसके मांस-हड्डी को जमीन में गाड़ दिया। उससेएक "करात" पेड़ का जन्म हुआ जिसमें एक सुन्दर फल कुछ समय बाद लग गया। इस बीच उस लड़की का पति अपनी पत्नी की खोज में ससुराल जाते समय उस "करात" पेड़ पर लगे फल को देखा और उसे तोड़ना चाहा तो उसे एक अदृश्य आवाज सुनायी पड़ी - "उसे फल तभी मिलेगा जब उसका छोटा साला "कुन्द्रा" इस वृक्ष को काट देगा।" अन्ततः उसका छोटा साला आकर वृक्ष काटा तो उसके जड़ के खोखले से उसकी पत्नी (कुन्द्रा की बहन) प्रकट हो गयी। उसने अपने पिता एवं पति से सारी घटना सुना दी और अपने ससुराल चली गयी।[*1]

इस "नरभक्षी" मिथ में मानव-भक्षी होने का सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक कारणों की ओर संकेत किया गया है। साथ ही, यह तथ्य उजागर होता है कि जीव मरता नहीं अथवा आत्मा अमर है, केवल शरीर का रूपांतरण हो जाता है (मृत्यु पश्चात्)।

4. वृक्ष एवं सबई घास का जन्म – इसमें यह तथ्य प्रतिपादित है कि मानव शरीर के विभिन्न अंगों से किस प्रकार वृक्ष एवं सबई घास का जन्म हुआ। इसमें यह भी निरूपित है कि मनुष्य को जब सामाजिक (या पारिवारिक) यातना अथवा मानसिक क्लेश का सामना करना पड़ता है और जब वह उसके लिये असह्य हो जाता है तब वह अपनी आदिम संगिनी प्रकृति की गोद में अपने को समर्पित कर देता है। उक्त मिथ में एक ऐसे युवक की करूण कथा कही गयी है जो अपनी भाभियों के अत्याचार से उत्पीड़ित हो एक तालाब में जाकर नगे एरा (वरूण देव) की प्रार्थना में एक गीत गाकर जल में समाधि ले लेता है। परंतु उसके भाई उसे खोजते-खोजते वहाँ पहुँच जाते हैं ओर अपने भाई को जल से निकालने के प्रयास में केवल उसकी कुछ उँगलियाँ एवं केश की पाते हैं। वे उन्हें यादगार के रूप में धरती में गाड़ देते हैं। उँगलियाँ पेड़ बनकर और केश सबई घास बनकर पृथ्वी पर छा जाते हैं।[*2]

---

*1 द जनरल ऑफ बिहार एण्ड रिसर्च सोसाईटी - १६१८ श्री. वी. सुकुमार हालदार, वाल्यूम-७-भाग-२ पृ. ३३७-६६८

*2 द जनरल ऑफ बिहार एण्ड रिसर्च सोसाईटी - १६१५ श्री. वी. सुकुमार हालदार, वाल्यूम-७-भाग-२ पृ. २६०-२६१

5. डोंड़ साँप की कथा – यह रूप-परिवर्तन पर आधारित एक मिथ है। इस कथा का सारांश इस प्रकार है - "एक लड़का गलती से अपनी बहन द्वारा लाये गये सर्प के अण्डा को मोरनी का अण्डा समझकर खा गया। कुछ दिनों में उसे ऐसा अनुभव होने लगा कि वह सर्प के रूप में परिणत हो रहा है। वह अपनी बहन से एक टोकरी में अपने को बन्द कर उसे सुरक्षित स्थान में ले जाने को कहा। उसकी बहन ने वैसा ही किया। जब वह पूरी तर सर्प का शरीर धारण कर लिया तो उसके अनुरोध पर उसकी बहन उसे तालाब में छोड़ दिया। अब कुण्ड (तालाब) में "पानी का साँप" (डोंड़ सर्प) बनकर रहने लगा। इस प्रकार वह लड़का प्रथम जल-सर्प अथवा डोंड़ साँप बना।[*1]

6. कुम्हार के लड़के की कथा – "कुम्हार के लड़के की कथा" में अन्य जीवधारी के पेट में मानव की जीवित उत्पत्ति की कथा जीव की अनवरता के तथ्य को प्रतिपादित करता है। "कुम्हार का लड़का" भाग्यवश एक राजपरिवार का दामाद बन जाता है। परंतु दुर्भाग्यवश एक नाई युवक के द्वारा मारा जात है। उसका मृत शरीर तालाब में फेंक दिया जाता है और उसके अंगों को एक मछली खा लेती है और इस प्रकार वह पुनर्जन्म हेतु उस मछली के गर्भ में बढ़ने लगता है। जब एक चरवाहा उस मछली को जाल में फँसा कर घर ले जाता है तब मछली के पेट से वह बालक (कुम्हार युवक का रूपान्तरित शरीर) बारह निकलता है। अन्ततः वह राजमहल में जाकर अपने पूर्व जीवन की बातें बता देता है और नाई राजकुमारी का नकली पति साबित होता है। नाई को मौत की सजा होती है और कुम्हार का लड़का इस जन्म में भी राजकुमारी का पति बन जाता है।[*2]

इस मिथक में "हो" समाज की यह धारणा कि आत्मा अमर है और वह किसी-न-किसी रूप में पुनर्जन्म लेती है इसकी पुष्टि होती है। इस संदर्भ में पौराणिक मिथों के अनुसार हनुमान के पसीने से गर्भवती हुई मत्स्य कन्या के गर्भ से 'मकरध्वज"

---

*1 द जनरल ऑफ बिहार एण्ड रिसर्च सोसाईटी - १६१५ श्री. वी. सुकुमार हालदार, वाल्यूम-७-भाग-२ पृ. २६१-२६२

*2 द जनरल ऑफ बिहार एण्ड रिसर्च सोसाईटी - १६३२ श्री. वी. सुकुमार हालदार, वाल्यूम-७-भाग-२ पृ. १२७-१२६

के जन्म की कथा सर्वविदित है।

7. गोत्र की उत्पत्ति – गोत्र का जन्म एवं गोत्र-प्रतीक अन्य आदिवासी समाज की तरह "हो" समाज में भी बहुत महत्त्व रखता है। "हो" समाज में गोत्र-प्रतीक को मारना या खाना वर्जित है। उसी तरह सगोत्री विवाह भी वर्जित है। गोत्र प्रतीक की पवित्रता के मनोवैज्ञानिक इतिहास को समझने के लिये फ्रायड ने "ओडीयस की कथा" का उल्लेख किया है। उसके अनुसार - "आदिम मनुष्य पहले कबीले में रहता था। ईर्ष्यालु पिता अपने तरूण पुत्रों को भगा दिया करता था और सभी स्त्रियों को अपने अधीन रखता था। सभी भगाये हुए भाइयों ने मिलकर पिता से प्रतिशोध लेने का निर्णय किया। वे उसे मारकर खा गये।"[*1]

इस प्रकार गोत्र-प्रतीक (टोटम) का भोज इस प्रथम अपराध का समारोह है। जिससे नैतिक बंधनों का आरम्भ होता है। इस गोत्र प्रतीकवाद से दो निषेधों का जन्म होता है। वे हैं - गोत्र प्रतीक की पवित्रता और असगोत्री विवाह। प्रस्तुत हैं कतिपय गोत्र उत्पत्ति की कथायें -

1. देवगमगोत्र – "हो" समाज में भी गोत्र के प्रादुर्भाव पर अनेक मिथ कथा रूप में प्रचलित हैं। "हो" जनजाति के लोग प्राचीन काल से ही शिकारी थे और जंगली जानवरों का शिकार कर तथा कन्द-मूल खाकर जीवनयापन करते थे। उनका सम्पूर्ण जीवन वनों में ही बितता रहता था।

वनों में आखेट करते-करते वे एक बार जा रहे थे कि एक गर्भवती को प्रसव का दर्द हुआ और उसने एक बच्चे को जन्म दिया। जब बच्चा का जन्म हो रहा था तो वहीं एक देवगम पक्षी बोल रहा था। उसकी बोली थी - "हड् देवगम, हड् देवगम।" "हो" लोगों ने इस पक्षी को और इसकी आवाज को शुभ माना और उस बच्चे का गोत्र "देवगम" रखा गया। इस गोत्र द्वारा "देवगम" पक्षी का बहुत मान-आदर किया जाता है और जब वह इस पक्षी को देख लेते हैं तो उसे खाना दिया जाता है।[*2]

2. टुबिड गोत्र – टुबिड या तुबिद का अर्थ होता है "चूहे का बिल"। जब "हो" लोग आदिकाल में कोल्हान की ओर जा रहे थे तो रास्ते में एक "हो" स्त्री ने

---

*1 टोटम एण्ड टेबू - सिगमन फ्रायड

*12ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री बी.डी.एन. मजुमदार - पृ. २०६

नवजात शिशु को जन्म दिया। "हो" समाज में यह प्रथा है कि जन्म होने पर "नाल एवं पुरइन" को घड़े में रखकर गाड़ दिया जायगा। उस समय वहाँ मिट्टी का घड़ा उपलब्ध नहीं था। अतः "नाल पुरइन" को चूहे के बिल में ही गाड़ दिया गया। इस घटना के बाद उस बालक का गोत्र "टुबिड" या तुबिद रखा गया।*1

3. हसदा गोत्र – "हसा" का अर्थ मिट्टी और "दा" का अर्थ पानी होता है। "हो" जनजाति का एक वर्ग विशेष जब कोल्हान की ओर प्रस्थान कर रहा था तो उन लोगों ने निश्चय किया कि जहाँ उर्वर मिट्टी और पानी उपलब्ध होगा और पानी का स्वाद अच्छा लगेगा, वहीं बस जायेंगे। वे जगह-जगह पर मिट्टी और पानी की जाँच करते गये और अन्त में वे एक ऐसे स्थान पर पहुँचे, जहाँ की मिट्टी और पानी उन्हें अच्छा लगा। इस दल के वंशज ही बाद में "हसदा" गोत्र से प्रसिद्ध हुए।*2

4. कलुन्डिया गोत्र – "हँड़िया" (डियङ्) बनाने की विधि "हो" लोगों को सिंगबोंगा द्वारा बतायी गयी थी। यही कारण है कि अपने उद्भव काल से ही वे "हँड़िया" का व्यवहार करते आ रहे हैं।

जब वे कोल्हान की ओर जा रहे थे तो उनका "हँड़िया" का भण्डार समाप्त हो गया और वन में एक स्थान पर ठहर कर वे "हँड़िया" बनाने लगे। जब हँड़िया का चावल गल गया और उसमें खमीर आ गया तो उसे चलाने के लिये कलछुल की जरूरत पड़ी। परंतु कलछुल उपलब्ध नहीं होने के कारण वे बहुत निराश हुए। "का" का अर्थ नहीं और "लुण्डी" का अर्थ कलछुज होता है। उनके पास कलछुल नहीं था। अतः उनके वंशज "कालुण्डिया" गोत्र के कहे जाने लगे।*3

5. लुगुन गोत्र – एक बार "हो" जनजाति के लोग शिकार करते-करते उत्तर पश्चिम की ओर बढ़ रहे थे तो उनका एक लड़का तसर का कोआ लेने के लिये एक पेड़ पर चढ़ा और खो गया। दल के शेष लोग जंगल से बाहर चले गये। वह रात

ए ट्राइब इन ट्रांजिशन – श्री बी.डी.एन. मजुमदार – पृ. २०६

ए ट्राइब इन ट्रांजिशन – श्री बी.डी.एन. मजुमदार – पृ. २०५-२०६

ए ट्राइब इन ट्रांजिशन – श्री बी.डी.एन. मजुमदार – पृ. २०५

भर वहीं पेड़ की ऊँची डाल पर रहा। दूसरे दिन शिकारियों का दूसरा दल जंगल में प्रविष्ट हुआ और उस लड़के को खोज निकाला। वे लोग उसे अपने घर ले गये। जिस परिवार ने उसे रखा, वे सिदू गोत्र के थे। जब "हेरो" का त्यौहार आया तो इस अज्ञात गोत्रज लड़के को गोत्र के संबंध में जानने की समस्या उठ खड़ी हुई। अन्त में यह निर्णय हुआ कि इसके पास "लुगुन" था, अतः उसका गोत्र लुगुन रखा गया। वह लुगुन गोत्र का प्रणेता बना।[*4]

6. पूर्ति गोत्र – "पूर्ति" गोत्र में सात उप-गोत्र आते हैं। श्री. जे. डीनी, एस. जे. पूर्ति गोत्र के निम्नलिखित उप-गोत्र को संकलित किया है जो संख्या में आठ हैं–

१. होलोना पूर्ति
२. हुनि पूर्ति
३. चउलोय पूर्ति
४. पुचुः पूर्ति
५. सादोम जोमर (भेंगरा) पूर्ति
६. सोसो पूर्ति
७. दुन्दु (डुन्डु) पूर्ति
८. सुकुरी लुतुर पूर्ति[*2]

पूर्ति गोत्र की कथा में यह तथ्य वर्णित है कि एक माता-पिता के सात लड़के जब घने जंगलों के मार्ग से जा रहे थे तो सभी अपने भोजन की तलाश में विभिन्न दिशाओं में चले गये। सबसे छोटा लड़का अपने माता-पिता के साथ रह गया। जब बहुत समय बाद छः भाई मिले तो वे सभी अलग-अलग गोत्र नाम स्वीकार कर लिये थें सबसे छोटा का गोत्र पूर्ति ही रह गया। इन सभी भाइयों के वंशज पूर्ति गोत्र से ही जाने जाते हैं और उनके बीच वैवाहिक संबंध वर्जित है।[*3]

ए ट्राइब इन ट्रांजिशन – श्री बी.डी.एन. मजुमदार – पृ. २०५
हो ग्रामर एण्ड वोकाब्यूलरी – जे. डीनी, एस. जे. – पृ. ११७
ए ट्राइब इन ट्रांजिशन – श्री बी.डी.एन. मजुमदार – पृ. २०६-२०७

7. बरई मुण्डा गोत्र – "हो" जाति में यह उन लोगों का गोत्र है जो गाँव के प्रधान हुए (मुण्डा हुए)। इनके सभी वंशज बरई गोत्र से जाने जाते हैं।

जहाँ से "बरई" मुण्डा आये उस जगह का नाम "हो चाउली" है। यह स्थान जोड़ापोखर के पश्चिम में अवस्थित है। यह सामान्य अवधारणा है कि सभी "हो" उत्तर पश्चिम से ही आये।*1

8. मेलगांडी और काइका गोत्र – ये दोनों गोत्र एक ही पूर्वज से निकले बताये जाते हैं। उनके बीच वैवाहिक संबंध वर्जित है। "मेलगांडी" का अर्थ पीपल का पेड़ होता है और "काइका" का अर्थ भी पेड़ होता है।

एक बार यात्रा के मध्य एक माँ ने दो बच्चों को जन्म दिया। एक का जन्म पीपल के पेड़ के नीचे हुआ और दूसरे का काइका पेड़ के नीचे। इस प्रकार पहले का गोत्र "मेलगांडी" तथा दूसरे का "काइका" पड़ा।*2

9. कुदादा गोत्र – कुदादा का अर्थ "जामुन का रस" होता है। यह कथा प्रचलित है कि इस गोत्र के पूर्वज जब कोल्हान की ओर जा रहे थे तो उन्हें जोरो की प्यास लगी; परन्तु आस-पास के गाँव के सभी बाँध और तालाब सूख गये थे और कहीं भी पीने का पानी उपलब्ध नहीं था। उन्होंने अपनी प्राण-रक्षा के लिये जामुन के रस का पान कर प्यास बुझाये। इस प्रकार जामुन का रस उनका प्राण-रक्षक होने के कारण उनका गोत्र-प्रतीक बन गया और उनके वंशज "कुदादा" गोत्र से जाने गये।*3

10. जामुदा गोत्र – जामुदा, होनहागा और खांडोसेम - सभी जामुदा गोत्र के उप-गोत्र हैं और इनके बीच वैवाहिक रिस्ता वर्जित है। "जामुदा" का अर्थ झरना होता है। "जामुदा" गोत्र के उद्भव की कथा इस प्रकार है - एक "हो" स्त्री ने तीन बच्चों को जन्म दिया। उस स्त्री को जोरों की प्यास लगी और उसे निकट में ही एक

---

*1 ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री बी.डी.एन. मजुमदार - पृ. २०७

*2 ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री बी.डी.एन. मजुमदार - पृ. २०७

*3 ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री बी.डी.एन. मजुमदार - पृ. २०७

झरना मिला। उस झरने के मीठे जल से उसकी प्यास बुझी और उस झरना के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने हेतु उसने अपने प्रथम पुत्र का गोत्र झरना के नाम पर "जामुदा" रखा दिया और उसके वंशज "जामुदा" कहलाये।*1

11. समद (सामड) गोत्र – एक बार "हो" जनजाति का एक दल शिकार के लिये कोल्हान क्षेत्र में घूम रहा था तो उसने अस्थायी निवास के रूप में एक स्थल चुना और झोपड़ी बनाया और शिकारी काफी थक गये और कुछ को जोरों की भूख लग गयी। अन्त में एक हिरण का शिकार हुआ और सभी शिकारी उसके बँटवारा के लिये एकत्रित हुए। चूँकि शिकारियों की संख्या काफी थी, अतः एक व्यक्ति ने कुल्हाड़ी ली और उस हिरण के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। वह शिकारर सभी के बीच बराबर-बराबर बाँटा गया। "टुकड़े-टुकड़े" काटने को "हो" में "समड" कहते हैं। अतः जिसने हिरण को टुकड़े-टुकड़े किया उसका गोत्र "समड" हो गया और उसके वंशज "समड" कहलाये।*2

12. चर्ड़स और चराबयड़स गोत्र – प्राचीन काल में हो जनजाति के कुछ सदस्य जाड़े के दिनों में शिकार के लिये बाहर निकले। परन्तु वर्षा होने के कारण वे एक नदी के दोनों किनारों पर रात बिताने के लिये ठहर गये। जो नदी के दाहिने किनार पर थे, वे ठंड से अपने को बचाने के लिये अग्नि प्रज्वलित करने में सफल हो गये जबकि उनके अन्य साथी जो नदी के बायें भाग में थे, ठंड से काँप रहे थे तब उन लोगों ने अपने साथियों से आग की माँग की और अपने को गर्म किया। ठंड से काँपने की इस क्रिया को "चरड" या चेराड कहा जाता है। अतः जो ठंड से काँप रहे थे वे "चरडस" गोत्र के कहलाये और जिस दल ने उन्हें अग्नि प्रदान किया, वे "चराबयड़स" गोत्र के हुए। दोनों में शादी-ब्याह वर्जित है।*3

"हो" गोत्र संबंधी मिथों की समीक्षा से स्पष्ट होता है कि उनके गोत्र-नाम एवं गोत्र-प्रतिक मुख्यतः प्राकृतिक वस्तुएँ हैं या प्रकृति के विभिन्न कार्यकलापों पर आधारित

---

*1 ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री बी.डी.एन. मजुमदार - पृ. २०७

*2 ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री बी.डी.एन. मजुमदार - पृ. २०८

*3 ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री बी.डी.एन. मजुमदार - पृ. २०८

हैं। श्री जे. डीनी ने यह विचार व्यक्त किया है कि मूलतः "हो" जनजाति के गोत्र एवं गोत्र-प्रतीक पहले बहुत कम थे। परंतु अब बढ़कर उनकी संख्या १२४ के लगभग हो गयी है। "हो" जनजाति का गोत्र-नाम उनके वास स्थान से भी संबंधित है या गोत्र-विशेष के नाम पर ही संबंधित ग्राम का नाम पड़ा। उनके अनुसार "हो" जनजाति के लोग अपने मूलस्थान एवं मुख्य गोत्र से अलग होकर बंदगाँव की टेबो घाटी (जो कोल्हान के उत्तर-पश्चिम में अवस्थित है) की ओर से कोल्हान क्षेत्र में आये, जैसा कि विभिन्न मिथों में वर्णित है। "हो" जनजाति की एक शाखा "मुण्डा" दूसरा महली जातियों में अभी भी गोत्र की संख्या बहुत कम है।*1

13. एक लघु हो लोक कथा (खैनी का जन्म) – इस कथा में मनुष्य के सोने, काम करने एवं विश्राम करने की परम्परा की कथा सन्निहित है। प्रारम्भ में मनुष्य निरन्तर काम करता था एवं किसी कार्य का समय निर्धारित नहीं था। इस मिथ के अनुसार जब सिंगबोंगा धरती, पेड़-पौधा, मनुष्य, पशु-पक्षी आदि का निर्माण कर दिया तो उसने काम का बँटवारा संबंधी संदेश देने के लिये एक्र गाय को नियुक्त किया। उन्होंने गाय को यह संदेश सुनाने को कहा कि मनुष्य एक बार खायेंगे और दो बार सोयेंगे परंतु गाय ने इसके विपरीत दो बार खाने और एक बार सोने का संदेश सुनाया। इस पर सिंगबोंगा ने उससे कहा कि "दो बार खाने की बात तुमने कही है, अतः मानव के पालन-पोषण की जिम्मेवारी तुम्हारी होगी। तुम्हें मनुष्य को कृषि कार्य में मदद करना होगा।" इसके बाद गाय-बैल को हल में जोता जाने लगा। उन्हें दम लेने की भी फुरसत नहीं मिलती थी। इसकी शिकायत सुनकर सिंगबोंगा ने मानव को "खैनी" खाने के लिये दिया। अब हल जोतते समय मनुष्य खैनी बीच-बीच में खाने लगे और इस बीच बैलों को भी आराम मिलने लगा। उसी समय से "हो" लोगों में तम्बाकू खाने एवं पीने की आदत पड़ गयी।*2

हो मिथों की सामान्य विशेषताएँ – पूर्व वर्णित मिथों में निम्नलिखित संरचनात्मक विशेषताएँ उपलब्ध हैं –

---

*1 हो ग्रामर एण्ड वोकाव्यूलरी - जे. डीनी, एस. जे. - पृ. ११८

*2 "आदिवासी" - १६ अगस्त, १६७१ - शंकर लाल गगराई, पृ. ६

(क) उपर्युक्त मिथों में "धरती का निर्माण", "मानव की सृजन कथा" एवं इस प्रकार की अन्य कथाओं में शून्य के पश्चात् सत्ता के निर्माण की कथा सन्निहित है। इनमें एक अंग से सम्पूर्णता के विकास की कथा भी परिलक्षित होती है। मानव के एक अंग से अथवा अस्थि अवशेष से सम्पूर्ण मानव शरीर की पुनर्रचना की कथाएँ इन मिथों की विशेषता है। "हो" समाज में व्याप्त अस्तित्ववाद एवं पुनर्जन्म सिद्धान्त एवं दर्शन का यह परिचायक है।

(ख) इन मिथों में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भौतिक आदि अव्यवस्थाओं को मिटाकर सुव्यवस्था लाने की घटना "असुर की कथा" में स्वतः स्फुटित हो पायी है। असुरों की आसुरी प्रवृत्ति एवं भौतिकवाद को मिटाकर "सिंगबोंगा" ने प्रकृति एव समाज को स्वच्छ, निर्द्वन्द्वएवं सुव्यवस्थित कर दिया। "सेंगेलगमा' (अग्निवर्षा) शीर्षक मिथ में भी यही तथ्य निरूपित हुआ है।

(ग) "सेंगेलगमा" में एक वास्तविक घटना की सर्वकालिकता को अभिव्यक्त किया गया है। पौराणिक घटना "जल प्रलय" का ही यह दूसरा रूप है जिसमें विनाश के बाद सृजन, सृजन के बाद विनाश की सर्वकालिकता सिद्ध होती है। "असुर कथा" में तामसिक एवं सात्विक प्रवृत्तियों का संघर्ष सर्वयुगीन है। इस प्रकार हो मिथों में एक काल विशेष की घटना सर्वकालिक प्रभाव से ओतप्रोत है।

(घ) "हो" मिथों में, चाहे वे तत्त्व-शास्त्रीय हों अथवा समाज-शास्त्रीय, अतिप्राकृति पात्रों एवं घटनाओं का बाहुल्य है। "असुर कथा" में खुजली वाला लड़का (नौकर) देखने में अति साधारण एवं घृणित पात्र है, परंतु उसके कर्म प्राकृतिक शक्यिों से ऊपर हैं। वह आग की भट्ठी में जलता नहीं, वरन् स्वस्थ एवं सुन्दर होकर जीवित निकल जाता है। उसके बाल-रूप में असाधारण कार्यों का प्रत्यारोपण हुआ है।

(ङ) "हो" मिथों का सामाजिक महत्त्व – "हो" जनजाति के मिथ एक ओर उनके सामाजिक जीवन के आदि रूप को प्रस्तुत करते हैं, तो दूसरी ओर मर्यादित समाज व्यवस्था, सामाजिक जीवन में नैतिक मूल्यों का महत्त्व, सामाजिक जीवन के नियमन में पराशक्ति (सिंगबोंगा) के अदृश्य कार्यकलाप, समाज के पर्व-त्योहार, शादी-विवाह आदि की सुव्यवस्थित परिकल्पना एवं उनके विकास का निरूपण प्रस्तुत करते हैं।

(च) मिथकों में वर्णित "टोटम" उनके सामाजिक जीवन का अंग बन गये हैं। अतिभैतिकवादिता अथवा यान्त्रिक जीवन समाज के लिये घातक सिद्ध होता है और उसके निराकरण के लिये अथवा उसके संतुलन को बनाये रखने के लिये प्राकृतिक एवं

अतिप्राकृतिक शक्तियाँ कार्यशील हो जाती है। मिथकों में तत्कालीन तथ्यों एवं घटनाओं का आधुनिक युग के संदर्भ में विश्लेषण करने पर वे सर्वकालिक होकर वंतमान काल में भी अपने महत्त्व को प्रतिपादित करते है। एक ओर जहाँ मिथ का जन्म समाज में होता है, वहीं दूसरी ओर वे मिथ, उनके पात्र, घटनाएँ आदि समाज का नियमन, नियंत्रण एवं परिचालन करते हैं। जो "सिंगबोंगा" (एवं अन्य बोंगा) आदिकाल में प्राकृतिक शक्तियों के प्रतीक थे, वे आज भी "हो" समाज में यथावत् प्रभावी हैं और उनका मानवीकरण हो गया है। उनके रूप-रंग, आचार-व्यवहार, निवास-स्थान आदि सुनिश्चित कर दिये गये हैं और इस प्रकार उनका "हो" समाज मे एक विशेष प्रकार का अस्तित्त्व बन गया है।

(छ) "हो" समाज में "असुर कथा" और मुण्डा समाज में "सोसो बोंगा"-दोनों मिथक आज के युग में "सत्यनारायणव्रत कथा" की तरह पवित्र एवं लोकप्रिय है। इस घटना का प्रभाव आज भी इतना है कि कोई भी असुर अब लोहा गलाने का कार्य नहीं करता। आज भी "हो" समाज पशुधन की रक्षा एवं विकास के लिये "गोटो बोंगा" की पूजा करता है। "उर्रि:" (गाय) को वे लक्ष्मी की तरह मानते हैं। "हो" समाज के सभी पर्व, पूजा, अनुष्ठान आदि किसी-न-किसी मिथ से जुड़े हुए हैं। समाज में होने वाली कोई दुर्घटना अथवा क्षति को "सिंगबोंगा" या किसी अन्य बोंगा का कोप माना जाता है। स्पष्टतः "हो" मिथों का ही समाज से अन्योन्याश्रय संबंध है।

तृतीय अध्याय

"हो" लोक–कथा : आख्यान

1. आख्यान की सामान्य अवधारणा – आख्यान लोक साहित्य की वह कृति है जिसका आधार इतिहास है। इसमें ऐतिहासिक तथ्यों को कल्पना का रंग देकर रूपायित किया जाता है। अतः ऐतिहासिक तथ्य कल्पना के रंग में रंगकर विकृत होकर आख्यान के रूप में उद्‌भूत होते हैं।

ऐतिहासिक तथ्य और ऐतिहासिक व्यक्ति से सदा यही अभिप्राय नहीं माना जा सकता कि किसी समय में ये यथार्थ में हुए ही थे। मानवीय भाव-विकास में बहुधा ऐसा होता है कि जो व्यक्ति या घटनाएँ बिल्कुल कल्पना की होती हैं, वे समय पाकर ऐतिहासिक मान ली जाती हैं।[*1]

चैम्बर्स एनसाइक्लोपीडिया के अनुसार-"ऐतिहासिक लोककथा अथवा उपाख्यान नाम से एक ओर अंशतः पौराणिक कथाओं का बोध होता है और दूसरी ओर वह ऐतिहासिक वीरों की ओर संकेत करता है, जिनके शौर्य परिपूर्ण कार्यों से जनता की कल्पना सदा प्रभावित होती रही है।"

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार - "लीजेण्ड" (आख्यान) लोककथाओं का वह प्रकार है जिसके कथानक में तथ्य, घटना तथा परम्परा - तीनों का समन्वय पाया जाता हैं।[*2]

"द स्टैण्डर्ड डिक्शनरी ऑफ फोकलोर" के अनुसार - "प्रारंभ में उपाख्यान (लीजेण्ड) किसी संत अथवा बलिदानी की जीवनी का विशेष कथांश माना जाता था; जिसे धार्मिक कृत्यों के सम्पादन-काल अथवा प्रीति-भोज के सुखद क्षणों में पढ़ते थे। अब इस शब्द का प्रयोग किसी प्राचीन महापुरूष, स्थान अथवा घटना के संबद्ध कथा के लिये किया जाता है, जिसमें कल्पित एवं परम्परागत तत्त्वों का सन्निवेश रहता है।"[*3]

डॉ. दिनेश्वर प्रसाद के अनुसार - "आख्यान लोककथा का एक भेद है और

---

*1 ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन - डॉ. सत्येन्द्र, पृ. २४

*2 लोक साहित्य की भूमिका - श्री कृष्णदेव उपाध्याय, पृ. २८१

*3 द स्टण्डर्ड डिकसनरी ऑफ फोकलोर - खण्ड २, पृ. ६१२

सत्य पर आधारित रहता है। आख्यान का आधार लोक साहित्य के अध्येताओं की दृष्टि में भी सत्य होता है। इसे विकृत इतिहास कहना इसी बात का प्रमाण है और यह इंगित करता है कि इसके मूल में कोई ऐतिहासिक घटना रहती है, जो कालान्तर में अतिरंजित हो जाती है।"*1

पाणिनि के अनुसार – "इतिहास आख्यायिका है और पुराण कथा है।"*2

अमर सिंह ने अपने "अमरकोष" में आख्यायिका को ऐतिहासिक सत्य एवं कथा को कल्पना प्रसूत कहा है।

विश्वनाथ ने अपने "साहित्य दर्पण" में इस प्रकार आख्यान (आख्यायिका) का वर्णन किया है –

"आख्यायिका कथावत्स्यात् कवेर्वंशानुकीर्तनम्।
अस्यामन्यकवीनां च वृत्तं पद्यं क्वचित् क्वचित्।।
कथांशनां व्यवच्छेद आश्वास इति बध्यते।
आर्यावक्त्रापवक्त्राणां छन्दसा येन केनचित्।
अन्यापदेशेनाश्वासमुखे भाव्यर्थ सूचनम्।।"

निष्कर्षतः आख्यान की अपनी आत्मकथा होती है। विश्वनाथ ने "कादम्बरी" की कथा और "हर्षचरित" को आख्यान कहा है।

भारतीय लोक साहित्य में आख्यान के आदि स्रोत वेद-पुराण एवं ब्राह्मण ग्रन्थ हैं। इनमें जो आख्यान हैं वे भारतीय कहानियों के आदि रूप हैं, जिन्हें सृष्टितत्त्व की व्याख्या के लिये महान् अवदानों के रूप में कल्पित किया गया है।*3

च्यवन भार्गव एवं सुकन्या मानवी की कथा हमें ऋग्वेद में प्राप्त होती है। शतपथ ब्राह्मण में पुरुरवा और उर्वशी की कथा नितान्त प्रसिद्ध है। ऐतरेय ब्राह्मण में शुनःशेप के आख्यान का वर्णन हुआ है। ब्राह्मण ग्रन्थों के पश्चात् उपनिषदों में भी अनेक कथाओं का उल्लेख पाया गया है। नचिकेता की सुप्रसिद्ध कहानी कठोपनिषद् में

---

*1 लोक साहित्य और संस्कृति – डॉ. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. १

*2 अष्टाध्यायी – पाणिनि, सर्ग ४, अध्याय २, ६०वाँ श्लोक

*3 भारत की लोक कथाएँ, की भूमिका – डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल

उल्लिखित है। जनश्रुति के पुत्र राजा जानश्रुति की कथा का चित्रण छान्दोग्य उपनिषद् में हुआ है।*1

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार - "बौद्धों ने प्राचीन जातकों की शैली के अतिरिक्त अवदान नामक नये कथा साहित्य की रचना की, जिसके कई संग्रह (अवदान शतक, दिव्यावदान आदि) उपलब्ध हैं।"*2

अतीत काल के वृत्तान्तों को प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित करने वाला तत्त्व इतिहास है। इन वृत्तान्तों में कर्म और फल में एक निश्चित संबंध रहता है। जहाँ प्रत्यक्ष दृष्टान्तों द्वारा अतीत की घटनाओं से कुछ उपदेश मिलता है, वहाँ इतिहास तत्त्व को सत्य मानते हैं। इसका सर्वप्रथम प्रयोग पाँचवीं शताब्दी ई.पू. में हेरोदोतस ने ग्रीक और परशियन युद्धों को लेकर लिखे गये अपने विवरण के लिये किया था। बाद में अतीत की उन विशिष्ट प्रकार की घटनाओं को सांकेतिक करने के लिये ही इसका (आख्यान का) प्रयोग होने लगा।*3

स्पष्टः विश्व की लोक कथाओं में ऐतिहासिक कथाओं का विशेष महत्त्व माना गया है। इसका एकमात्र कारण यही है कि इनके माध्यम से विशिष्ट भूभाग की राष्ट्रीय भावना का परिचय मिलता है। इन कथाओं में मुखरित ऐतिहासिक सत्य को बड़े मार्मिक एवं मनोरम ढंग से अभिव्यंजित किया गया है। हमारा प्राचीन शौर्य, त्याग, बलिदान, गौरव आदि इन ऐतिहासिक आख्यानों के द्वारा ही जीवित हैं।*4

2. "हो" आख्यान : वर्गीकरण -- "आख्यान" वर्गीकरण की दृष्टि से सामान्यतः दो प्रकार के होते हैं -

१. सामान्य आख्यान, २. स्थानीय आख्यान।

1. सामान्य आख्यान – इस वर्ग के आख्यान किसी व्यक्ति या स्थान विशेष से संबंधित न होकर पूरी जाति के जीवन से संबंध रखते हैं।

2. स्थानीय आख्यान – जो ग्राम विशेष, व्यक्ति विशेष या स्थान विशेष से संबंधित होते हैं।

"हो" लोक कथाओं में दोनों प्रकार के आख्यान पाये जाते हैं। लोककथाओं

---

*1 भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन - डॉ. कृष्णदेव उपध्याय, पृ. ४०१

*2 लोक कथा अंक - "आज-कल", पृ. ११

*3 हिन्दी के ऐतिहासिक नाटकों में इतिहास - डॉ. धनंजय, पृ. २०

*4 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. १४७-१४८

की अन्य विधाओं की तुलना में ''आख्यानों'' की संख्या उतनी अधिक नहीं है। फिर भी, जो आख्यान उपलब्ध हैं, वे ''हो'' जनजाति के पुराकालिक इतिहास, उनकी संस्कृति एवं उनके जीवन के अन्य क्षेत्रों के उद्‌भव एवं विकास की कथा कहते हैं। ''हो'' लोक साहित्य में बहुत से ऐसे ''मिथ'' भी हैं, जिसमें आख्यान के तत्त्व भी विद्यमान हैं।

3. हो आख्यानों का सामान्य परिचय – ''हो'' जनजाति के जीवन एवं संस्कृति का विकास सिंहभूम जिले के उन वन्य प्रदेशों एवं सुरम्य घाटियों में हुआ, जहाँ आधुनिक सभ्यता का प्रशस्त राज-मार्ग बहुत दिनों तक नहीं पहुँच पाया था। अतः उनके आख्यानों पर बाह्य प्रभाव नहीं के बराबर पड़ा है। उनके आख्यानों में वहाँ के स्थानीय जीवन से संबंधित समस्याओं, वहाँ के ''बोंगा'' (देवता) तथा राजा, वहाँ बसने वाली अन्य जातियों आदि का चित्रण मिलता है। ''हो'' जनजाति अपनी दृढ़ एवं अक्षुण्ण सांस्कृतिक चेतना के कारण काफी संगठित रही है। अतः उनके आख्यानों में उनके सामूहिक जीवन एवं उसके विकास, संघर्ष आदि की घटनाएँ उभर कर सामने आती हैं। उनके समाज के कई वीर पुरुषों के जीवन-संघर्ष पर आधारित आख्यान ''हो'' समाज में प्रचलित हैं।

(क) सामान्य आख्यान

1. ''असुर कथा'' या ''बुरू बोंगा की कथा'' – ''हो'' समाज में उनके आदि जीवन-काल में एक जाति या वर्ग विशेष का साथ सामूहिक संघर्ष का आख्यान प्रचलित है जो ''मुण्डा'' समाज, जो ''हो'' की ही एक मुख्य शाखा है, में ''सोसोबोंगा'' के नाम से प्रचलित है। ''हो'' समाज में इस आख्यान का शीर्षक (जो मिथ भी है) ''असुर कोरेयो जनगर'' या ''बुरू बोंगा को'' हो गया है। इसमें ''हो'' जनजाति कृषक के रूप में उभरी और असुर यान्त्रिक अथवा भौतिकवादी जीवन के पोषक हो गये। उनका (असुरों की) जीवन लौह्य कर्मशालाओं (लोहा गलाने की भट्टियों) से जुड़ा हुआ था और प्रकृति के पर्यावरण को प्रदूषित करने में वे अग्रणी थे। वन एवं कृषि के आधार को नष्ट कर लोहा गलाने अथवा लौह्य धातु पर आधारित उद्योगों की स्थापना एवं विकास में लगे असुरों के साथ ''हो'' जनजाति के संघर्ष एवं अन्ततोगत्वा असुरों का विनाश एवं ''हो'' समाज के प्राकृतिक जीवन की पुनर्स्थापना का आख्यान

इस कथा में सन्निहित है।

भौतिकवाद के विरुद्ध नैतिकवाद का यह संघर्ष वेद काल के आख्यानों से चला आ रहा है जिसकी अजस्त्र धारा आदिम जातियों के आख्यानों में अक्षुण्ण है। राजा के दूत का अपमान राजा का अपमान माना जाता है। "असुरकथा" में "सिंगबोंगा" द्वार भेजे गये विभिन्न दूतों का अपमान असुरों द्वारा किया गया जिसका परिणाम उनके लिये भयवाह हुआ। इसमें असुर जाति के विनाश की जो कथा है, वह उसके सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं धार्मिक पराजय की कथा है। इस पराजय के बाद यह जनजाति कभी प्रगति नहीं कर सकी और वर्तमान युग में एक अल्पसंख्याक एवं अत्यन्त पिछड़ी जनजाति के रूप में परिगणित है।

प्राचीन काल में किसी प्रेत-बाधा अथवा "बोंगा" की प्रसन्नता के लिये नरबलि की प्रथा असुरों में प्रचलित थी। जब असुरों की भट्ठियाँ नहीं जल रही थीं तो उन लोगों ने "खुजली वाले नौकर' को (जो सिंगबोंगा का अवतार था) बलि देने के लिये लाये थे। अतः उस काल मे प्रचलित नरबलि की परम्परा की जानकारी इस आख्यान में मिलती है। बलि के लिये क्या विधान अथवा प्रसाधन होते हैं, इसकी झलक भी "असुरकथा" में मिलती है।*1

"असुर कथा" का नायक "खुजली वाला लड़का" एक साधारण नौकर होकर भी अपने पारलौकिक शक्तियों से सम्पन्न होता है। वह खेल-खेल मे असुरों को अपनी पराशक्ति का अद्भुत प्रदर्शन कराता है। परंतु वे उसकी महत्ता नहीं समझ पाते। अन्ततः सभी स्वर्ण पाने की अभिलाषा में आग की भट्ठी में जल जाते हैं। असुरों का नाश भौतिकवाद के विनाश की कथा बन जाता है। अन्ततः "सिंगबोंगा" उनको, उनकी स्त्रियों को कृषि-कर्म में लगने का उपदेश देकर अन्तर्धान हो जाते हैं।*2

इस प्रकार का आख्यान में तामसिक प्रवृत्तियों पर सात्त्विक प्रवृत्तियों की विजय की कथा कही गयी है।

2. *तुङ्राजा अर पोन्चइति* – इस आख्यान में कोल्हान-प्रदेश (सिंहभूम) में राजतन्त्र का जन्म, उसके विकास एवं विस्तार, तत्कालीन सामाजिक

---

*1 हो दिशुम हो होन को - भाग-७, श्री धनुर सिंह पूर्ति - पृ. १३-२१

*2 हो दिशुम हो होन को - भाग-७, श्री धनुर सिंह पूर्ति - पृ. १३-२१

व्यवस्था एवं "पंचायतराज" का जन्म एवं विकास की कथा स्पष्ट होती है। इस आख्यान में "सिंहभूमि" नाम की उत्पत्ति, पोड़ाहाट क्षेत्र में "सिंह" राजाओं का आगमन, उनके द्वारा सिंहभूम में ८४ पीड़ों (राजनैतिक एवं राजस्व व्यवस्था का विभाजन) का निर्माण, प्रशासनिक सुव्यवस्था के लिये पंचायतों का सृजन, सुदृढ़ प्रशासनिक सुव्यवस्था के लिये मुण्डा, मानकी, प्रधान आदि के पदों का सृजन आदि का उद्भव एवं विकास की कथा परिलक्षित होती है।

इस आख्यान के अनुसार - प्राचीन काल में सिंहभूम में सिंह वंश के राजा राज्य करते थे। उसके पूर्व वहाँ "कोल" वंश के राजाओं का राज्य था। कोल वंश वाले "बोंगा बुरू" की आराधना करते थे।

हजारों वर्ष पूर्व पोड़ाहाट पीड़ में पूनम नामक राजा राज्य करता था। इनके वंशज चकहा (चक्रधरपुर), केर्से (खरसावाँ), सलि नदी के किनारे (सरायकेला) आदि स्थानों में जाकर रहने लगे।

मनोहरपुर मे चूड़ामणि नामक राजा की सात रानियाँ थीं, जिनमें सबसे छोटी, सावंती रानी छोटनागरा में रहती थीं। एक बार राजा शिकार मे वहाँ गया और रानी को पर-पुरुष (एक रिश्तेदार) के साथ शारीरिक सम्पर्क करते देख लिया। वह उसे जान से मार डालने का निश्चय किया। पर वह भागकर अपने मायके चली गयी। वहीं उसके गर्भ से एक बालक का जन्म हुआ। वह लड़का गाय-भैंसों की सेवा करते-करते बड़ा हुआ। उस पर "गोटोबोंगा" की विशेष कृपा थी। सिंगबोंगा भी उस पर कृपा करने लगे। बुरूबोंगा की सहायता से उसने बाघों को इकट्ठा कर उनकी चरवाही करता और उन्हें बैलों की तरह खेत में जोतता। वह "सिंह" या "शेर" से खेती करवाता था, इसलिये उसका वंश "सिंह" कहलाया।

वही लड़का, जिसका नाम "रेको" रखा गया था, बाद में "तुंग" राजा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसने अपने राज्य का नाम छोटानागरा से छोटानागपुर रखा। पंचायत में विचार करने के लिये वर्ष में एक बार पंच लोग जुटते थे। गाँव के विषय में "मुण्डा" से और कई गाँवों के विषय में मानकी से वह राय लेता था। इस प्रकार उसने विभिन्न विषयों के कार्य सम्पादन के लिये सन्ही, गोन्डाई, सरदार, मानकी, अण्डिया, दसगड़ आदि बनाया। गाँव के किनारे मुर्दा गाड़ने और पत्थर देने की प्रथा चलायी।

बाद में उसने पूरे छोटानागपुर को चौरासी पीड़-बुण्डु, तमाड़ हसदा आदि में

विभक्त किया। इस प्रकार बुन्दुवा से बुन्डु और बड़ा तम्बरा से तमाड़ बना।[*1]

3. दुष्ट रानी की कथा – श्रीशरतृचन्द्र मित्रा द्वारा लिखित यह आख्यान तत्कालीन राजाओं की विलासिता, अन्धविश्वास, ब्राह्मणों का प्रभाव आदि को प्रस्तुत करता है।

उक्त आख्यान का नायक एक राजा है जिसकी सात रानियाँ थीं। पर किसी से संतान नहीं थी। अन्ततः उसने बोंगा की पूजा की और पुत्रोत्पत्ति का आशीर्वाद पाया। एक ब्राह्मण के कहने पर उसने छड़ी से सात आमों को तोड़ा और सभी रानियों को दिया। छः रानियों ने अपने आम समय पर खा लिये। पर सातवीं रानी का आम नेवला द्वारा जूठा कर दिया गया। फलस्वरूप छः रानियों के छः पुत्र ठीक हुए। पर सातवीं रानी के पुत्र का मुँह नेवला जैसा हुआ।[*2]

"नेदला" जैसा मुख होना दुष्टता का परिचायक है। प्रायः सभी लोककथाओं में राजा की सबसे छोटी रानी का दुष्ट होना एक परम्परा बन गयी है। राजा दशरथ की छोटी रानी "कैकेयी" का चरित्र सदा से घृणा एवं हेय दृष्टि से देखा जाता रहा है। इस आख्यान में तत्कालीन समाज का लोक विश्वास उभर कर सामने आया है। आदिवासी (हो) समाज में "आम" उत्पत्ति का स्रोत एवं वंश-वृद्धि में सहायक माना जाता है। यह लोक विश्वास अन्य समाज में भी प्रचलित है। सात रानियों का होना भी प्रायः सभी लोककथाओं में पाया जाता है। "हो" समाज में "पाँच", "सात" आदि अंक विशेष महत्त्वपूर्ण हैं।

4. राजा होनेरो आण्डो मन्त्री होनरेया कहनी (राजकुमारी एवं मंत्री के बेटा की कथा) – इस आख्यान में नायक मन्त्री का पुत्र है, जो राजा की सबसे सुन्दर पुत्री (राजकुमारी) से प्यार करता था। वह परिवार एवं समाज के भय से उसे लेकर अन्य राज्य की ओर चला गया। वे दोनों एक घोड़े पर सवार होकर गये थे। राजकुमारी के पास एक ऐसी अद्भुत तलवार भी थी कि उसके एक प्रहार से पत्थर के भी दो टुकड़े किये जा सकते थे।

दोनों प्यास लगने के कारण एक घर में गये जो राक्षस का घर था। वहाँ एक

---

*1 "जोहार" पत्रिका-१६८०, अंक १

*2 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - खण्ड-१४ भाग-१ - शरतचन्द्र मित्रा, पृ. १३५

राक्षसी रहती थी, जिसके सात बेटे थे। सबसे छोटा बेटा ''दमगुड़गुड़िया'' कुँवारा था। राक्षसी ने राजकुमारी को छीनकर उससे अपने छोटे बेटे की शादी करने की योजना बनायी। जब मन्त्री का पुत्र अपने घोड़े पर सवार होकर जाने लगा तो राक्षसी ने घोड़े की पूँछ में सरसों की पोटली बाँध दी। जब उसके सात बेटे आये तो उन्हें सरसों का दाना देखकर राजकुमारी को प्राप्त करने हेतु भेज दिया। सभी जाकर राजकुमारी को छीन लाये। परंतु राजकुमारी ने चतुराई से छः को तलवार से मार डाला। परंतु दमगुड़गुड़िया बच गया। वह वेष बदल कर भिखारी के रूप में घोड़ा चराने का कार्य राजकुमारी के पास जाकर करने लगा और एक दिन मन्त्री पुत्र को मार कर राजकुमारी पर अधिकार कर लिया। परंतु एक दिन जब दरमगुड़ड़िया लकड़ी इकट्ठा कर रहा था, राजकुमारी ने उसे तलवार से मार डाला। वह जब मृत पति के पास जाकर रोने लगी तब ''मरंगबोंगा'' (ईश्वर) एक बूढ़ी औरत का वेष धारण कर आये और उसकी स्थिति से द्रवित होकर उसके पति को जीवित कर दिया। अब राजकुमारी एवं मन्त्री पुत्र ने शादी की और उस देश में राज करने लगे।*1

इस आख्यान में राज-परिवार में व्याप्त स्वच्छन्द यौनाचार का स्पष्ट संकेत मिलता है। साथ ही, राज-परिवार से सम्पर्कित मन्त्री आदि के प्रणय की कथा एक ऐतिहासिक सत्य है। अन्य आख्यानों की तरह इसमें भी राक्षस का प्रवेश कराया गया है और अन्त में राक्षसों के नाश की घटना घटित हुई है। राजकुमारी के पास एक अद्भुत तलवार का होना आख्यान की कथा का एक महत्त्वपूर्ण सत्य है। वह ''तलवार'' राजदण्ड का प्रतीक है जो तामसिक या आसुरी शक्तियों का नाश करने में सक्षम है। ''हो'' समजा में सरसों जादू-टोना करने का माध्यम माना जाता है। इस आख्यान में भी सरसों का प्रयोग किया गया है। प्रायः सभी जनजातियों के आख्यानों में राजा, राजकुमारी, घोड़ा, तलवार, राक्षस एवं अन्य अतिप्राकृतिक शक्तियों का सन्निवेश रहता है। इस आख्यान में भी ये सभी पात्र एवं तत्त्व विद्यमान हैं।*2 इसमें अद्भूत तलवार, राक्षस आदि का प्रयोग कथानक रूढ़ियों के रूप में होता है।

---

*1 द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब - डी. एन. मजुमदार, पृ. ३३८-३४२

*2 द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब - डी. एन. मजुमदार, पृ. ३४६-६४८

(ख) स्थानीय आख्यान

5. रितुई गोन्डाई की कथा – इस कथा का नायक जगन्नाथ सिंह कोल्हान क्षेत्र (पीड़) का राजा था। उसी के राज्य में रितुई गोन्डाई सिंहकू नामक हो जनजाति का एक धनी एवं शक्तिशाली आदमी रहता था। "हो" समाज के लोग राजा एवं उसकी सम्पन्नता एवं शक्ति से जलते थे एवं डरते भी थे। राजा के हाथी का सोने का एक घंटा "घासी" (डोम) द्वारा चुराया गया और उसने उसे रितुई गोन्डाई के हाथ बेच डाला। जब राजा को पता चला कि चोरी हुआ घण्टा रितुई गोन्डाई के पास है तो उसने उसे चोरी के जुर्म में गिरफ्तार कर लिया। राजा ने रितुई गोन्डाई को ढेंकी से कूट कर मारने की सजा सुना दी। दस लोगों ने ढेंकी उठाई और बीस लोगों ने रितुई गोन्डाई को पकड़ा। इस प्रकार ढेंकी से कूट कर उसे मौत की सजा दी गयी। जगन्नाथपुर के निकट एक तालाब में उसे गाड़ दिया गया जो आज भी "रितुई गोन्डाई" तालाब के नाम से जाना जाता है।

इस आख्यान में सामाजिक वैमनस्य, राजतन्त्र का अत्याचार, राजा की स्वेच्छाचारिता, अन्याय एवं दमन की कथा उभर कर कर सामने आयी है। इसमें राजा का अविवेक तथा अपने राज्य में किसी को भी धनवान् अथवा अपने से अधिक बलवान् न होने देने की प्रवृत्ति प्रमुख है। इसमें रितुई गोंडाई को मौत की सजा देना राजा के पूर्वाग्रह का प्रतिफल प्रतीत होता है। इसमें "दीकू" (गैर-आदिवासी) एवं आदिवासी के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का संघर्ष भी परिलक्षित है। "ढेंकी" परवर्ती काल में "हो" समाज में एक अशुभ एवं मृत्यु की यातना का माध्यम - प्रतीक बन गयी। "हो" समाज की स्त्रियाँ ढेंकी की अपेक्षा ओखल-मूसल का व्यवहार करती हैं। इस आख्यान में मौत की सजा पाने वाला "रितुई गोंडाई" "हो" समाज का तत्कालीन सिंह राजाओं (दिकुओं) द्वारा दमन के फलस्वरूप हुए शहीद का प्रतीक बन गया। "सिंह" राजाओं के विरुद्ध बाद में "हो" जनजाति का विद्रोह इसी प्रकार के दमनात्मक नीति की प्रतिक्रिया के रूप में उभरा जिसका साक्षी परवर्ती इतिहास है। डॉ. सी. पी. सिंह ने अपनी पुस्तक "द हो ट्राइब ऑफ सिंहभूम" में जो ऐतिहासिक तथ्य प्रस्तुत किये हैं उससे यह स्पष्ट होता है कि सन् १७५७ से १७६४ के मध्य "हो" लोगों ने सिंह राजाओं के विरुद्ध कई बार विद्रोह किया।

उपर्युक्त आख्यान के परिप्रेक्ष्य में यह ज्ञातव्य है कि आज भी "हो" जनजाति

के कुछ लोग "दीकू" अथवा "गैर हो" से घृणा करते हैं और उनसे दूर रहना चाहते हैं। इस प्रकार रितुई गोंडाई एक व्यक्ति न रहकर शहीद होकर हो समाज का प्रतीक-प्रतिनिधि बन गया।

6. वीर चेंडेया – डॉ. देवेन्द्रनाथ सिंहकू द्वारा लिखित "वीर चेंडेया" का आख्यान भी "हो" लोगों की वीरता, शक्ति एवं शौर्य को रूपायित करता है।

कथा का नायक "चेंडेया" एक चरवाहा है। वह हो समाज की वीरता का प्रतीक है। उसकी बहादुरी से राजा को जलन होती है और राजा उसे अपने हाथी से लड़ने को कहता है। राजा के शर्त के अनुसार चेंडेया हाथी से लड़ता है और उसे परास्त कर सात समुद्र पार फेंक देता है। पर राजा पुनः उसे सात समुद्र पार से वापस लाने का आदेश देता है। वह पुनः सात समुद्र पार जाता है। रास्ते में उसे एक दूसरा बहादुर मिला जो लोहे के हल से चट्टान को जोत रहा था। एक तीसरा बहादुर मिला जो सात बैलगाड़ियों को अकेले खींच रहा था। तीनों सात समुद्र पार जाकर उस हाथी को ले आते हैं। राजा अन्ततः हार मानकर राजकुमारी की शादी वीर चेंडेया से कर देता है। चेंडेया को पहले आधा एवं बाद में पूरा राज्य दे देता है। चेंडेयाा आगे चलकर एक अत्यन्त पराक्रमी राजा बन जाता है।*1

इस आख्यान में एक आम आदमी (चरवाहा) के ऐसे शौर्यपूर्ण कार्य का प्रदर्शन हैं जिससे बाध्य होकर सामन्तवाद का प्रतीक "राजा" को उसके (आम आदमी) सामने झुकना पड़ा। यह कथा सामन्तों की फितुरी मिजाज और उनके आम आदमी के प्रति नफरत वाले विचारों का द्योतक है। इस आख्यान में अप्रत्यक्ष रूप से कोल्हान क्षेत्र में राजतन्त्र के विनाश एवं प्रजातन्त्र की स्थापना की कथा अंकित है। "वीरभोग्या वसुन्धरा" का कथ्य यहाँ सत्य उतरता है। मनोविश्लेषण की दृष्टि से मनुष्य अपनी दमित इच्छाओं को (अहम् को) इस प्रकार की कथाओं के माध्यम से संतुष्ट करता है।

वीर चेंडेया एक आम आदमी है। परंतु उसमें अतिप्राकृतिक शक्तियों का समावेश किया गया है जो आख्यान का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। "सात समुद्र पार" का लोक विश्वास अन्य आख्यानों में भी मिलता है जो एक अज्ञात एवं सुदूरवर्ती काल्पनिक

---

*1 आदिवासी – २ मार्च १६८२ – डॉ. देवेन्द्रनाथ सिंहकू-पृ. ८

प्रदेश का द्योतक है। इसमें कथानक रूढ़ियों का प्रयोग सात समुद्र आदि के रूप में किया गया है।

7. "हो" आख्यानों की संरचनात्मक विशेषताएँ – अन्य लोक भाषाओं की तरह "हो" भाषा में भी जो कतिपय आख्यान लिखित रूप में उपलब्ध हुए हैं वे सभी मौखिक कथाओं के रूप में पीढ़ी-दर-पीढ़ी से चले आ रहे हैं और अपनी एक जीवित परम्परा बरकरार रखे हुए हैं। समय की गति एवं विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के माध्यम से अभिव्यक्ति पाने वाले इन आख्यानों में वर्णित घटनाएँ, उनके पात्र आदि के नाम एवं रूप में यथेष्ट परिवर्तन एवं परिवर्द्धन होता रहा है। परंतु इनके कथ्य एवं अभिप्राय प्रायः पूर्ववत् हैं। कहानियाँ ठीक वैसे ही शुरू होती है – "पुराने जमाने में एक राजा था" और उसके बाद उस राजा को उस कथा का नायक बनाकर शेष पात्रों का सृजन एवं उनका राजा से संबंध (राजा-प्रजा का, उत्पीड़क-उत्पीड़ित का, सेविक एंव सेव्य आदि का) तथा उसका तत्कालीन सामाजिक जीवन धारा पर प्रभाव आदि का मूर्त्त रूप हमारे सामने उभरता जाता है। अधिकांश कथाओं में दो परस्परविरोधी वर्ग अथवा ऊँच एवं नीच वर्ग के पात्र सामने आते हैं। पर दोनों दो प्रतिकूल वातावरण, समाज, संस्कार आदि से युक्त होते हुए भी एक दूसरे के सहायक होते हैं और किसी लक्ष्य विशेष की प्राप्ति में एक दूसरे के सहायक होते हैं। उस समय वे भूल जाते हैं कि राजा का पुत्र है तो दूसरा सेवक अथवा मन्त्री का लड़का।

प्रसंगाधीन कथाओं (आख्यानों) में एक दूसरी भावगत विशेषता यह है कि राजकुमारी का होने वाला पति कोई मन्त्री का लड़का, चरवाहा अथवा अन्य किसी निम्न वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला युवक है। निम्नवर्ग अथवा साधारण परिवार से आने वाला वह युवक किसी विशिष्ट शक्ति अथवा योग्यता से सम्पन्न होता है और अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व एवं असाधारण कार्य से राजा को तथा राजकुमारी को प्रभावित कर देता है। वह हर कठिन परीक्षा में उत्तीर्ण होता है, अनेक बाधाओं को पार करता है। यहाँ तक कि मौत को भी पराजित कर देता है और अपने अभिलषित लक्ष्य- राजकुमारी को प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार इन कथानकों में यह स्पष्टतः परिलक्षित है कि "हो" जनजाति अपने एक साधारण सदस्य को राज परिवार के किसी सदस्य से कम नहीं मानती। सम्भवतः राजाओं या राजतन्त्र के प्रति उनके मन में जो हेय भाव है (घृणा का भाव है),

वही उनके पात्रों में महत् भाव के रूप में उभर कर सामने आता है। यही कारण है कि राजकुमारी को अथवा राज परिवार के जातक को "हो" समाज के एक साधारण युवक या चरवाहा से भी अयोग्य एवं असमर्थ दर्शाया गया है।

"हो" जनजाति एक स्वतन्त्रता प्रिय जनजाति है और इसकी मानसिकता स्वतंत्र एवं स्वच्छंद रूप से जीने की है। अतः इस जनजाति के लोगों ने राजतंत्र के लौह्य-शृंखलाओं में अपने को कभी भी आबद्ध होने नहीं दिया है। "वीर चेंडेया" या "राजा होनेर ओन्डो मन्त्री होनरेया कहनी" में ये तथ्य स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आते हैं।

इन कथाओं का प्रारम्भ एक सामान्य स्थिति से होकर विषम परिस्थितियों - संघर्ष, युद्ध, हत्या आदि से गुजरता हुआ अन्त में सुखद अन्त (कॉमेडी) में परिणत होता है। इन आख्यानों में "रूप परिवर्तन" अथवा मृत्योपरान्त पुनर्जन्म लेकर अधूरी कथा को पूरा करने का संयोजन इसकी विशिष्टता है। अभीष्ट फलों की प्राप्ति में अतिप्राकृतिक शक्तियों का उपयोग या उपस्थिति, पशुपक्षियों का मनुष्यवत सहयोग, प्राकृतिक जैविक पदार्थों का उपयोग आदि इन आख्यानों की विशेषता है।

"हो" आख्यानों में भी अन्य आख्यानों की तरह राजकुमार या मन्त्री पुत्र को कहीं-न-कहीं राजकुमारी को या अन्य अभीष्ट वस्तु की अभिप्राप्ति के लिये राक्षसों के साथ लड़ना पड़ता है। वे राक्षस उसके अभीष्ट साधन में बाधक होते हैं। परंतु अन्त में वे पराजित होते हैं। "राजा होनेर ओन्डो मन्त्री होनरेया कहनी" में भी "दमगुडगुड़िया" नामक राक्षस एवं उसकी माँ तथा भाई विभिन्न कुचक्रों द्वारा राजकुमारी को मन्त्री के लड़के से छीन लेते हैं। परंतु अन्ततः राजकुमारी मन्त्री पुत्र को ही मिल जाती है और सभी राक्षस कालक्रमानुसार मारे जाते हैं। फिर भी वे दोनों राजा-रानी की तरह सुखी दाम्पत्य जीवन व्यतीत करने हैं।

इस प्रकार इन आख्यानों में आशावादिता की स्वस्थ मानसिकता का दर्शन हम स्पष्टतः कर लेते हैं। अंधकार पर प्रकाश की विजय, विपन्नता से सम्पन्नता की अभिप्राप्ति और लौकिक शक्तियों पर पारलौकिक शक्तियों का प्राबल्य 'हो" आख्यानों की विशिष्टता है। इन आख्यानों की भाषा सहज, सरल एवं आंचलिकता से भरपूर है। कथानक रूढ़ियों के प्रयोग ने इन्हें रोचक और रोमांचक बन दिया है।

चतुर्थ अध्याय

"हो" लोककथा : लोक कहानी

1. लोक कहानी की सामान्य अवधारणा — लोककथा अथवा लोक कहानी के उद्‌गम के विषय में यह मत प्रचलित है कि मानव के साथ-साथ ही इसका जन्म हुआ। वैदिक संहिताओं में सर्वप्रथम कथाओं का उद्‌गम दिखायी पड़ता है, जिनमें दो या तीन पात्रों में परस्पर कथनोपकथन विद्यमान है। इन सूक्तों को "संवाद सूक्त" कहा गया है। "यम-यमी" एवं विश्वामित्र- नदियाँ" ऐसे ही संवाद सूक्त हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थों में भी अनेक कथाएँ उपलब्ध होती है। शतपथ ब्राह्मण में पुरूरवा और उर्वशी की कथा नितान्त प्रसिद्ध है।*1

परंतु भारतीय कथा साहित्य का समुद्र "पंचतन्त्र" है। यह विश्व साहित्य को भारतीय साहित्य की महती देन है। पंचतन्त्र की कहानियाँ नितान्त रोचक एवं उपदेशप्रद है। ईसा की छठी शताब्दी में "पंचतन्त्र" की कहानियों का अनुवाद पहलवी भाषा (प्राचीन फारसी) में हुआ। तत्पश्चात् अरबी, लैटिन, ग्रीक, जर्मन, फ्रेंच, अंग्रेजी आदि भाषाओं में इसके अनुवाद सोलहवीं शताब्दी तक होते रहे। ग्रीस के सुप्रसिद्ध कथा संग्रह "इसप की कहानियाँ" और अरब की "अरेबियन नाइट्स" की आधारभूत ये ही कहानियाँ हैं।*2

नीति कथाओं में "पंचतन्त्र" के बाद "हितोपदेश" का नाम आता है। इस ग्रन्थ के रचयिता नारायण पंडित थे और इसकी रचना चौदहवीं शताब्दी के आस-पास हुई।*3

इसके अतिरिक्त संस्कृत में अनेक कथाएँ लोककथा की परम्परा में रचित हुई जिसमें बृहत्कथा मंजरी, कथा सरित्-सागर, बेताल पंचविंशति, शुक सप्तसति, सिंहासन द्वीविंसिकी आदि मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। बृहत्कथा में मनेरंजक कथाओं के रचयिता गुनाढ्‌य थे और बृहत्कथा मंजरी के रचयिता क्षेमेन्द्र हैं। कथा सरित्-सागर के

---

*1 शतपथ ब्राह्मण – ११ (५)

*2 भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन – डॉ. कृष्णदेव उपध्याय, पृ. ४०८

*3 भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन – डॉ. कृष्णदेव उपध्याय, पृ. ४०६

रचयिता सोमदेव हैं। यह भारतीय कथारूपी नदियों के लिये वास्तव मे सागर है।*1

बौद्ध साहित्य में भी कथा साहित्य की प्रचुरता पायी जाती है। ये जातक कथाएँ भगवान् बुद्ध के पूर्वजन्म की मनोरंजक कहानियाँ हैं। ये जातक कथाएँ संसार की सम्भवतः सर्व प्राचीन कहानियाँ हैं। इनकी संख्या ५५० हैं। अत्यन्त प्राचीन काल से दन्तकथा अथवा लोककथा के रूप में जो कहानियाँ चली आती थीं; उनका इन जातकों में विशाल संग्रह हैं।*2

श्रीचन्द्र जैन ने लोककथाओं की ऐतिहासिकता पर विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि लोककथाओं की परम्परा अत्यन्त पुरानी है। जितनी पुरानी विश्व सृष्टि है, उतनी ही पुरानी लोककथाओं की परम्परा है। विभिन्न देवी-देवताओं की कल्पना लोक-कथाओं की पृष्ठभूमि पर आधारित है। मानव का प्रथम विचार लोक कलात्मक था। परमेश्वर की आदिवाणी लोककथा के रूप में ही प्रस्फुटित हुई थी।*3

लोककथा की परिभाषा विभिन्न प्रकार से प्रस्तुत की गयी है जो इसके उद्‌गम और विकास की कहानी कहती है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार-यद्यपि इस शब्द (लोककथा) के प्रयोग के बारे में विद्वानों में मतभेद रहा है तथापि लोककथा शब्द मोटे तौर पर लोक प्रचलित उन कथानकों के लिये व्यवहृत होता है जो मौखिक या लिखित परम्परा से क्रमशः एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त होते रहे हैं।

हिन्दी साहित्य कोष भाग-१ के अनुसार - "लोक में प्रचलित और परम्परा से चली आने वाली मूलतः मौखिक रूप में प्रचलित कहानियाँ लोक कहानियाँ कहलाती हैं।"

लोककथा की विशिष्टता यह है कि यह परम्परागत होती है। क्रमागत होने के कारण लोककथा क्रमशः एक मानव से दूसरे मानव को उपलब्ध होती है। फलतः इसमें मौलिकता का अभाव रहता है। यह परम्परा (अनुश्रुति) विशुद्ध रूप में मौखिक भी हो सकती है। लोक कहानी सुनी जाती है तथा बार-बार दुहराई जाती है। कभी-कभी कण्ठस्थ की गयी लोक-कथा में नूतन कथावाचकों द्वारा कुछ परिवर्द्धन एवं परिवर्तन भी कर दिये जाते हैं।*4

---

*1 भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन - डॉ. कृष्णदेव उपध्याय, पृ. ४०६

*2 भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन - डॉ. कृष्णदेव उपध्याय, पृ. ४१०

*3 लोक-कथा विज्ञान - अध्याय - ४ - श्रीचन्द्र जैन, पृ. १४१

*4 लोक-कथा विज्ञान - अध्याय - ४ - श्रीचन्द्र जैन, पृ. १६

लोककथाएँ प्राचीन घटनाओं पर आधारित होने के कारण उनमें नैसर्गिकता रहती है। लोककथाओं की सृष्टि से न केवल मनोरंजन होता है वरन् मस्तिष्क में वीरता, एकता, प्रेम, मोह, सहानुभूति जैसे मानवीय गुणों का भी विकास होता है।

लोककथा उन जाति विशेष के लोगों में विद्यमान साहस, शक्ति, पुरूषत्व एवं मानवीय कमजोरियों जैसे गुण एवं अवगुण का प्रतिनिधित्व करती है और उस जाति विशेष की शासन-पद्धति, समृद्धि की भी याद दिलाती है।*1

इन कथाओं में उद्देश्य की सिद्धि के लिये दुर्बल को दैवी सहायता प्राप्त होना, परियों, देवताओं अथवा अन्य शक्तियों द्वारा नायक या नायिका को सहायता प्राप्त आदि होना होता है। कुछ आचार्यों का मत है कि "मनुष्य जब वास्तविक संसार में गुण का आदर नहीं प्राप्त करता तो वह कथा के कल्पित संसार में उस गुण का आदर कराकर, उसे उचित फल दिला कर अपनी मनस्तुष्टि कर लेता है।"*2

श्रीचन्द्र जैन ने लोककथा का विश्लेषण आदिवासियों को पृष्ठभूमि में रख कर किया है। आदिवासियों के जीवन में लोककथाओं की महत्ता एवं प्रसार के संबंध में वे लिखते हैं - "प्रकृति की सुन्दरता आदिवासियों की आँखों में रात-दिन घूमती है। अवकाश के समय ये अपने परिवार के साथ मनोविनोद करते हुए जीवन की विषमताओं के काले चित्र खींचते हैं और कभी-कभी भूत-प्रेतों की कथाएँ सुनाकर अपने परिवार के सदस्यों एवं सहयोगियों को चकित कर देते हैं।*3

इन अरण्यवासियों की लोककथाएँ कौतूहल से परिपूर्ण होती हैं; क्योंकि चमत्कार इन काननवासियों को अधिक प्रिय है। सतत साहचर्य के कारण वृक्ष-पुष्प, पशु-पक्षी, नदियाँ-नाले, छोटे-छोटे पर्वत आदि इन कथाओं के अभिन्न अंग बन गये हैं। बड़े-बड़े वृक्ष इन आदिवासियों के साथ नाचते-गाते हैं और विभिन्न रूप-रंगों के पशु-पक्षी इनके साथ भोजन करते हैं और सुख-दुःख की घड़ियों में साथी बनते हैं।*4

आदिवासी लोककथाओं में उनके जीवन में विश्राम और आनन्द की अनुभूति

---

*1 लोक कथाओं की भूमिका में एक हो लोक कथा - "आदिवासी", १०-१७ अगस्त १६७८ - श्री ए. के. पिंगुवा, पृ.१५

*2 समीक्षाशास्त्र - पं. सीताराम चतुर्वेदी, पृ. ६५२

*3 लोक कथा विज्ञान - श्री चन्द्र जैन, पृ. ४३

*4 लोक कथा विज्ञान - श्री चन्द्र जैन, पृ. ४३

करानेवाली तम्बाकू और मदिरा (डियंग) की कथाएँ हैं। इन आदिवासियों ने मृत्यु को भी कल्पना की दृष्टि से देखकर इसकी गम्भीरता की कथाएँ कही हैं। आदिवासियों के धार्मिक-जीवन, नृत्य, उत्सव, लोक विश्वास, अंधविश्वास - सभी का प्रतिबिम्ब उनकी कथाओं में अंकित है। आदिवासी जीवन और संस्कृति का जैसा सर्वग्राही रूप उनकी लोककथाओं में दिखायी देती है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है।*1

यह भी माना जाता है कि लोककथाएँ सर्वकालिक एवं सर्वव्यापी होती है। इस संबंध में डॉ. दिनेश्वर प्रसाद के मतानुसार-"लोक साहित्य का बहुत बड़ा भाग जितना प्रादेशिक है उससे अधिक राष्ट्रीय और जितना राष्ट्रीय है, उससे अधिक अन्तर्राष्ट्रीय है।" वह समस्त मानवजाति की समान विरासतों में है और उसकी भागवत एकता का महत्त्वपूर्ण सूत्र भी एक है। इस धारणा को पुष्ट करने वाली ये कथाएँ और कथानकरूढ़ियाँ हैं जो दोनों गोलार्द्धों में व्याप्त है।

अब तक के अनुसंधानों के अनुसार "सिन्ड्रेला" की कहानी एशिया, यूरोप, अफ्रीका, अलास्का और दक्षिणी अमेरिका में प्रचलित है। इसका प्राचीनतम लिखित रूप नवीं शताब्दी का है जो चीनी भाषा में प्राप्त है। अकेले यूरोप में इसके ५०० रूपान्तर मिलते हैं। मेरियन कॉक्स ने १८९२ में इसके उस समय तक प्राप्य सभी रूपान्तरों का एक संकलन प्रकाशित किया था। आपदग्रस्त हिंसक पशु और उसके उद्धारक के प्रायः सौ रूपान्तरों का विवेचन क्रार्लेक्रोन के "मानउन्ड फुक्स (मनुष्य और लोमड़ी : १८९१) का विषय है। यह कहानी भागवत पुराण और "गुलबकावली" में मिलती है।*2

प्राकृतिक पदार्थों का दैवीकरण, नरबलि, गोत्र-प्रतीक आदि असंख्य धारणाएँ और कथाएँ उन जातियों में भी प्रचलित हैं जो भौगोलिक दृष्टि से असम्बद्ध हैं, किंतु जो समान सामाजिक-आर्थिक स्थितियों से गुजर रही हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि जहाँ गैर-आदिम संस्कृतियों में ये धारणाएँ और विश्वास लोक-कहानियों या प्रथाओं में अवशेष के रूप में रह गये हैं वहाँ आदिम संस्कृतियों में इनकी भूमिका जीवन्त जीवनमूल्यों की है।*3

श्री जगदीश त्रिगुणायत के अनुसार-"हिन्दी में लोककथाओं का प्रादुर्भाव

---

*1 लोक कथा विज्ञान - श्री चन्द्र जैन, पृ. ४३-४४

*2 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. ६२

*3 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. ६६

संग्रह से नहीं अनुवाद से हुआ है। शुक बृहत्तरी, सिंहासनबत्तीसी, बैतालपचीसी आदि संस्कृत से हिन्दी में आये। फिर किस्सा तोता-मैना, गंगाराम पटेल की यात्रा आदि भी लोक कण्ठ से प्रकाशन में उतरे।"

आदिवासी लोककथाओं में विशेष रूप से देवी-देवताओं, जादू-टोना का प्राचुर्य रहता है। जिस प्रकार इस विराट् विश्व में देवी-देवता व्याप्त हैं, ठीक उसी प्रकार लोक-कथाओं में भी ये किसी-न-किसी रूप में विद्यमान है। कोई भी कथा इनके बिना न रोचक बनती है और न अलौकिक। .....भूत-प्रेत की कथाओं को ये विकसित करते हैं। तन्त्र-मन्त्र और यन्त्र विषयक कहानियाँ इन देवी-देवताओं की अनुकम्पा से ही जीवित हैं।[*1]

लोक-कथाओं में नर-बलि का भी प्रसंग आता है। बलि का प्रचलन पूरे विश्व में किसी-न-किसी रूप में आज भी विद्यमान है। बलि अपने प्रारम्भिक रूप में एक विशेष प्रकार का कर्मकाण्ड अथवा प्रथा है, जिसमें किसी वस्तु को नष्ट किया जाता है अथवा अपहृत किया जाता है और जिसका उद्देश्य आध्यात्मिक शक्ति के मुख्य श्रोत तथा उसकी शक्ति को ग्रहण करने के लिये इच्छुक के मध्य संबंध स्थापित करना होता है।[*2]

ई.बी. टेलर सबसे पहला विचारक था जिसने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि बलि एक प्रकार का अर्पण है जो आध्यात्मिक शक्तियों के प्रति किया जाता है, जिसका उद्देश्य उनकी कृपा प्राप्त करना है।

ये लोक-कहानियाँ कल्पनात्मक होती हुई भी अधिक वर्णनात्मक है। देवी-देवताओं के संबंध में भी इनमें कुछ ऐसी बातें कही गयी हैं जो सामान्य धारणाओं से विलक्षण प्रतीत होती हैं। "सूर्य, चन्द्रमा और तारे" नामक संथाली लोककथा में कहा गया है कि सूर्य और चन्द्रमा पति-पत्नी है। इन दोनो के बहुत से बच्चे हैं। लड़के अपने पिता के साथ रहते हैं और लड़कियाँ अपनी माता के साथ। सूर्य और उनके लड़के दिन में घूमा करते हैं एवं चन्द्रमा और उसकी लड़कियाँ रात में घूमा करती हैं। ये सब आकाश में चमकने वाले तारे ही हैं।[*3]

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि लोककथाएँ युग की चेतना को लेकर ही

---

*1 मुण्डा लोक कथाएँ - श्री जगदीश त्रिगुणायत, पृ. ८

*2 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. १५५

*3 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. १६७

जीवित रहती है। सामाजिक वातावरण में पल्लवित एवं पुष्पित कथाएँ जनजीवन की गतिशीलता को अनुप्राणित करती हैं और भविष्य की कल्पना को वर्तमान की चेतना से नयी अभिव्यक्ति प्रदान कर सशक्त बनाती हैं।

युगबोध के धरातल पर निर्मित लोककथा एक ओर सामाजिक शंका का समाधान करती हैं और दूसरी आरे प्रबुद्ध मानव को उज्ज्वल भविष्य का संदेश भी देती है।[*1]

2. "हो" लोक–कहानी वर्गीकरण – लोक कहानी का विस्तार सम्पूर्ण मानव जीवन एवं प्रकृति के नानारूपों तक है। "हो" जनजाति प्रकृति के उन्मुक्त परिवेश में विचरण करती रही है और वन एवं वन्य पशुओं के सान्निध्य उसे अधिक भाया है। अतः "हो" लोक कहानियों मे उन्मुक्त प्रकृति, निरभ्र आकाश में चमकते चाँद-तारे, विविध प्रकार के वन्य-पशु, जहेर (पूजास्थली) बुरू (पहाड़) एवं बीर (जंगल) में निवास करने वाले विभिन्न बोंगा (देवता) आदि का सजीव चित्रण देखने को मिलता है। अध्ययन एवं विवेचन की सुविधा की दृष्टि से "हो" लोक कहानियों को निम्नांकित शीर्षकों में विषयानुसार विभाजित किया जा सकता है[*2] –

(क) जाति कथा
(ख) पशु कथा
(ग) नीति कथा (उपदेशात्मक)
(घ) धूर्त कथा
(ङ) परी कथा
(च) दैत्य कथा
(छ) हास्य (मूर्ख) कथा

"हो" लोककथाओं के संग्रह के कार्य में श्री डी. एन. मजुमदार, राय बहादुर एस.सी. राय, श्री बी. सुकुमार हलदार आदि का प्रशंसनीय योगदान रहा है और ये लोक कथाएँ १६१५ से १६४२ तक जर्नल ऑफ बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी तथा "मैन इन इण्डिया" पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई। इनके संकलन एवं प्रकाशन से "हो" लोककथाएँ जन-साधारण को उपलब्ध हो सकी। इनके अतिरिक्त श्रीकान्हूराम

---

*1 लोक कथा विज्ञान – श्री चन्द्र जैन, पृ. १५६

*2 लोक कथा विज्ञान – श्री चन्द्र जैन, पृ. १४५–१४६

देवगम, डॉ. एस.के. तियू, श्री शंकर लाल गगराई, श्री योगेन्द्र मुनि आदि ने भी कुछ लोककथाओं को प्रस्तुत किया जिनसे "हो" जीवन एवं समाज पर यथेष्ट प्रकाश पड़ता है।

"हो" लोक कहानियों का कोई वृहत् संग्रह प्रकाशित नहीं हुआ है। इस दिशा में लोक-कहानियों को प्रकाशित करने का कार्य बिहार सरकार (जनसम्पर्क विभाग) की पत्रिका "आदिवासी" एवं कल्याण विभाग के अनुदान से प्रकाशित तथा श्री बलराम पाट पिंगुवा (प्राध्यापक, राँची कॉलेज) द्वारा सम्पादित "जोहार" पत्रिका के माध्यम से किया गया। जेवियर हो प्रकाशन, चाईबासा (सिंहभूम) द्वारा प्रकाशित "हो दिसुम हो होन को" के सप्तम भाग में "हो" लोककथाओं का संग्रह प्रकाशित हुआ है। श्री जगदीश त्रिगुणायत द्वारा लिखित "मुण्डा लोक कथाएँ" मुण्डा जनजाति की लोककथाओं का एक वृहत् संग्रह है। इससे मिलती-जुलती अनेक लोक कहानियाँ "हो" समाज में प्रचलित हैं। मूलतः "हो" भी मुण्डा जनजाति की ही एक शाखा है और उनकी बोली, संस्कृति, रहन-सहन आदि मुण्डा लोगों की तरह ही है। स्थान विशेष पर बस जाने एवं भौगोलिक वातावरण की भिन्नता के कारण दोनों जातियों में कुछ अन्तर प्रतीत होता है।

(क) जाति कथा – "हो" समाज में जाति की उत्पत्ति के संबंध में यह धारणा है कि "सिंगबोंगा" ने स्वयं कर्म के अनुसार जाति का बँटवारा किया। इसके अनुसार "हो" को कृषक (चासी) बनाया और तांती (पान या पिआयँ) को वस्त्र बनाने का कार्य सौंपा। "हो" जाति के लोग अपने को अधिक श्रेष्ठ मानते हैं। "हो" का अर्थ होता है "मनुष्य"। अतः उनके अन्तर्मन में श्रेष्ठ मनुष्य होने की भावना भरी हुई है। अन्य जाति को वे अपने से निम्न श्रेणी का मानते हैं। "हो" समाज में सबसे निम्न स्थान "ताँती" या "पिआयँ" का है। वैसे "तांती" अपने को अधिक अक्लमंद समझते हैं। "हो" लोगों में "तांती" जाति से संबंधित कई कथाएँ हैं, जिनमें उन्हें बेवकूफ, कायर एवं विपन्न दर्शाया गया है। कुछ जाति कथायें निम्न प्रकार है :-

1. पान द्वारा मच्छरों का शिकार – इस कथा में "पान' (तांती) द्वारा की गयी बेवकूफी एवं उसका घातक परिणाम दर्शाया गया है। "पान" लोगों ने मच्छरों से परेशान होकर यह निर्णय किया कि उन्हें तीर से मारा जाय। यह निर्णय कर वे एक मकई के खेत में गये। जैसे ही एक मच्छर एक "पान" के पीठ पर बैठा, दूसरे ने इस मच्छर पर तीर चला दिया। मच्छर तो उड़ गया परन्तु वह "पान" तीर से मारा

गया।

इस प्रकार इस कहानी में "पान" (तांती) की बेवकूफी एवं बुद्धिहीनता प्रत्यक्ष रूप से दर्शायी गयी है।

2. एक पान और गिरगिट – एक बार एक "पान" कपड़ा बेचने जा रहा था तो उसकी नजर एक गिरगिट पर पड़ी। वह रास्ते में बैठा सिर हिला रहा था। पान उस गिरगिट से बहुत डर गया और उसे ऐसा लगा कि गिरगिट सिर हिलकर उसे खाना चाहता है। वह कपड़े का गट्ठर वहीं फेंक कर अपने गाँव की ओर जान बचाने के लिये भाग खड़ा हुआ।*1

इस कथा में "पान" (तांती) की कायरता, बेवकूफी एवं सामान्य ज्ञान का अभाव दर्शाया गया है।

3. पान और पियाज–रोटी – एक बार एक पान अपनी ससुराल गया। वहाँ उसकी सास ने उसे पियाज-रोटी खाने को दिया। वह उसे इतना अधिक स्वादिष्ट लगा कि उसने उस भोजन का नाम अपनी सास से पूछ लिया। उसने घर पर भी ऐसा ही खाना खाने का निश्चय किया। वह "पियाज-रोटी", "पियाज-रोटी" रटता हुआ घर की ओर चल दिया। एक स्थान पर गड्ढा था, जहाँ आकर वह उसे भूल गया। वह उस गड्ढे में इस शब्द को ढूँढने लगा। एक राहगीर ने समझा कि कोई कीमती चीज खो गयी है। उसने भी उसके साथ ही खोजना शुरू किया। इसी बीच उस पान के मुँह से प्याज की गन्ध पाकर उसने पूछा दिया-"क्या आज प्याज-रोटी खाये हो!" इतना कहना था कि वह पान बोल उठा -"पियाज-रोटी। मुझे मिल गया" और ऐसा कहता हुआ घर की ओर तेजी से भाग खड़ा हुआ।*2

इस कहानी में पान जाति के लोगों पर गहरा व्यंग्य है। उनकी विपन्नता एवं बेवकूफी को इस कहानी में प्रस्तुत किया गया है।

जाति कथाओं के साथ-साथ "हो" समाज में गोत्र कथाएँ भी प्रचलित हैं विभिन्न गोत्रों की उत्पत्ति किसी-न-किसी घटना से जुड़ी हुई है। इन कथाओं का

---

*1 मैन इन इण्डिया (पत्रिका) – वॉल्यूम १-संख्या २, जून १९२१, पृ. ४६-५०

*2 मैन इन इण्डिया (पत्रिका) – वॉल्यूम १-संख्या २, जून १९२१ – ले. एवं सम्पादक – श्री एस. सी. राय, पृ. ५०-५२

अध्ययन एवं विश्लेषण "सामाजिक मिथ" शीर्षक भाग में प्रस्तुत किया गया है।

गोत्र कथाओं के अनुसार गोत्र प्रतीक कोई प्राकृतिक वस्तु या जीव होता है, जो उस गोत्र के किसी पूर्वज के जीवन या जन्म में सहायक एवं मंगलकारी होता है। गोत्र-प्रतीक की पवित्रता "हो" समाज में सर्वमान्य है। अब नये युग के नवयुवक इसको उतना अधिक महत्त्व नहीं देते।

विभिन्न कथाओं के अवलोकन से प्रतीत होता है कि आदिकाल अथवा जब "हो" लोग सिंहभूम (कोल्हान) में प्रविष्ट हुए और वन्य जीवन व्यतीत करने लगे, उसी काल में अधिकांश गोत्रों का नामकरण हुआ। वन में घूमते समय एक लड़का (लुगुन) तसर खोजने में खो गया और तसर पाने के बाद वह अपरिचित लोगों के बीच में चला गया। उसका गोत्र "लुगुन" हो गया।[*1]

इसी प्रकार एक माँ जब वन में एक बच्चे को जन्म दे रही थी, तो देवगाम पक्षी "हड्देवगम" बोल उठा। उस बच्चे का गोत्र नाम "देवगम" हो गया।[*2]

एक "हो" परिवार वन में प्यास से त्रस्त था पर पानी नहीं मिला। उन लोगों ने "जामुन" (कुदादा) का रस पीकर प्राण-रक्षा की। अतः उनक गोत्र कुदादा हुआ।[*3]

एक स्त्री ने वन में तीन बच्चों को जन्म दिया। प्यास से उसकी हालत खराब थी। अन्त में एक झरना मिला, जिससे उसकी तृष मिटी। उसने कृतज्ञतावश अपने एक लड़के को गोत्र "जामुदा" रखा जिसका अर्थ झरना होता है।[*4]

(ख) पशु कथा – "हो" लोककथाओं में पशु एवं पक्षी कथाओं का बाहुल्य है। ये पशु-पक्षी मनुष्य की तरह बोलते-व्यवहार करते हैं और विभिन्न प्रकार से मनुष्य की मदद करते हैं। इनमें कुछ ऐसे पशु-पात्र भी हैं जो धूर्तता एवं धोखेबाजी से मनुष्य समाज को कष्ट पहुँचाते हैं। इन पशु कथाओं के माध्यम से "हो" समाज का जीवन, उनके कार्य-कलाप एवं उनकी जीवन-दृष्टि स्पष्टतः परिलक्षित होती हैं। प्रत्येक पशु "नीति कथाओं" के पशु पात्रों की तरह बोलते हैं, कार्य करते हैं और मानव के विभिन्न चारित्रिक विशेषताओं को धारण करते हैं। उनके कार्य एवं व्यवहार में मनुष्य के

*1. ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री डी. एन. मजूमदार, पृ. २०५

*2 ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री डी. एन. मजूमदार, पृ. २०५-२०६

*3 ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री डी. एन. मजूमदार, पृ. २०७

*4 ए ट्राइब इन ट्रांजिशन - श्री डी. एन. मजूमदार, पृ. २०७

चरित्र का स्पष्ट दर्शन हो जाता है। यथा :-

1. एक लोमड़ी और एक भालू – इस कथा में लोमड़ी की धूर्तता एवं भालू की दुष्टता द्रष्टव्य है।

इस कहानी के अनुसार "एक बार एक लोमड़ी अपने नवजात शिशुओं को एक माँद में रखकर शिकार करने गयी थी। इसी बीच एक भालू आया और उसने उस माँद में रहने वाली चीटियों को खाने लगा। उसके तेज नाखून से उस माँद में पड़े लोमड़ी के बच्चे घायल होकर मर गये। जब लोमड़ी वापस आयी तो भालू के कुकृत्य से अवगत होकर उससे बदला लेना तय किया।"

वह लोमड़ी जब रूँग पत्तों से झोला बना रही थी तो भालू आया। उसने भालू को बताया कि वह झोला इसलिये बना रही है क्योंकि एक बड़ा जल प्रलय होने वाला है। वह उसी झोले में सुरक्षित रह सकेगी और प्रलय से बच जायेगी।

इसपर भालू ने भी एक झोले की माँग की। इस पर लोमड़ी तैयार हो गयी। उस झोले में भालू को डाल कर उसका मुँह बन्द कर दिया। उस झोले में पत्थर बाँध कर उसे नदी में फेंक दिया। इस प्रकार भालू डूब कर मर गया और लोमड़ी ने अपना बदला ले लिया।[*1]

2. एक सियार की धूर्तता – सियार अपनी धूर्तता एवं बौद्धिक चातुर्य के लिये पशु जगत् में प्रख्यात है। इस कथा में चातुर्य से एक मनुष्य की प्राण-रक्षा की कथा प्रस्तुत की गयी है –

एक बार एक बाघ किसी पेड़ से दब गया था और निकलने में असमर्थ हो गया था। एक आदमी उस मार्ग से गुजर रहा था। बाघ के अनुनय-विनय एवं उसे (मनुष्य को) न मारने की कसम खाने पर वह आदमी उसे पेड़ के नीचे से निकाल दिया। जब बाघ मुक्त हो गया तो उसने उस आदमी को खाने की इच्छा व्यक्त की। उस आदमी ने अनुरोध किया कि खाने के पूर्व एक तीसरे पक्ष से पूछ लिया जाये। बाघ इस पर राजी हो गया। आदमी ने बैल से इसका इन्साफ करने को कहा। बैल मनुष्य द्वारा उत्पीड़ित किया गया था, अतः वह बाघ के पक्ष में विचार व्यक्त किया।

इस पर वह आदमी पुनः दूसरे पक्ष से इस संबंध में मध्यस्थता करने का अनुरोध किया। इस बार सियार मिला। बहुत समझाने-बुझाने पर वह पूरी घटना सुनने

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - सितम्बर, १९९८ वॉल्यूम ४, लेखक - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३२७-३२८

को तैयार हुआ। उसने अंत में बाघ से कहा कि तुम मुझे उस विचित्र स्थिति को फिर से करके दिखाओ तो मैं अपनी राय दूँगा।

बाघ पूर्ववत् पेड़ के नीचे चला गया और आदमी ने उस पेड़ को उसके ऊपर रख दिया। बाघ जब दब गया तो सियार ने उस आदमी को उस बाघ को लाठी से खत्म करने का इशारा किया। उस आदमी ने बाघ को मार डाला।[*1]

इसमें यह नीति अभीष्ट है कि मनुष्य को अपने शत्रु (मनुष्यभक्षी) से हमेशा अलग रहना चाहिए और उस पर विश्वास नहीं करना चाहिए।

इस कथा से मिलती-जुलती कथा "एक सियार का कलापूर्ण छल (कपट) शीर्षक कहानी में परिलक्षित है। उक्त कथा का पात्र एक "सर्प" है जो अपने रक्षक भिखारी को खा जाना चाहता है। इसमें भी एक लोमड़ी उसकी प्राणरक्षा करती है। इस कथा में भी पंच के रूप में बूढ़ा बैल एवं भेंड़ी ने मनुष्य जाति को अपना प्रत्पीड़क बताते हुए उस भिखारी के विपक्ष में अपनी राय दी थी। इस कथा एवं उपर्युक्त कथा में यह नीति दर्शायी गयी है कि मनुष्य को भी अन्य पालतू पशुओं के प्रति दयावान होना चाहिये।

3. दो सियार, एक बाघ और एक बन्दर की कथा – पशुलोक में सियार एक चतुर, धूर्त एवं आलसी पशु के रूप में माना जाता है। बाघ वीरता एवं मोटी बुद्धि का प्रतीक है। बन्दर चालबाज एवं नकलची पशु माना जाता है। प्रस्तुत कहानी में इना पशुओं की चारित्रिक विशेषताएँ उभर कर सामने आयी हैं।

एक वन में एक सियार युगल रहते थे। जब मादा सियार को बच्चा जन्म देने का समय आया तो उसने अपने पति से एक अच्छा एवं बड़ा माँद बनाने का अनुरोध किया। इस कार्य को सम्पन्न करने के लिये उसने अपनी पत्नी से भरपूर भोजन की माँग की ताकि वह शरीर से मजबूत होकर वह कठिन कार्य सम्पन्न कर सके। वह बेचारी उसे अच्छा-अच्छा भोजन देती रही और वह माँद बनाने का आश्वासन देता रहा। जब समय निकट आ गया तो वह उस माँद में ले चलने को कहने लगी। सियार उसे लेकर एक बहुत बड़े माँद में चला गया जो बाघ का था। परंतु उसे अपना नव-निर्मित माँद बताया। उसकी पत्नी डर गयी कि कहीं कोई बाघ आकर उन्हें निकाल न दे। परंतु वह समझा-बुझा कर वहीं रखा। उसके बंच्चे हुए। इसी बीच वह बाघ आता दिखायी पड़ा,

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - सितम्बर, १९६८ वॉल्यूम ४, लेखक - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३२४-३२५

जिसकी गुफा थी। मादा सियार ने पति से उसकी रक्षा का उपाय करने को कहा। पर वह असमर्थ रहा। अन्त में उसे एक उपाय सूक्ष गया। उसने अपने बच्चों को रुलाना शुरू किया। जब बाघ दरवाजा पर आ गया तो मादा सियार ने बच्चों को डाँटकर कहा-''तुम लालची बच्चे, अभी तुमलोगों को सात बाघ का जिगर खिलायी हूँ। फिर भी तुम्हारा पेट नहीं भरा। एक बाघ आया है, जोर से मत चिल्लाओ नहीं तो भाग जायगा।'' बाघ यह सुनकर भयभीत हो गया और भाग गया।[*1]

बाघ को रास्ते में एक बन्दर मिला जिससे बाघ ने पूरी घटना सुनायी। बन्दर ने बाघ को अपने साथ गुफा में निर्भय होकर चलने को कहा। उसने अपनी पूछ बाघ की पूँछ में बाँध दी। जब दोनों उस गुफा के सामने पहुँचे तो मादा सियार ने बन्दर को डाँटते हुए कहा-''तुम काहिल बन्दर! मैंने तुम्हें सात बाघ लाने के लिये कहा था और तुम केवल एक लाये, मैं तुम्हें नौकरी से निकाल दूँगी।''

इतना सुनना था कि बन्दर को घसीटता हुआ बाघ भाग गया। कुछ दूर जाने पर खरोंच और चोट लगने के बाद बन्दर की पूँछ मुक्त हो गयी।

अब बन्दर और बाघ दुश्मन हो गये और एक दूसरे से बदला लेने का अवसर ढूँढ़ने लगे। बन्दर एक बार ''सोसो'' (भेलवा) का बीज फोड़ते हुए बाघ से मिल गया। बन्दर ने बताया कि वह अपने खरोंच से हुए जख्म की दवा तैयार कर रहा है। बाघ ने भी उस दवा की याचना की। बन्दर ने उसे यथेष्ट मात्रा में दे दिया। जब बाघ उस ''सोसो'' तेल को जख्म पर रगड़ने लगा तो उसकी जलन से चिघ्घाड़ उठा। तब तक बन्दर गायब हो चुका था। बाघ उसे पकड़कर मारने का अवसर ढूँढ़ने लगा। परंतु अन्य अवसरों पर भी अपनी मूर्खता एवं बन्दर की चातुरी के कारण वह सफल नहीं हो सका। एक बार मधुमक्खी के छत्ता को ''माँदल'' समझकर बजाने पर मधुमक्खी के दंश से उत्पीड़ित हुआ तो एक अन्य अवसर पर उसने बाघ को पेड़ की डाल पर बैठाकर सूखी पत्तियों में आग लगाकर उसे जला कर मार डाला।[*2]

इस कथा से यह स्पष्ट होता है कि सियार एवं बन्दर बाघ की अपेक्षा अधिक चतुर होते हैं और बाघ शक्तिशाली होकर भी बेवकूफ और अविवेकी होता है। बाघ

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - सितम्बर, १६६८ वॉल्यूम ४, लेखक - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३२६-३२७

*2 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - सितम्बर, १६६८ वॉल्यूम ४, लेखक - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३३६-३४२

सामन्तवादी प्रवृत्ति का भी प्रतीक है। उसमें व्यावहारिक बुद्धि का अभाव रहता है।

4. सियार और घड़ियाल की कथा – इस कथा में सियार को एक चतुर एवं धूर्त पशु के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वह एक सुविधा भोगी वर्ग का पशु माना जाता है। सामान्यतः सियार स्वयं शिकार करने का कष्ट नहीं करता वरन् शेर के मारे हुए शिकार के अवशेष को ही छिपकर अपना आहार बनाता है। सियार एक धोखेबाज दोस्त के रूप में भी इस कथा में चित्रित है, जो अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये ही दोस्ती करता है।

एक सियार नदी के उस पार जाकर वट वृक्ष के पके फलों को खाने की योजना बनाकर नदी के किनारे आया। परंतु नदी में काफी पानी था। तभी एक घड़ियाल दिखायी पड़ा, जिसने सियार से उसकी समस्या जाननी चाही। सियार ने कहा कि उसके गाँव वाले उसे "ससनदिरि (श्मशान का पत्थर) लाने के लिये नदीपार जाने का आदेश दिये हैं। इस तरह बदले में कई बकरों का उपहार देने का वचन दिया है।" उसने घड़ियाल को भी उन बकरों के मांस को देने का आश्वासन दिया। सीधा-सादा घड़ियाल तैयार हो गया और कोई-न-कोई बहाना बनाकर सियार प्रतिदिन उसके पीठ पर बैठकर नदी पार जाकर मीठा-मीठा पका हुआ वट वृक्ष का फल खा जाता।

अन्त में सियार ने देखा कि अब कोई बहाना नहीं चलेगा तो उसने घड़ियाल को धोखा देने का एक नया तरीका खोज निकाला। उसने नदी किनारे सफेद-सफेद पत्थर जमा करके उन्हें आग में गर्म किया और उन्हें चर्बी बताकर घड़ियाल के मुँह में डाल दिया, जिससे घड़ियाल का मुँह जल गया और सियार भाग खड़ा हुआ।

अब घड़ियाल सियार को मारने का अवसर ढूँढ़ने लगा। एक बार नदी के किनारे सियार जब पानी पीने लगा तो घड़ियाल ने उसे पकड़ने के लिये पीछा किया। पर वह बच गया।

अन्तिम प्रयास में घड़ियाल एक खलिहान में गोंदली के पुआल के नीचे छिप कर बैठ गया। इस बार सियार एक घंटी गले में लगाकर खलिहान में आया। घड़ियाल ने उसे बकरी समझा। पर सियार को जब घड़ियाल की उपस्थिति मालूम हुई, उसने पुआल में आग लगा दी। घड़ियाल की पीठ जल गयी और वह नदी में भागकर अपनी जान बचायी। इस प्रकार सियार ने घड़ियाल को बेवकूफ भी बनाया और उसे क्षति भी पहुँचायी।*1

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - सितम्बर, १६६८ वॉल्यूम ४, लेखक - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. २७१-२७३

5. लोमड़ी और हलवाहा (तुयु ओण्डो सीतानी) – इस कहानी में भी लोमड़ी की चतुराई और धूर्तता का विवरण प्रस्तुत किया गया है। इस कथा में लोमड़ी को गाँव के निवासियों से भी अधिक चतुर बताया गया है। इस कथा में यह भी वर्णित है कि आदिकाल में पशु मानव की बोली बोला करते थे, जो लोक-विश्वास मात्र है। इसमें चतुर होने के साथ-साथ लोमड़ी को "मुर्ख" भी साबित किया गया है।

इस कहानी के अनुसार एक लोमड़ी एक किसान के पास चूहा खाने के विचार से गया। जब उसे किसान ने चीटियों के विवर के ऊपर बैठा दिया तो चीटियों ने उसके चूतड़ को खा लिया। जब किसान ने उसे चूहा दिया तो वह लोमड़ी से बच निकला। अब लोमड़ी को अपने गायब हुए चूतड़ का ख्याल आया। उसने एक ढोल बनाने वाले से चमड़े के खाल से अपना चूतड़ बनवा लिया और बदले में उसे प्रतिदिन मुर्गी देने को कहा।

अब वह लोमड़ी प्रतिदिन गाँव में जाकर अपने चूतड़ पर बने ढोल को पीटा करता और कहता कि "सभी सावधान हो जाओ और भाग जाओ। राजा आ रहा है।"

सभी डर कर भाग जाते और वह गाँव की मुर्गियों को पकड़ कर ले जाता। इस प्रकार लोमड़ी ने कई बार चकमा दिया। इसी समय गाँव में एक बूढ़े को उसने मारकर दाँत तोड़ दिया। उसी वृद्ध से इस लोमड़ी की चालबाजी सुनकर गाँव वालों ने उसे फँसाने का एक उपाय किया। एक कपड़ा का पुतला बनाकर गाँव के रास्ते पर रख दिया। जब लोमड़ी गाँव में प्रविष्ट हुई तो उस पुतले को बुढ़िया समझकर रास्ता माँगा। रास्ता नहीं मिलने पर वह गुस्से से उस पुतले पर टूट पड़ा और उसके पैर उसी में फँस गये। तब गाँव वाले आये और उसे मार डाला।[*1]

इस प्रकार लोमड़ी मारा जाता है और धोखाधड़ी एवं चालबाजी का अन्त होता है, जो कहानी का अभिप्राय है।

6. पुटम् होन किङ्रेया कहनी (पंडुक के दो छोटे बच्चों की कथा)– इस कथा में पशुओं की स्वामिभक्ति का एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया गया है। साथ ही, जीव (आत्मा) की अमरता एवं उसका विभिन्न शरीरों में प्रवेश तथा

*1 द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब - डी. एन. मजुमदार, पृ. ३३६-३३८

रूपान्तरण के तथ्य को भी इसमें दर्शाया गया है। इस कथा में एक गरीब लड़के और राजकुमार के संघर्ष की भी कथा उभरी है जिसमें "लिटा" नामक एक गरीब लड़का विजयी होता है। कमजोरों की मदद ईश्वर (सिंगबोंगा) करता है, इस कथ्य को इस कथा में रूपायित किया गया है। यह पशु-पक्षी कथा होकर भी एक परी कथा एवं नीति कथा के रूप में उभरती है।

इस कथा के अनुसार एक पेड़ के कोटर में पंडुक के दो अण्डों से क्रमशः एक से एक लिटा नामक बालक का एवं दूसरे से एक सुन्दर साँढ़ का जन्म हुआ। दोनों एक साथ रहते थे। लिटा हमेशा राजकुमार के साथ खेलता और राजकुमार लिटा के साँढ़ को बाजी में जीत जाना चाहता था। परंतु हर बाजी लिटा जीत जाता। अन्त में राजकुमार ने लिटा के साँढ़ को तोप से लड़ाने का प्रस्ताव रखा। इस पर साँढ़ ने लिटा से कहा - "तोप से युद्ध में इस बार मैं नहीं जीत सकता। परंतु जब मैं मर जाऊँ तो तुम मेरी दोनों आँखें, चारों पैर और पूँछ ले लेना और उन्हें अपनी ड्योढ़ी में गाड़ देना।........."

अन्ततः साँढ़ तोप से लड़ा और मारा गया। लिटा ने उसके विभिन्न अंगों को यथास्थान गाड़ दिया। इसके बाद राजकुमार ने लिटा का जीता हुआ आधा राज्य छीन लेना चाहा। इसी बीच साँढ़ के दोनों पैरों के पास से दो-दो कुत्ते, दो काली मधुमक्खियाँ, दोनों आँखों के स्थान से तथा पूँछ वाले स्थान से एक चाबुक निकल आये।

लिटा को खरहा का दूध लाने के लिये राजकुमार ने कहा। वह इन कुत्तों-मधुमक्खियों और चाबुक की मदद से खरहा का दूध ले आया। पुनः राजकुमार उससे बाघिन का दूध लाने को कहा। लिटा वह भी ले आया।

तब राजकुमार ने लिटा से युद्ध करने का प्रस्ताव रखा। लिटा के साथ उसके कुत्ते, बाघिन, खरगोश, मधुमक्खियाँ एवं चाबुक - यही सेना और शास्त्र के रूप में थे। अन्ततः लिटा जीत गया। तब बाघ उसका मन्त्री बना और अन्य उसके सेवक बने। लिटा ने राजा की लड़की से शादी की और वह सुखपूर्वक रहने लगा।[*1]

7. चिकाते तानिको होकरे काको जो–जोमा (किस प्रकार जंगली कुत्ते ने मनुष्य को नहीं खाया) – इस कथा से यह परिलक्षित होता है कि पशु कितना भी समर्थ और चतुर हो जाय, वह मनुष्य की तरह समर्थ और बुद्धिमान्

*1 द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब - डी. एन. मजुमदार, पृ. ३४२-३४६

नहीं हो सकता। पशुओं में पशुता अन्त तक बनी रहती है। पशु मनुष्य की नकल कर सकता है। पर नकल कर वह मनुष्य के मौलिक गुणों को नहीं प्राप्त कर सकता।

इस कथा के पात्र जंगली कुत्ते हैं। एक बार जंगली कुत्तों ने मनुष्य को सड़क के किनारे (फुटपाथ) पर चलते देखा। आदमी के पैर से बने फुटपाथ को देखकर कुत्तों ने चूतड़ से रगड़-रगड़ कर सड़क के किनारे "फुटपाथ" बनाना चाहा पर नहीं बन सका और वे हार मान गये।

कुछ दिनों के बाद जंगली कुत्तों ने कुछ लोगों को "ससन दिरि" (श्मशान का पत्थर) बैलगाड़ी पर लाद कर लाते देखा। उनलोगों (कुत्तों) ने भी ऐसा ही करना चाहा। परंतु पत्थर उठाते समय ही पत्थर के गिर जाने से कई जंगली कुत्ते दब कर मर गये। अन्ततः उन्होंने यही निष्कर्ष निकाला कि वे मनुष्य की बराबरी नहीं कर सकते और उसी समय से उन्होंने मनुष्य को नहीं खाने का संकल्प लिया।*1

8. बुइदू बुढ़ा ओन्डो चुटुरेया कहनी (बुइदू बूढ़ा और चूहा की कथा) – पशुओं में स्वामीभक्ति अधिक होती है। यदि मनुष्य किसी पशु को पालतु बनाता है और उसकी रक्षा करता है तो वह (पशु) भी मनुष्य को समय आने पर जान बचाता है। चाहे वह पशु बड़ा हो या छोटा, वह समान रूप से उपयोगी सिद्ध होता है। इस कथा में चूहा एक छोटा जीव होते हुए भी सही समय पर सही सूचना देने का काम करता है। साथ ही पशु कितना भी चालाक हो जाय, मनुष्य की बराबरी नहीं कर सकता। लोमड़ी पशुओं में सबसे चालाक और धूर्त जानवर माना जाता है। परंतु वह भी मनुष्य की चालाकी से बेवकूफ बनकर रह जाता है।

पुराने जमाने में बुइदु नामक एक किसान खेत में हल चला रहा था तो उसे वहाँ एक चूहा मिला। उसने चूहे को मार देना चाहा। परंतु चूहे ने कहा कि नहीं मारने पर हम उसे (बुइदु को) गुप्त बाते बताते रहेंगे। बुइदु उसे गमछे के एक छोर में बाँधकर घर ले आया। जब उसने उसे एक मुट्ठी धान खाने को दिया तो वह बोला-"आज तुम्हारे घर में लोमड़ियाँ मुर्गियों को खाने के लिये आयेंगी। तुम अपना हँसुआ लेकर छिप जाओ और जब वे आवें तो हँसुआ से हमला कर दो।"

चूहे की बात सत्य निकली। जैसे ही लोमड़ियाँ घर में घुसीं, बुइदु ने हँसुआ

*1 द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब – डी. एन. मजुमदार, पृ. ३४८-३४६

चला दिया और एक लोमड़ी की पूँछ कट गयी। सभी लोमड़ी भाग गई।

दूसरे दिन पुनः लोमड़ियों ने बुइदु का बकरा चुराने का प्रयास किया। इसकी सूचना भी चूहे ने दे दी थी। दूसरे दिन भी बुइदु ने छिप कर उन्हें मार भगाया।

एक दिन इनलोगों ने बुइदु की बाड़ी में कोंहड़ा चुराने की योजना बनायी। चूहे ने इसकी सूचना दी। बुइदु कई कोंहड़ा पकाकर खा गया और कोंहड़ा मचान पर रखकर ऊपर झाड़ी में छिप गया। जब लोमड़ियाँ नीचे की ओर आयीं तो बुइदु ने ऊपर से पखाना कर दिया। लोमड़ियाँ पहले उसे अधिक पका हुआ कोंहड़ा समझ कर खाने लगी। परंतु बाद में पता चला कि वह पाखाना है तो छोड़कर भाग चली।

अन्ततः लोमड़ियों ने यह तय किया कि वे बुइदु को "काला जादू" से मार डालेंगी। यह बात भी चूहे ने बूढ़े को बता दिया और बूढ़ा के मर जाने का स्वांग किया और लोमड़ियों को भोज में आमंत्रित किया। जब वे खाने के समय झगड़ने लगी तो उन्हें एक-दूसरे से अलग रहने के लिये अलग-अलग रस्सी से बाँध दिया। अन्ततः छिपा हुआ बुइदु बूढ़ा निकला और सभी लोमड़ियों को मार डाला।*1

इस कथा से यह परिलक्षित होता है कि छोटा जीव भी कभी-कभी बहुत अधिक उपयोगी सिद्ध होता है और इस कारण उसे हेय समझकर नहीं छोड़ना चाहिये।

"मुण्डा" जनजाति में भी इससे मिलती-जुलती कथा प्रचलित है। उसका मानव पात्र "पुयतु" बूढ़ा है। केवल घटनाक्रम में कुछ परिवर्तन हो गया। सियारों की चालाकी, उनकी मूढ़ता एवं उनका अन्त प्रायः एक-सा है। इस कथा में "चूहा" को नहीं रखा गया है।*2

(ग) नीति कथा – "हो" लोगों में बहुत-सी ऐसी लोक-कथाएँ प्रचलित हैं जिनमें नीति एवं उपदेशात्मक सन्देश भरे हुए हैं। बुरे का फल बुरा होता है और दूसरे को नुकसान पहुँचाने वाला भी स्वयं नुकसान उठाता है। अच्छे कर्म का फल अन्ततः अच्छा होता है। भले ही ऐसा कर्म करने वाले को प्रारम्भ में कुछ कष्ट उठाने पड़े। "हितोपदेश" अथवा "इशप की कथाओं" की तरह "हो" लोककथाओं में भी कहीं-कहीं पशु-पात्रों के माध्यम से किसी नीति या उपदेश को अप्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत

---

*1 द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब - डी. एन. मजुमदार, पृ. ३२५-३२८

*2 मुण्डा लोक कथाएँ - श्री जगदीश त्रिगुणायत, पृ. ४८६-४६१

किया गया है।

1. एव नवयुवती की कथा – इस कथा में दुष्ट भाभी और अच्छी ननद का चित्रण किया गया है। एक युवती की शादी होने वाली थी। उस अवसर पर उसकी भाभी ने उसे जंगल से दोना एवं पत्तल बनाने हेतु "रूँग" का पत्ता लाने के लिये भेजा। वह जब पत्ता जंगल से ले आयी तो उसे अपर्याप्त बता पुनः जंगल भेज दिया।

जंगल में रात होने पर उसकी मुलाकात एक बड़े बाघ से हो गयी जो उसकी रक्षा के लिये उसे अपनी गुफा में ले गया। वहाँ उसने अन्य बाघों को भाई मानकर उन्हें गीत सुनाकर प्रसन्न कर दिया। उन बाघों ने उसका काफी स्वागत-सत्कार किया। उनलोगों ने कई दिन बाद उसे आभूषण, वस्त्र आदि देकर टोकरी में चावल एवं डियंग के साथ विदा की और दो बाघ उसे घर तक छोड़ने आये।

उसे इतने सामान के साथ आते देखकर उसकी भाभी ने उसे बहुत डाँटा-फटकारा। उसे उससे काफी ईर्ष्या हुई। पर पूरी कथा सुनने के बाद वह भी जंगल में जाकर बड़े बाघ से मिली। वह उसे अपनी गुफा में ले गया। परंतु उसके व्यंगात्मक गीत ने बाघों को नाराज कर दिया और वे उसकी खोपड़ी को नोचकर उसपर एक कांसा का कटोरा रखकर उसे वापस कर दिया।[*1]

इस प्रकार उस दुष्ट भाभी को अपनी दुष्टता का पुरस्कार मिल गया।

2. कुम्हार के लड़के की कथा – इस कथा में पशुओं में (हिंस्त्र पशुओं में) भी वात्सल्यभाव की प्रचुरता दर्शायी गयी है। साथ ही "हिंसा" के उदय से नाश होता है, यह भी सिद्ध किया गया है। जालसाजी और धोखाधड़ी को अधिक दिन तक छिपाया नहीं जा सकता और अन्त में सत्य की विजय होती है। इन तथ्यों का निरूपण इस कथा में किया गया है।

ऐसा कहा जाता है कि एक कुम्हार की स्त्री अपने नवजात शिशु को सघन वन में छोड़कर चली गयी। वह शिशु एक बाघ युगल को मिल गया। बाघिन उसे अपनी गुफा में ले आयी और उसका लालन-पालन करने लगी। बड़ा होने पर वह एक बहादुर तीरंदाज निकला। उसके व्याघ्र माता-पिता उसकी सभी जरूरतों की पूर्ति करते थे।

---

*2 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - सितम्बर, १६६८ वॉल्यूम ४, लेखक - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३२६-३३१

जब वह युवक हो गया तो उसके लिये बाघिन एक राजकुमारी को पकड़कर ले आयी और वह कुम्हार के लड़के की पत्नी बन गयी। कुछ दिनों के बाद बाघ ने दोनों को मारकर खाने की योजना बनायी और अपने सभी साथिओं को इस भोज के लिये आमंत्रित किया। इसकी सूचना उसकी बाघिन धातृ ने उसे दे दी। कुम्हार के लड़के ने अपनी राजकुमारी पत्नी को एक ऊँचे पेड़ पर चढ़ा दिया और स्वयं तीर-धनुष लेकर एक पेड़ की डाल पर बैठ गया। जब सैकड़ों बाघ उन्हें खाने के लिये उस पेड़ के नीचे एकत्रित हुए तो कुम्हार के लड़के ने सभी को तीर का निशाना बनाकर समाप्त कर दिया।

अब राजकुमारी उसे अपने महल में ले चलने को आतुर हो गयी। दोनों उस बाँध के पास आ गये जहाँ से राजकुमारी को बाघिन उठा ले गयी थी। जब राजा को उनके आगमन का पता चला तो उन्होंने उन दोनों को नया वस्त्र भिजवाया और कुम्हार के लड़के को सफाई के लिये एक नाई को भेजा। नाई ने धोखे से कुम्हार के लड़के का गला काट कर उस बाँध के पास फेंक दिया और स्वयं उसका वस्त्र धारण कर राजकुमारी के साथ महल में चला गया।

बाद में कुम्हार के लड़के ने एक मछली के पेट से दुबारा जन्म लिया और पुनः एक चरवाहा के रूप में महल में आ गया। इस बीच नाई के नकली रूप का पता चल गया। अन्ततः उसने एक तीरन्दाजी में कदम के फल को एक ही तीर से गिरा दिया। राजा ने यही शर्त लगायी थी कि जो कदम के फल को एक ही तीर से गिरा देगा, वह मेरा दामाद होगा और उसे आधा राज्य मिलेगा। "नाई" ऐसा करने में असमर्थ रहा और कुम्हार का लड़का दूसरे जन्म में भी अपनी तीरन्दाजी नहीं भूला। अन्ततः राजकुमारी के असली पति की पहचान हो गयी और नाई को कुएँ में ढकेलकर मार डाला गया। कुम्हार का लड़का राजकुमारी के साथ आधा राज्य प्राप्त कर सुख से रहने लगा।[*1]

3. जंगली भैंसों का पालतू होना – यह कथा एक ऐसे विपन्न चरवाहा की है जो भूमिहीन और साधनहीन होते हुए भी अपनी लगन और कर्मठता से एक सम्पन्न व्यक्ति बन गया। उसने वन में रहनेवाली भैंसों को पालतू बनाया। वह चरवाहा से राजकुमारी का पति बन गया, इसके पीछे उसकी कर्मठता ही प्रधान रही।

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - सितम्बर, १६६८ वॉल्यूम ४, लेखक - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३३१-३३६

एक गरीब चरवाहा ने भूमिहीन और साधनहीन होते हुए भी मामूली हल बनाकर बकरों की मदद से वन में कुछ बंजर जमीन को जोतकर खेत बनाया तथा किसानों द्वारा फेंके गये "खखड़ी धान" (पेटेग बाबा) को बुन दिया। धान के पौधे काफी तेजी से बढ़े और कुछ दिनों में धान पककर तैयार हो गया। वह चरवाहा उसे काटने ही वाला था कि रात में जंगली भैंसें द्वारा नष्ट किये गये धान को देखकर बहुत क्षुब्ध हुआ और जंगली भैंसों को मारने के लिये तीर-धनुष लेकर निकल पड़ा। वह अपने साथ कुछ मकई का भूजा और एक सारंगी भी लेता गया था।

काफी घने जंगल में जाने के बाद उसे एक ऐसा स्थान मिला जहाँ भैंसों के पाड़े चर रहे थे। वह जमीन गोबर से भरी हुई थी, जिसे चरवाहा ने साफ कर दी। वह वहीं पेड़ के नीचे एक खोंढ़र में छिप गया। इसी बीच भैंसे आ गयीं और अपने विश्राम-स्थल को साफ-सुथरा देखकर आश्चर्यचकित रह गयीं। भैंसों ने इसका पता लगाने के लिये कि वहाँ कौन आकर भूमि साफ कर गया, इसका भार पहले एक पाड़ी पर और बाद में एक नर-भैंसा को सौंपा। पर वे पता नहीं लगा सके। अन्त में एक कानी भैंस को यह कार्य सौंपा गया। वह उस चरवाहे का पता लगाने में सफल हो गयी। जब भैंसों के सरदार को यह मालूम हुआ तो खोढ़र के पास आकर उस चरवाहे को अपने साथ रह कर उसकी देख-रेख करने का आग्रह किया। चरवाहा उनके साथ सुखपूर्वक रहने लगा। जब वह सारंगी बजाता जंगली भैंसे दौड़ी चली आतीं। भैंसों की मदद से उसे वस्त्र, खाद्यान्न, बर्तन आदि मिल जाते।

एक दिन जब वह अपना केश साफ कर रहा था तो उसके केश का एक लम्बा गुच्छा टुट कर पानी में गिर पड़ा। उसने उस केश-गुच्छा को डुमर के फल में रखकर नदी में छोड़ दिया। उसी समय एक राजकुमारी नदी के दूसरी ओर स्नान कर रही थी। उसे डुमर का फल मिला तो उसमें सुन्दर लम्बे बालों को देखकर बहुत प्रभावित हुई और उस लम्बे केश वाले लड़के से शादी करने का प्रण कर बैठी। जब राजा को यह मालूम हुआ तो उन्होंने अपने सिपाहियों को उस युवक को लाने के लिये भेज दिया। परंतु वह युवक तो बनैले भैंसों के बीच रहता था। वे भैंसों के भय से उसके निकट नहीं जा सके। परंतु एक कौवा उनकी मदद करने को तैयार हो गया। वह मौका पाकर उस लड़के की सारंगी उठा ले गया और उसे राजमहल में ले जाकर रख दिया। वह चरवाहा कोवा के पीछे-पीछे राजमहल के पास गया कि पहरेदारों ने उसे पकड़ लिया। उसे राजा के पास लाया गया और राजा के समक्ष उसने राजकुमारी से शादी करने का वचन दे दिया। परंतु

उसने एक शर्त रखी कि राजमहल के प्रांगण में एक ऊँचा मंच बनाया जाय और बहुत ही मजबूत रस्सी को खूँटों से बाँध कर रखा जाय। जब ऐसा हो गया तो मंच पर चढ़कर उसने सांरगी बजाना शुरू कर दिया। सारंगी की आवाज सुनते ही जंगली भैंसों का झुण्ड राजमहल के प्रांगण में आ गया और उसने पर्याप्त संख्या में भैंसों को रस्सी में बाँध दिया। कुछ जंगल की ओर भाग गयीं। जो भैसें वहाँ रह गयीं वे पालतू हो गयीं। इस प्रकार वह चरवाहा उतने भैंसों का और उस राज्य का मालिक बनकर सुखी जीवन बिताने लगा।[*1]

4. दुष्ट रानी की कथा – इस लोक कहानी में यह दर्शाया है कि व्यक्ति की दुष्टता कभी छिपती नहीं और दुष्टता का फल भी बुरा होता है। इसमें एक राजा की सबसे छोटी रानी की दुष्टता एवं उससे उत्पन्न संतान में उसके दुष्ट स्वभाव का प्रतिरोपण किया गया है। इसमें यह लोक विश्वास भी उभर कर सामने आया है कि सन्तानोत्पत्ति के लिये किसी फल (अभिमन्त्रित अथवा आशीर्वादयुक्त) का नियमानुसार खाना फलदायक होता है।

इस कथा के नायक राजा की सात रानियाँ थीं और सभी निःसंतान थीं। राजा की पूजा से प्रसन्न होकर मराङ् बोंगा (ईश्वर) ने उसे यह आशीर्वाद दिया कि वह सात आम इस प्रकार तोड़े कि वे जमीन पर नहीं गिरें और प्रत्येक रानी को एक-एक आम खाने के लिये दे दें। राजा ने इसका यथावत् पालन किया। छः रानिया अपना-अपना आम तुरंत खा गयी। परंतु छोटी रानी, जो स्वभाव से दुष्ट थी, आम को बाद में खाने के लिये छोड़ दिया। इसी बीच एक नेवला उस आम का एक हिस्सा खा गया। जब रानी उस आम को खा गयीं तो अन्य रानियों की तरह वह भी गर्भवती हो गयी। परंतु छः रानियों के सुन्दर बच्चे हुए परंतु छोटी रानी के बच्चे का मुँह नेवला जैसा हुआ।[*2]

नेवला दुष्ट स्वभाव का प्रतीक है। छोटी रानी के दुष्ट स्वभाव के कारण एवं उसके फल के रूप में उसका पुत्र नेवला का मुख लिये उत्पन्न हुआ।

5. दुष्ट भाभी का अन्त – "हो" समाज में ननद और भाभी का

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - सितम्बर, १९९८ वॉल्यूम ४, लेखक - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. २५५-२५७

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम ४, भाग-१, मार्च १९२८ - श्री शरतचन्द्र मित्रा, पृ. १३५

सम्बन्ध अच्छा नहीं माना जाता है। प्रायः सभी "हो" लोक-कथाओं से यह परिलक्षित होता है कि भाभी या भाभियाँ अपनी एकलौती ननद के साथ अत्याचार एवं दुर्व्यवहार करती हैं। इसका अन्त कुटिला भाभियों की उनके पतियों द्वारा उनकी हत्या के रूप में होता है। इन कथाओं में भाई-बहन का प्रगाढ़ स्नेह भी परिलक्षित होता है। इस कथा में भी एक दुष्ट भाभी एवं उसका दुःखद अन्त प्रस्तुत किया गया है। किसी की दुष्टता चिरकाल तक नहीं चल पाती और बुरे का अन्त बुरा ही होता है।

इस कहानी में एक ऐसे परिवार की कथा है जिसमें दो भाई और एक बहन है तथा बड़े भाई की पत्नी भी है। बड़े भाई की पत्नी की क्रुरता से ऊबकर छोटा भाई-बहन जंगल में चले जाते हैं और वहाँ उनकी भाभी से भी क्रुर एक बाघ मिल जाता है। वह बाघ उस युवक एवं युवती द्वारा एक बल्ले पर टाँग कर ढोया जाता है और युवक के कन्धे से कँटीले बल्ले के कारण जो रक्त प्रवाहित होता है, उसे वह बाघ चाटता भी जाता है। परंतु जब उसके बड़े भाई को यह संवाद प्रत्यक्षदर्शियों से मिलता है तो वह जाकर बाघ को मारकर अपने भाई-बहन को मुक्त करा लाता है। जब उसे अपनी पत्नी द्वारा उसके भाई-बहन के प्रति किये गये अत्याचार का पता चलता है तो वह अपनी पत्नी की भी हत्या कर देता है। इसके बाद दोनों भाई एवं बहन सुखपूर्वक रहने लगते है।[*1]

इस कथा से यह तथ्य उभरता है कि भाई-बहन के नैसर्गिक-स्नेह का कोई बाहरी तत्त्व विच्छिन्न नहीं कर सकता और अत्याचारी के अत्याचार का अन्त भी अवश्यम्भावी है।

(घ) धूर्त कथा – लोक-जीवन में विभिन्न प्रकार के लोग पाये जाते हैं, जो पात्र बनकर लोक कहानियों में वैसे चरित्र को रूपयित करते हैं। धूर्त पात्र अपनी चालबाजी या जालसाजी से एक सीधे-सादे अथवा अज्ञानी व्यक्ति को ठगता है या धोखा देता है तो वह समय के प्रवाह में स्वयं भी कभी धोखा खाता है तथा अधिक नुकसान उठाता है। धूर्त व्यक्ति की धूर्तता का रहस्य जब खुल जाता है तो उसका सामाजिक या जातीय बहिष्कार होता है। धूर्त की धूर्तता अधिक दिनों तक नहीं चलती। "हो" लोक-कथाओं में धूर्त व्यक्ति के चरित्र पर आधारित अनेक लोक-कहानियाँ हैं, जिनमें

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम १, भाग-२, १६१५ - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. २६५-२६७

कुछ लिखित एवं कुछ मौखिक हैं।

1. एक भाई का प्रतिशेध — इस कहानी में एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो अपने सात भाइयों में सबसे छोटा है और उसके सभी भाई (छः भाई) धूर्त हैं। सबसे छोटे भाई को वे अपनी धूर्तता से विपन्न बनाकर रखना चाहते हैं और स्वयं सम्पन्न होकर रहना चाहते हैं। परंतु छोटा भाई काल-क्रमानुसार उनसे भी अधिक धूर्त बन जाता है और उन छः भाइयों को अन्ततः मृत्यु के मुख में जाना पड़ता है। "शठे शाठ्यम् समाचरेत्" की नीति यहाँ जीवन्त रूप में घटित हुई है।

कथा का नायक - सबसे छोटा भाई चीरूचुटिया है। उसके अन्य सभी छः भाई शादी-शुदा थे। परंतु वह कुँआरा था। जब घर की पैत्रिक सम्पत्ति का बँटवारा हुआ था तो सभी भाइयों ने अच्छी जमीन एवं अच्छे मवेशी एवं अन्य सम्पत्ति आपस में बाँट लिये और चीरूचुटिया को कुछ बंजर जमीन, एक पूँछ कटा बूढ़ा बैल और एक बूढ़ी भैस हिस्से के रूप में दे दिया। इस पर भी उससे जलते थे और ईर्ष्यावश उसकी भैंस को भी मार डाला। चीरूचुटिया ने बिन किसी शिकायत के उस भैंस का चमड़ा लिया और जाते समय जंगल में रूक गया। रात में वह अपने चमड़ा के साथ पेड़ पर बैठा था तभी कुछ चोर उसी पेड़ के नीचे आकर चोरी के कीमती माल का बँटवारा करने लगे। चीरूचुटिया ने ऊपर से भैंस का चमड़ा गिरा दिया और चोर उसे भूत-प्रेत समझ कर भाग खड़े हुए। दूसरे दिन चीरूचुटिया बहुत सारा धन लेकर जब लौटा तो भाइयों ने समझा कि चमड़ा काफी महँगा बिका। चीरूचुटिया ने भी उन्हें ऐसा ही कहा। फलस्वरूप वे अपने अच्छे मवेशियों को मार कर चमड़ा बेचने गये तो उन्हें कुछ नहीं मिला और उनके मवेशी भी मुफ्त में मारे गये।

चीरूचुटिया से प्रतिशोध लेने के लिये उन लोगों ने उसका घर जला दिया। फिर भी चीरूचुटिया कुछ नहीं बोला। वह सभी राख को बोरों में भर कर बैल पर लाद कर चल पड़ा। उस रात कुछ व्यापारी मार्ग में विश्राम कर रहे थे। चीरूचुटिया ने उनसे उसके बोरों की देख-रेख करने को कहा। वे समझ गये कि बोरों में कुछ किमती सामान है। सुबह वे व्यापारी अपने रूपयों की बोरी छोड़कर उसका बोरा उठा ले गये। वह पुनः काफी रूपये लेकर घर लौटा। सभी भाइयों ने राख के बदले इतना अधिक रूपया प्राप्त करने का रहस्य जानना चाहा। चीरू ने राख को काफी महँगे मूल्य पर बेचे जाने की बात बतायी। वे तुरन्त अपने घरों को जला कर राख लेकर धन की लालसा में बेचने गये। पर उनकी राख की बिक्री नहीं हो सकी और वे एक बार पुनः अपनी शठता का बदला पा

गये।

इस बार भाइयों ने चीरू को मौत की सजा देने के लिये एक बक्से में ताला बन्द कर नदी में बहा दिया। नदी की धारा में बहता बक्सा देखकर एक ग्वाले ने उसे निकाला। चीरू ने उस यात्रा को एक "आनन्द यात्रा" बताया। ग्वाला भी इस प्रकार की यात्रा करने पर तैयार हो गया। उसने ग्वाले को बक्से में बन्द कर बहा दिया। इसके बाद उसके सभी मवेशियों को लेकर वापस अपने घर आ गया।

उसे इतना अधिक मवेशियों के साथ आया देखकर भाइयों ने इसका रहस्य जानना चाहा। चीरू ने कहा कि बक्सा जहाँ गया, वहाँ बहुत से मवेशी ऐसे ही उपलब्ध थे जिन्हें (सभी को) मैं अकेला होने के कारण न ला सका। इस पर वे भी इतने अच्छे मवेशियों को पाने के लिये उत्सुक हो उठे। चीरूचुटिया ने सभी छः भाईयों को बक्सों में बन्द कर बहा दिया। इस प्रकार उन्होंने नदी की धारा में जल-समाधि ले ली। अब चीरूचुटिया उनकी छः पत्नियों और पूरी सम्पत्ति का एकमात्र स्वामी हो गया और सुखपूर्वक जीवन बिताने लगा।*1

इस प्रकार इस कथा का अन्त उन छः धूर्त (एवं मूर्ख) भाईयों की मौत के साथ होता है जो आजीवन अपने छोटे भाई को नुकसान पहुँचाते रहे। यह कहानी आंशिक रूप से "मूर्ख" कथा भी है। सभी छः भाई अपनी मूर्खता के कारण ही चीरूचुटिया से परास्त हुए और अपना अन्त स्वयं कर लिया।

2. दो भाईयों का साहसिक कार्य – इस कथा में दो ऐसे भाईयों की धूर्तता भरे कारनामों की कहानी कही गयी है जिनमें एक कुबड़ा है और दूसरा काना। यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि अपंग व्यक्ति अधिक धूर्त होता है। इस कथा में धूर्तता के साथ-साथ मूर्खता का भी उद्घाटन किया गया है।

इस कहानी के पात्र दो भाई हैं - जिनमें एक कुबड़ा और दूसरा काना है। दोनों की माँ काफी वयोवद्ध थी। काना ने गर्म पानी की जगह खौलते पानी से अपनी माँ को स्नान करा दिया। जिसके कारण उसकी मृत्यु हो गयी। मृत्यु का इलजाम अपने ऊपर न लेकर दूसरे पर डालने के लिये उन दोनों ने मृत माँ को एक बैगन के खेत में एक

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम १, भाग-२, १६१५ - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. २६३-२६५

टोकरी में रख दिया और उस खेत वाले को ही हत्यारा घोषित कर दिया। अन्ततः उस खेत वाले को ही बुढ़िया की अन्त्येष्टि और श्राद्ध का खर्च वहन करना पड़ा।

एक दूसरे अवसर पर गाँव वालों की बकरियों को इकट्ठा करने के लिये काना को कूबड़ा ने कहा। काना ने सभी बकरियों को मार कर पेड़ के नीचे इकट्ठा कर दिया। यह जानकर कुबड़ा काना को लेकर जंगल में भाग गया। वहाँ एक बाघ मिला जो उन्हें खा जाना चाहता था। परंतु उन लोगों ने उसे चकमा देकर जब वह सो रहा था, उसकी पूँछ काट दी। बाद में बाघ से एक साँभर का शिकार कराकर दोनों ने मांस प्राप्त किया। रात होने के कारण वे जब मांस लेकर पेड़ के ऊपर सो रहे थे तो सांभर की अतड़ी आदि नीचे सोये एक शिकारी पर गिर पड़ी। वह भाग खड़ा हुआ। दूसरे दिन सुबह उनलोगों ने उस शिकारी का ढोल ले लिया। उस ढोल में छेद कर उन लोगों ने मधुमक्खियों को भर दिया। जब शिकारी उनपर हमला करने आया तो उनलोगों ने ढोल बजाना शुरू किया और ढोल के बजने से मधुमक्खियाँ निकल कर शिकारियों को डंक मारने लगी। शिकारी ने डर कर समझौता कर लिया और उन दोनों को लेकर अपने गाँव आया और वहाँ उनकी शादी अपनी पुत्रियों से कर दी।*1

इस प्रकार दोनों धूर्त परिस्थितिवश अपनी धूर्तता में सफल हो गये।

3. एक राजकुमार का साहसिक कार्य — यह ऐसे राजकुमार की कथा है जो एक "तेली" की धूर्तता का शिकार हो गया। परंतु पशुओं में धूर्त एक सियार की मदद से उसने उस तेली की धूर्तता का पर्दाफाश कर दिया।

इस कथा का नायक राजकुमार अपने माता-पिता से झगड़ा कर एक अन्जान शहर में चला गया। वहाँ एक तेली के घर में उसे रूकना पड़ा। वहाँ तेली के कोल्हू से उस राजकुमार ने अपने घोड़े को बाँध दिया। दूसरे दिन उस तेली ने राजकुमार से कहा कि घोड़ा उसके कोल्हू से पैदा हुआ है। अतः घोड़ा पर उसका स्वामित्व है। राजकुमार ने उसे पंचों के सामने रखा तो उस धूर्त तेली ने कई गवाह खड़ा कर उसे सबित कर दिया कि घोड़ा तेली का है।

अन्ततः निराश होकर राजकुमार चल पड़ा। रास्ते में उसे एक सियार मिला

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम १, भाग-२, १६१५ - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. २६८-२७१

जिसे उसने अपनी व्यथा-कथा सुनायी। सियार उसका गवाह होकर गया और अपनी धूर्तता एवं चातुरी से उसने सिद्ध कर दिया कि कोल्हू का लट्ठा किसी जीवित घोड़ा को जन्म नहीं दे सकता। अन्ततः पंचों ने राजकुमार के पक्ष में फैसला दिया और तेली को उसकी करतूत की सजा मिली।[*1]

"हो" समाज में तेली "दिकू" माना जाता है और धूर्तता का प्रतीक है। इस कहानी में इसी तथ्य का उद्घाटन किया गया है।

(ङ) परी–कथा – "हो" लोक कहानियों में बहुत-सी ऐसी कथाएँ प्रचलित हैं जिनमें काल्पनिक पात्रों, अतिप्राकृतिक तत्त्वों, घटनाओं का वर्णन मिलता है। इन कथाओं में रूप-परिवर्तन, लिंग-परिवर्तन तथा अन्य अतिप्राकृतिक शक्तियों का प्रभाव एवं कृत्य का आविर्भाव विशेष रूप से मिलता है। इन कथाओं में "हो" लोगों का सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन भी रूपायित होता है।

1. छोटी बहन (मिसिहोन) – इस कथा में एक ऐसी लड़की की कथा है, जो सात भाइयों की एकमात्र बहन है। उसके सभी भाई उसे बहुत प्यार करते थे। परंतु उसकी भाभियाँ उसे काफी कष्ट देती थीं। एक बार जब उसके सातों भाई व्यापार के लिये बाहर चले गये तो भाभियों ने उसे सताना शुरू किया और योजना बनाकर उसे विभिन्न प्रकार के असम्भव कार्यों को सम्पन्न करने के लिये आदेश दिया। सर्वप्रथम उसे बिना कुल्हाड़ी के और रस्सी के जंगल से लकड़ी काटकर लाने का आदेश मिला। वह जंगल में जाकर रो रही थी तो लकड़ी उसकी व्यथा कथा सुनकर द्रवित हो गयी और स्वयं टूटकर, चीरकर और बोझा के रूप में बँध गयी। वह लकड़ी लेकर घर आ गयी।

दूसरी बार भाभियों ने उसे साँप का दूध लाने को कहा। वह साँप के पास डरते-डरते गयी। साँप को अपना दुःखड़ा सुनाया तो उसने द्रवित होकर उसे अपना दूध उपलब्ध करा दिया। उसने भाभियों को सर्प का दूध लाकर दिया।

तीसरी बार भाभियों ने उसे शेरनी का दूध लाने को कहा। वह जंगल में जाकर भय से रोने लगी। उस करूण-क्रन्दन को सुनकर शेरनी द्रवित हो उठी और

---

*2 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी – वॉल्यूम ८, भाग-३, १६२२ – श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. १३१-१३२

अपना दूध उसे दे दिया। भाभियों को महान् आश्चर्य हुआ।

अन्तिम बार उन लोगों ने उसे एक सेमल के पेड़ पर चढ़ा दिया और उसे फूल तोड़ने को कहा तथा पेड़ पर चढ़ने की सीढ़ी वहाँ से हटा दी। कई दिनों तक वह पेड़ पर भूखी-प्यासी पड़ी रही। अन्त में वह रो-रो कर अपने भाईयों को गीत के माध्यम से अपनी व्यथा-कथा सुनाकर अपनी रक्षा के लिये बुलाने लगी।

उसका करूण-क्रन्दन उसके भाईयों तक पहुँच गया। वे आकर अपनी बहन को उतार लाये और उन्हें (भाभियों को) कुआँ में ढकेल कर मार डाला। उन्होंने अपनी बहन की शादी कर दी और सुख से रहने लगे।[*1]

2. फूल की परी – यह कथा दो ऐसे भाइयों की है जिनके विपन्न जीवन में एक "फूल की परी" आयी और उनके नीरस जीवन को कुछ दिनों तक सरस एवं सार्थक बनाकर चली गयी। वह परी "गुरूण्डी" फूल में रहती थी और इस रहस्य को कोई नहीं जानता था। जब यह रहस्य गीत गाते समय बड़े भाई ने खोल दिया तो वह परी पुनः उसके गार्हस्थ्य जीवन को छोड़कर अपने वास-स्थल (गुरूण्डी फूल) में वापस चली गयी।

कथा के नायक दो भाई गरीब और विपन्न थे तथा फल-फूल इकट्ठा कर अपना जीवन यापन करते थे। एक दिन पानी लाने के क्रम में उन्हें एक तालाब के किनारे बहुत ही खूबसूरत "गुरूण्डी" (गुलाइची) का पुष्प दिखायी पड़ा। वे उसे तोड़कर घर ले आये। उसी पुष्प में एक सुन्दर परी रहती थी। वह परी उनके चले जाने कर उनका खाना बनाकर रखती थी। एक दिन छोटा भाई ने छिपकर उस अतिसुन्दरी परी को देख लिया और उसे पकड़ लिया। अन्त में उसके बड़े भाई ने उससे शादी कर ली। कुछ दिनों बाद वह गर्भवती हो गयी और उससे एक लड़का हुआ। दोनों भाई सुखी जीवन बिताने लगे। इसी बीच एक दिन जब वह बच्चे को घुटनों पर नचा रहा था तो एक गीत गाने लगा –

"गुरूण्डी के सुन्दर फूल से पैदा हुए
ऐ मेरे प्रिय शिशुः
शरीर अभी भी सुगंध भरा है

---

*1 आदिवासी विशेषांक : १३ अक्टूबर, १६७६ – श्री योगेन्द्र मुनि, पृ. ३३

उस मधुर फूल की कली–सा।''

यह गीत ''हो'' युवकों के गार्हस्थ्य जीवन के लिये काल सिद्ध हुआ और वह परी पुनः गुरूण्डी फूल में समा गयी। दोनों भाईयों ने गुरुण्डी पेड़ के नीचे जाकर उसे बहुत बुलाया। पर सब व्यर्थ सिद्ध हुआ।*1

रहस्य एवं रोमांच परी कथा की विशेषता है, जो इस आलोच्य कथा में द्रष्टव्य है। परियाँ एक रहस्यमय लोक में निवास करती हैं, यह ''हो'' समाज में भी प्रचलित है। परियाँ इस धरती में आती हैं तो अपने रहस्य को खोलती नहीं है। जैसे ही यह गोपनीयता का रहस्य खुल जाता है वे गायब हो जाती है। ''सोने की परी'' एक मुण्डारी लोक-कथा है जिसमें परी को बेल के फल में और बाद में गुलाइची में बस जाना बताया गया।*2 ''गुलाइची'' का वृक्ष ''हो'' एवं मुण्डा समाज में परियों या पराशक्ति का आवास माना जाता है, ऐसा लोक विश्वास है।

3. गले में चिह्न वाले पण्डुक का जन्म – यह कथा भी पूर्व में विवेचित ''छोटी बहन'' की कथा से मिलती-जुलती है। इस कथा में भी विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों एवं जीवों द्वारा एक लड़की की रक्षा एवं सहायता करने की कथा कही गयी है। इसमें पराशक्ति से रूप परिवर्तन की घटना भी वर्णित है।

एक कुँवारी लड़की के सभी भाई जब व्यापार के लिये बाहर चले गये तो उसकी भाभियों ने उसे अति कठिन एवं दुष्कर कार्य कराकर उसे प्रताड़ित करना शुरू किया। उन लोगों ने उसे छेद वाला घड़ा देकर पानी लाने को भेजा। पुनः बिन रस्सी दिये लकड़ी लाने को कहा। भेलवा का दाग लगा कपड़ा साफ कर लाने का आदेश दिया। इन कामों को करना कठिन था। परंतु उसके दुःख और करुण-क्रन्दन से द्रवित होकर क्रमशः मेढक, सर्प एवं बगुला ने मदद की। तब वह घड़े में पानी, वन से लकड़ी और ''भेलवा'' का दाग छुड़ा पाने में समर्थ हो सकी। अन्त में उसकी भाभियों ने उसे एक सेमल के वृक्ष में चढ़ा दिया। वहाँ वह रो–रोकर अपने भाइयों को बुलाने लगी –

''रङ् रङ् के दामार कौन,
कतो दूरे रे दादा बारदा बेपारी।''

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी – वॉल्यूम ४, १९१८ – श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३३७–३३६

*2 मुण्डा लोक कथाएँ – श्री जगदीश त्रिगुणायत, पृ. २३६–२७१

भाइयों ने उसका करुण-क्रन्दन सुना और वे उसे उतारने के लिए सेमल वृक्ष पर चढ़े। परंतु तब तक वह दैवी शक्ति से एक पण्डुकी बन गयी। भाइयों ने उसके गले में एक माला डाल दी। तभी से पण्डुक के गले में हार का चिह्न हो गया।*1

लड़की का पण्डुकी होकर उड़ जाना पारिवारिक कलह और उत्पीड़न से बाध्य होकर किये गये पलायन का प्रतीक है। जहाँ मनुष्य किसी दुर्बल को प्रपीड़ित करतो है, वहाँ प्रकृति एवं प्राकृतिक शक्तियाँ उसकी मदद करती हैं। "हो" समाज में यह विश्वास अत्यन्त प्रबल रूप से आज भी विद्यमान हैं।

4. एक साँभर धातृ — यह एक ऐसे पात्र की कथा है, जिसका पालन-पोषण प्रकृति के प्रांगण में एक पशु (मादा साँभर) द्वारा किया गया। कालक्रमानुसार वह भौतिकवादी जगत् में चला गया और अपनी धातृ का वध कराकर अपने ससुराल में भोजन का आयोजन कराया। परंतु अन्त में उसे पुनः अपने पूर्व जीवन में वापस आना पड़ा। धातृ का मातृत्व उसे पुनः अपने पास खींच लाया। इसमें मानव एवं प्रकृति का आदिकाल से चला आ रहा मौलिक एवं चिरंतन साहचर्य एवं अन्योन्याश्रय सम्बन्ध का उद्घाटन किया गया है।

एक युवक ने वन में ही जन्म लिया था और उसका पालन-पोषण एक मादा साँभर द्वारा किया गया था। वह अपनी धातृ की पीठ पर बैठकर उन्मुक्त घूमा करता था। एक बार वन में गयी एक युवती की दृष्टि उस युवक पर पड़ गयी और इतना मोहित हुई कि घर जाकर अनशन पर बैठी। उसके सात भाई उस युवक की खोज में निकल पड़े। काफी घूमने के बाद वन में उन्हें वह युवक अपनी धातृ साँभर पर बैठा दिखायी दिया। वे आठ दिनों तक उसका पीछा करते रहे। अन्त में युवक अपनी माता का कष्ट को देखते हुए उन लोगों के हाथों में अपने को समर्पित कर दिया। वे उसे अपने घर ले गये और उससे अपनी बहन की शादी कर दी। शादी के बाद उस साँभर को मारकर भोज करने का प्रस्ताव हुआ और वह युवक सात सालों के साथ वन में चला गया। काफी दिनों तक पीछा करने के बाद वह साँभर पकड़ में आयी और उसे मारकर उनलोगों ने भोज किया। परंतु युवक ने अपनी धातृ का मांस नहीं खाया वरन् उसे एक विवर में डाल दिया। सात दिनों के बाद जब अपनी धातृ के कथनानुसार उस विवर के

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम १, भाग-२, १६१५ - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. २५५-२५७

पास गया, जहाँ हड्डियाँ गाड़ी थीं और जैसे ही पैर फैलाकर खड़ा हुआ, वह साँभर पुनः जीवित होकर खड़ी हो गयी और उस युवक को लेकर सघन-वन की ओर पूरे वेग से भाग निकली। इसके सात सालों ने बहुत खोजा, पर वह नहीं मिला।

इस कथा में "साँभर" का भोज "गोत्र-प्रतीक" का भोज बनकर उभरा है।

4. दो बहनों की कथा – यह कथा ऐसी दो बहनों की जीवन गाथा है, जो वन में खो जाती हैं। भाग्यवश एक राजकुमार की पत्नी बन जाती है और दूसरी जंगली पशुओं का ग्रास बन जाती है। परंतु दोनों बहनों का प्रगाढ़ स्नेह उन्हें पुनः मिला देता है। छोटी बहन को "सिंगबोंगा" की मदद से वह जीवित कर देती है और अन्त में दोनों सुखद जीवन बिताती हैं। पुनर्जन्म का लोक-विश्वास एवं प्रेम की अनन्यता इस कथा में उभर कर सामने आयी है।

कथा के अनुसार दो बहनें अपने पिता के साथ एक बार वन में तिरिल फल खाने गयी थीं। वे सघन वन में खो गयीं और अपने पिता से बिछुड़ कर संध्या समय एक पेड़ पर चढ़ गयीं। बड़ी बहन जब पानी की तलाश में निकली तो उसकी एक राजकुमार से मुलाकात हो गयीं। वह उसे अपनी पत्नी बनाकर राजमहल ले गया। परंतु छोटी बहन जब पेड़ से उतरी तो उसे जंगली जानवर खा गये।

काल क्रमानुसार एक चरवाहे ने छोटी बहन की हड्डियों को अपनी सारंगी में जड़ दिया। जब वह सारंगी बजाता तो उससे इतनी करूण और मोहक ध्वनि निकलती कि लोग मुग्ध हो जाते। वह सारंगी लेकर एक बार राजा के महल की ओर चला गया। राज दरबार में उसका संगीत बहुत सराहा गया। परंतु राजकुमारी (बड़ी बहन) सारंगी के इस गीत को सुनकर व्यथित हो उठी –

"हमलोगों के प्यारे पिता जंगल में
हमलोगों को तिरिल फल देने ले गये थे।
हाय! हमलोगों ने उसे हमेशा के लिये खो दिये।
मेरी बड़ी बहन मेरे लिये पानी लाने गयी
और वह कभी नहीं लौटी।
वह राजकुमारी बन गयी।
अब मेरी हड्डियाँ ही अजनबी आदमी की
सारंगी में शेष रही,

हमेशा के लिये खो गये
अपने सगे लोगों के लिये
अब रोना ही शेष है।"

राजकुमारी अपने शयन कक्ष में जाकर फूट-फूट कर रोने लगी। तब राजकुमार ने उसकी कहानी सुनीं, राजकुमारी ने उस सारंगी की माँग की। राजकुमार ने छलपूर्वक वह सारंगी प्राप्त करके उसे दे दी।

अन्त मे राजकुमारी अपने बहन की हड्डियों को हल्दी आदि के साथ एक घड़े में रखकर उसके जीवित होने के लिये "सिंगबोंगा" से प्रार्थना करने लगी। परमेश्वर ने उसकी प्रार्थना सुन ली और उसकी बहन जीवित हो उठी। दोनों बहनें सुखपूर्वक राजमहल में रहने लगीं।[*1]

पुनर्जन्म एवं आत्मा की अमरता का लोक-विश्वास "हो" समाज में भी प्रचलित है जो इस कथा का प्राण तत्व है।

6. एक घड़ियाल दामाद – इस कथा में यह द्रष्टव्य है कि अलग-अलग परिवेश एवं वातावरण में रहने वाला दो भिन्न प्रकार का व्यक्ति एक साथ अधिक दिनों तक नहीं रह सकता। "हो" समजा में किये गये वादे को निभाने की प्रथा का पालन बड़ी दृढ़ता से किया जाता है। डियङ् का कुप्रभाव और उनका कुपरिणाम भी इस कथा में उभर कर सामने आया है।

कथा के अनुसार एक गाँव में एक "हो" के साथ एब घड़ियाल की दोस्ती थी। जब उस "हो" की पत्नी को गर्भ रह गया तो घड़ियान ने यह प्रस्ताव रखा कि यदि पुत्र होगा तो वह उसे अपना सखा बनायेगा। परंतु जब पुत्री होगी तो वह उसे पत्नी के रूप में रखेगा।

कालक्रमानुसार उस "हो" की पुत्री हुई और वह बढ़कर सयानी हो गयी। एक दिन वह अपनी माँ के साथ उस तालाब में गयी जहाँ कमल के फूल खिले हुए थो और उसी में घड़ियाल भी रहता था। जब वह कमल फूल तोड़ने के लिये पानी में उतरी

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम ८, भाग-२, १६२२ - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. १२५-१२८

तो घड़ियाल उसे पीठ पर लेकर पानी में आगे बढ़ने लगा। वह डर गयी और गाकर अपनी माँ से बोली –

"माँ मेरे पैर घुटने तक पानी में हैं
और वे भींग रहे हैं।"

तब माँ ने उत्तर दिया –

"मैं क्या करूँ प्यारी बच्ची
तुम्हारे बाप ने घड़ियाल से वादा किया है,
अब घड़ियाल तुम्हें पत्नी के रूप में
चाह रहा है।

इस प्रकार के प्रश्नोत्तर के बीच घड़ियाल उस लड़की को अपने आवास में पानी के भीतर ले गया। वहाँ मधुयामिनी बिताने के बाद उसने यह प्रस्ताव किया कि "हो" समाज के नियमानुसार उसे अब "डियङ्" आदि लेकर ससुराल जाना चाहिये। उसकी पत्नी ने डियङ् तैयार किया और दोनों ससुराल के लिये चल पड़े। बड़ी मुश्किल से घड़ियाल दामाद जमीन के रास्ते से अपनी ससुराल पहुँचा। वहाँ उसका काफी स्वागत-सत्कार हुआ। परंतु अधिक "डियङ्" पीकर उसने अपनी पत्नी को घायल कर लहुलूहान कर दिया। इस पर गाँव वालों ने उसे टाँगी आदि से मारकर खत्म कर दिया ओर वह लड़की घड़ियाल से मुक्त हो गयी।*1

इस प्रकार कथा में घड़ियाल का अन्त एक दुष्ट व्यक्ति के अन्त का प्रतीक है।

(च) दैत्य कथा – लोक-कथाओं में दैत्यों की उपस्थिति, उनका भयंकर रूप, उनका जादू भरा कार्य, उनकी क्रूरता आदि कथा को रोचक बनाने एवं कथा सूत्र को आगे बढ़ाने का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हे। मानव की आसुरी शक्ति पर विजय की कामना एवं आकांक्षा का उद्‌भव एवं परिणति इन कथाओं में द्रष्टव्य है। देव-दानव का युद्ध वैदिक काल से विभिन्न लोक कथाओं के माध्यम से चला आ रहा है। इन कथाओं के पात्र मानव और दैत्य अथवा देव एवं दानव अथवा राक्षस के रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं। काफी शक्तिशाली होने पर भी अन्त में दैत्य अथवा राक्षस की हार होती है और उसका नाश हो जाता है। यह संघर्ष तामसिक एवं सात्त्विंक प्रवृत्तियों के संघर्ष का

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी – वॉल्यूम ८, भाग-२, १९२२ – श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. १२६-१३१

नाटकीय प्रस्तुतिकरण है, जो "हो" लोक कथाओं में मिलता है। इन कथाओं में एक-न-एक पात्र "दैत्य" या "राक्षस" होते हैं जो मनुष्य को खाने के लिये या उसे नुकसान पहुँचाने के लिये उद्यत रहते हैं। परंतु मनुष्य अपनी चतुराई से छल-बल-कल से उस दैत्य को परास्त कर देता है।

1. मसूर दाल की कहानी – इस कहानी में दो ऐसे युवकों की कथा है जो विपन्न एवं अक्षम होने पर भी अपनी बौद्धिक चातुरी से एक भयंकर बाघ और राक्षस को मारकर राजकुमारी को पाने में सफल हो जाते हैं। इस कहानी में राक्षस एक असामाजिक तत्व के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

कथानक इस प्रकार है – एक धोबी का लड़का और एक हजाम का लड़का - दोनों दोस्त थे। दोनों जब घर से भाग निकले तब उनके पास एक भूजी हुई मसूर की दाल मात्र थी। दोनों ने उसी में से आधा-आधा बाँट कर खाया और जंगल की ओर चल दिये। काफी दूर जाने के बाद उन्हें बाघ का एक गुफा मिला। वहाँ वे दोनों सो गये। जब बाघ गुफा के दरवाजे पर आकर बैठा तो उसकी पूँछ का झटका लगने से उनकी नींद खुल गयी। नाई के लड़के पास उस्तरा था। उसने उसकी मदद से बाघ की पूँछ काट ली। वह बाघ भाग खड़ा हुआ। इसी प्रकार एक स्थान पर इकट्ठा हुए अन्य बाघों को भी दोनों ने चतुराई से भगा दिया।

रास्ता चलते-चलते उन्हें एक राक्षस का मकान मिला। वे सूप, दो रस्सी, एक टूटा हुए कुदाल और एक सूअर का बच्चा अपने साथ ले गये थे। उन दोनों ने उसके घर में घुसकर दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया। सुबह जब राक्षस लौटकर आया तो उसने दरवाजा बन्द पाया।

राक्षस ने भीतर घुसे लोगों का परिचय जानना चाहा। दोनों ने नाक के रूप में सूप, दाँत के रूप में कुदाल, बाल के रूप में रस्सी और सिर की ढील (जूँ) के रूप में सूअर के बच्चे को दिखला दिया। उन लोगों ने राक्षस को जीभ दिखलाने के लिये कहा। जब वह अपनी जीभ दिखला रहा था कि नाई के लड़के ने उसकी जीभ काट दी। वह दर्द से चिघ्घाड़ कर गिर पड़ा। तब उन लोगों ने उसका अंगूठा, उँगली और कान काट कर रख लिया और आगे बढ़ गये। वह राक्षस मृत्यु को प्राप्त हुआ।

राजा राक्षस के उत्पात से बहुत आतंकित था। अतः उसने यह घोषण कर रखी थी कि जो व्यक्ति उस राक्षस को मार देगा, उसे वह आधा राज्य दे देगा और

राजकुमारी से शादी कर देगा।

अन्ततः दोनों राजदरबार में पहुँचे। वहाँ एक कुम्हार का लड़का राक्षस का खून अपने शरीर में लगाकर राक्षस को मारने वाला स्वयं को घोषित कर रहा था। परंतु असली मारनेवालों ने जब उस राक्षस के काट कर रखे गये अंगों को प्रस्तुत किया तो राजा ने नाई के लड़के से राजकुमारी की शादी कर दी और आधा राज्य उसे दे दिया। दोनों बहुत दिनों तक सुखपूर्वक रहे।*1

इस कहानी में धोबी के लड़के को दब्बू, डरपोक एवं बेवकूफ दर्शाया गया है जबकि नाई के लड़के को चालाक एवं नीडर। कुम्हार के लड़के को जालसाज के रूप में प्रस्तुत किया गया है। "हो" समाज में इन जातियों के प्रति वर्तमान धारणा को यह स्पष्ट करता है।

2. गरीब लड़के की कथा – इस कथा में एक ऐसी राक्षसी की कथा है जो एक गरीब बच्चे को धोखा से पकड़ती है और उसे खा जाने का प्रयास करती है। सौभाग्यवश उस लड़के की सुरक्षा अनायास हो जाती है और बदले में उस राक्षसी की लड़की मारी जाती है। राक्षसी को अपने बुरे कर्म का फल स्वयं भोगना पड़ता है। जो दूसरे के लिये गड्ढा खोदता है, वह स्वयं उसमें गिरता है - यह कहावत यहाँ चरितार्थ होती है।

इस कहानी के अनुसार एक गरीब चरवाहा लड़का प्रतिदिन बकरियों को चराने के लिये ले जाता था। उसने अपने खाने की रोटी एक दिन पेड़ के खोखले में रख दिया। पर जब रोटी खाने का समय आया तो रोटी वहाँ से गायब थी। उसके स्थान पर एक रोटियों से भरा पेड़ उग आया था। लड़का खुश होकर रोटियाँ तोड़ने लगा। उसी समय एक राक्षसी उसके पास आयी, वह उसे बोरे में भरकर घर की ओर चली। परंतु रास्तें में जब वह पानी पीने गयी तो कुछ लोगों ने उसे बोरे से मुक्त कर दिया। परंतु दूसरे दिन वह लड़के को पकड़ने में फिर सफल हो गयी। परंतु जब उसकी लड़की उस लड़के को पकाने के लिये कड़ाही में डालने गयी तो लड़के ने तेजी से उस लड़की को ही कड़ाही के खौलते पानी में डाल दिया। इस प्रकार उस राक्षसी की पुत्री का अन्त हो गया

---

*1 द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब - श्री धीरेन्द्रनाथ मजुमदार, पृ. ३२६-३३३

*2 द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब - श्री धीरेन्द्रनाथ मजुमदार, पृ. ३३३-३३५

और राक्षसी घर आने पर रोने और पश्चाताप करने लगी।[*2]

इस कथा में राक्षसी तामसिक प्रवृतियों की प्रतीक है और वह मायावी भी है। "रोटी" का गायब होना और उसकी जगह रोटियों का पेड़ उग आना- यह सब जादूई कार्य उस राक्षसी द्वारा ही किया जाता है। परंतु उसका कार्य समाज विरोधी एवं तामसिक है, अतः उसे उसकी सजा मिलती है। दूसरे के बच्चे का अहित सोचने पर उसकी अपनी लड़की का ही अहित हो जाता है।

3. राजकुमारी और मंत्री के लड़के की कथा -- इस कहानी में राजकुमारी और मन्त्री के लड़के के प्रेम-परिणय की रोचक कथा है। दोनों के दाम्पत्य जीवन में राक्षस का प्रवेश होता है, जो राजकुमारी को छीन कर उसे अपना बनाना चाहता है। पर अन्त में उसका अपने छः भाइयों के साथ अन्त हो जाता है। राक्षसों की माता द्वारा किये गये छलपूर्ण कार्यों का अन्त हो जाता है और राजकुमारी अपने पति मंत्री के लड़के के साथ सुख से जीवन-यापन करती है। इसमें भी राक्षस-कुल की नयी पीढ़ी का नाश दिखलाया गया है। नयी पीढ़ी में कोई राक्षस अथवा राक्षसी प्रवृत्ति न जन्म ले और उसका विकास न हो, यह इस कथा में निहित है।

इस कथानक के अनुसार एक मंत्री का पुत्र राजा की एक लड़की के प्रेमपाश में बद्ध होकर उसे लेकर घोड़े पर भाग निकला। राजकुमारी के पास एक ऐसी तलवार थी, जो एक ही वार में पत्थर को भी काट सकती थी। सात कोस जाने के बाद उन्हें एक राक्षसी मिली जिसके सात लड़के थे। सबसे छोटा "दमगुड़गुड़िया" अविवाहित था। उसी से राजकुमारी की शादी कर देने की योजना राक्षसी ने बनायी। जब राजकुमारी और मंत्रीपुत्र चले गये तो उसके सातों लड़कों ने उसका पीछा किया। राजकुमारी ने अपनी चतुराई से छः लड़कों को मार कर खत्म कर दिया। पर दमगुड़गुड़िया बच गया और उसने धोखे से मंत्री पुत्र को मारकर राजकुमारी को अपने अधिकार में कर लिया। परंतु थोड़े दिनों बाद ही राजकुमारी ने उसे मार दिया। उसने "मरांगबोंगा" की आराधना की और उसका पति (मंत्रीपुत्र) जीवित हो गया। "मरांगबोंगा" बूढ़ी औरत के वेश में आये थे। उन लोगों ने उनकी आराधना की। बाद में दोनों उस राक्षसप्रदेश में राजा-रानी की तरह रहने लगे और राज्य करने लगे।[*1]

---

*1 द अफेयर्स ऑफ द ट्राइब - श्री धीरेन्द्रनाथ मजुमदार, पृ. ३३८-३४२

इस कहानी से मिलती-जुलती कहानी "लोमन और राक्षस" मुण्डा जाति में लोक-कथा के रूप में प्रचलित है।*1 इस कथा में भी "रोटी का पेड़" की जगह "रूपये का पेड़" वर्णित है जो एक राक्षस का मायावी कार्य है। इस कथा का पात्र "लोमन" अपने गुण से राक्षस को प्रभावित करता है और अन्त में उसे मार डालता है।

(छ) हास्य (मुर्ख) कथा – "हो" जनजाति के लोग भी हास्य-व्यंग्य प्रिय होते हैं। उनमें अपनी जाति के प्रति महत् भावना होती है और वे "हो" आदिवासी के अतिरिक्त अपने क्षेत्र के या ग्राम में बसने वाले अन्य सभी जातियों को अपने से निम्न कोटि का मानते हैं। "पान" या "तांती" "हो" समाज में "पिआयं" के नाम से जाना जाता है जो अपने को अधिक चतुर समझता है। परंतु "हो" लोग उन्हें मूर्ख समझते हैं। "गोप" या "गौड़" जाति के लोग मुख्यतः पशु-पालन या चरवाहा का कार्य करते हैं। उन्हें भी "हो" मन्दबुद्धि मानते हैं। "हो" लोक-कथाओं में या उनके धार्मिक कृत्यों में इन जातियों को "हो" समाज में अलग एवं दूर रखा जाता है। "सोहराई" के अवसर पर "गोवाबोंगा" या "गोटोबोंगा" की पूजा के समय, मवेशियों को सजाया जाता है, "गौड़" या "गोप" लोग भी उसमें सम्मिलित होते हैं।

हास्य कथाओं में "पान" या "तांती" जाति की मूर्खता, कायरता एवं विपन्नता पर व्यंग्य एवं उपहास की कहानियाँ मिलती है। कुछ कथाओं में व्यक्ति विशेष की मूर्खता का भी उपहास किया गया है। कुछ कथाओं में पशुओं की मूर्खता को भी हास्य का विषय बनाया गया है।

1. पान द्वारा मच्छरों का शिकार – यह एक जाति कथा होते हुए भी हास्य एवं मूर्ख कथा की श्रेणी में आती है। इस कहानी में "पान" लोगों की मूर्खता पर व्यंग्य किया गया है। मच्छरों को मारने के लिये तीर-धनुष को व्यवहृत करने का निर्णय पान जाति के लोगों द्वारा लिया गया, जो एक मूर्खतापूर्ण निर्णय था। उनकी मूर्खता के कारण एक पान के शरीर पर बैठे मच्छर को तीर से मारने में वह पान मार गया।*2

---

*1 मुण्डा लोक कथाएँ - श्री जगदीश त्रिगुणायत, पृ. २५५-२५७

*2 मैन इन इण्डिया - वॉल्यूम - १, संख्या - २, जून १६२१ - श्री एस. सी. राय, पृ. ४६-५०

"पान" या "तांती" कभी भी तीरन्दाज नहीं हो सकता, यह "हो" समाज की मान्यता है। "हो" जनजाति के लोग बहुत ही सधे हुए तीर चलाने वाले होते हैं। उनका निशाना अचूक होता है। इस कहानी में पान द्वारा तीर का प्रयोग मच्छरों के लिये करना मूर्खता एवं कायरता - दोनों का द्योतक है।

2. पान और गिरगिट – इस कथा में "पान" को अत्यन्त डरपोक एवं मूर्ख सिद्ध किया गया है। एक पान जब कपड़ा बेचने जा रहा था तो उसे रास्ते में एक गिरगिट मिला। गिरगिट अपने स्वभाव के अनुकूल अपना सिर हिला रहा था। "पान" उससे भयभीत हो गया। उसने उससे पूछा -"क्या तुम मुझे खाना चाहते हो" उसके सिर हिलाने पर पुनः पूछा - "तुम मेरा कपड़ा और मुझे भी निगल जाना चाहते हो" गिरगिट के इस प्रश्न पर भी सिर हिलाने पर वह कपड़ा छोड़कर भाग खड़ा हुआ।

इस प्रकार गिरगिट जैसे छोटे जानवर से इतना अधिक भयभीत एवं आतंकित होना कायरता से अधिक मूर्खता का द्योतक है। "पान" का गिरगिट से डर जाना उसकी कायरता एवं मूर्खता का ही द्योतक है, जो "हो समाज में व्यंग्य-विनोद का साधन है।

मुण्डा समाज में भी "पेड़ाएँ आट्टेटेंगा" नाम से "पान और गिरगिट" की कथा प्रचलित है। उक्त कथा में भी गिरगिट से भयभीत होकर पान का (तांती का) भागना एवं बाद में भय से मर जाना दर्शाया गया है।*1 इसमें मूर्खता एवं कायरता की पराकाष्ठा (क्लाइमेक्स) उभर कर सामने आयी है।

3. पान और पियाज रोटी – इस कहानी में "पान की मूर्खता एवं विपन्नता" पर व्यंग्य किया गया है। एक पान अपनी ससुराल में प्याज-रोटी खाकर ही काफी प्रसन्न हुआ। वह खाना उसे इतना प्रिय लगा कि उसका नाम "पियाज-रोटी" रटता हुआ घर की ओर वापस चल दिया। पर रास्ते में जब वह भूल गया, तो पुनः उसने अपने सास से जाकर पूछा। दुबारा भूलने पर इस शब्द को वह एक पानी के गड्ढ़े में खोजने लगा और अपने साथ एक राहगीर को भी मूर्ख बनाया। जब राहगीर को पान के मुँह से प्याज की गंध आयी तो उसने पूछ दिया - "क्या तुमने प्याज-रोटी खायी है"

---

*1 मैन इन इण्डिया - वॉल्यूम - १, संख्या - २, जून १६२१ - श्री एस. सी. राय, पृ. ५०

*2 मुण्डा लोक कथाएँ - श्री जगदीश त्रिगुणायत, पृ. ५०२-५०३

बस, उस पान को वह सर्वोत्तम भोज्य पदार्थ याद आ गया और वह "पियाज-रोटी" रटता घर की ओर भाग चला।*2

इस प्रकार पान को प्याज-रोटी जैसे निकृष्ट भोजन का सर्वोत्तम लगना उसकी विपन्नता का परिचायक है। रास्ते में एक मामूली शब्द "पियाज-रोटी" की भूल जाना और उसे पानी के गड्ढ़े में खोजना उच्च कोटि की मूर्खता है।

4. एक डाकुआ की कथा – इस कथा का पात्र "डाकुआ" है, जो "मुण्डा" (ग्राम-प्रधान) का चपरासी होता है। "हो" क्षेत्र (कोल्हान) में राजस्व की वसूली का भार "मुण्डा" पर ही होता है। उसे मदद करने हेतु एक व्यक्ति को कुछ पारिश्रमिक पर "डाकुआ" बना दिया जाता है। डाकुआ का मुख्य कार्य मालगुजारी देने वाले से तगादा करना और मुण्डा के पास उसे बुलाकर मालगुजारी वसूल कराना होता है। इस कथा में डाकुआ की मूर्खता पर व्यंग्य किया गया है। "डाकुआ" का स्थान "मुण्डा" के साथ ही जुड़ा हुआ है। वह यदि वहाँ से अधिक ऊपर बढ़ना चाहता है तो उसकी बेवकूफी होगी और उससे उसको नुकसान होगा। इस कहानी में डाकुआ की मूर्खता पर व्यंग्य किया गया है।

एक डाकुआ जब मुण्डा के साथ "मानकी" (एक पीड़ या २० ग्रामों का राजस्व प्रभारी) के यहाँ जाता तो मुण्डा द्वारा मानकी को "जोहार" (प्रणाम) करते देखकर उसे लगा कि "मानकी" मुण्डा से बड़ा है इसलिये वह मानकी का डाकुआ बन गया। इसके बाद जब उसे ज्ञात हुआ कि मानकी से बड़ा राजा है तो वह राजा का डाकुआ बन गया। जब राजा ने जंगल में जाते समय एक लोमड़ी को "जोहार" किया तो लोमड़ी को राजा से श्रेष्ठ समझकर वह लोमड़ी का डाकुआ बन गया। परंतु लोमड़ी ने उससे ऊब कर पीछा छुड़ाना चाहा।

अन्त में उसने डाकुआ को उसकी सेवा के लिये उपहार स्वरूप एक बैल दिया और विदा किया। रास्तें में वह रात में एक तेली के घर ठहरा गया। सुबह तेली ने यह घोषणा कर दि कि "उसके कोल्हू से वह बैल पैदा हुआ है; क्योंकि बैल कोल्हू से ही बँधा था।" बेचारा डाकुआ पुनः उस लोमड़ी के पास गया और उसे गवाही देने के लिये लेकर राजा के समक्ष उपस्थित हुआ। वह राजा के दरबार में जाकर सो गया। उसके सोने के कारण पूछने पर लोमड़ी ने बताया – "कल रात समुद्र में आग लग गयी थी, उसे बुझाने

के लिये रात भर जागना पड़ा।" राजा उसकी बात को झूठ और मूर्खतापूर्ण बताया। इस पर लोमड़ी ने जवाब दिया - हुजूर, कोल्हू के कुन्दा से जीवित बैल का पैदा होना भी असम्भव है। राजा ने संतुष्ट होकर डाकुआ का बैल वापस करा दिया।*1

इस कथा में निष्कर्षतः डाकुआ को मूर्ख और राजा को अज्ञानी एवं अव्यावहारिक सिद्ध किया गया है। "लोमड़ी" को एक चतुर व्यक्ति का प्रतीक माना गया है, जो उचित न्याय दिलाने में सक्षम है। "कोल्हू" से बैल पैदा होना अपने आप में हास्यास्पद है।*2

3. "हो" लोक कहानियों की सामान्य विशेषताएँ एवं सामाजिक महत्त्व – "हो" लोक कहानियों में अन्य आदिवासी लोक कथाओं की तरह विभिन्न विषयों की कहानियाँ उपलब्ध हैं। सजीव एवं निर्जीव प्राणियों से लेकर अतिप्राकृतिक शक्तियों या तत्त्वों को विषय बनाकर वर्गों (जातियों) उनकी चारित्रिक एवं सामाजिक विशेषताओं, उनके गुण-दोष आदि को कहानियों का विषय बनाया गया है। विषय वस्तु की दृष्टि से जाति कथा, नीति कथा, परी कथा, दैत्य कथा आदि "हो" कथा-साहित्य में पायी जाती हैं जिनका विश्लेषण विभिन्न कथा शीर्षकों में किया गया है। अधिकांश कहानियाँ किसी पात्र विशेष को केन्द्र में रखकर विकास करती हैं और कहानी घटित विभिन्न घटनाएँ उस पात्र विशेष (नायक) की सफलता-असफलता का द्योतक बनती हैं जो कहानी के विकास एवं विस्तार में सहायक होती हैं। "हो" लोक कहानियाँ घटना-प्रधान की अपेक्षा पात्र-प्रधान होती हैं। घटनाओं पर पात्र का प्रभाव एवं नियंत्रण अधिक होता है।

"हो" लोक कहानियों में पात्रों की विविधता है। राजा-रानी, राजकुमार-राजकुमारी, मन्त्री पुत्र, ब्राह्मण, नाई, धोबी, चरवाहा, कृषक (चासी) आदि जैसे मानव पात्र "हो" लोक कहानियों में प्रचुर रूप में पाये जाते हैं। जाति कथाओं में पाये जाने वाले मानव-पात्र अपनी जाति की विशेषताओं के साथ कहानियों में प्रस्तुत किये गये हैं। वर्ग विशेष के पात्रों में - राजा सामन्तवाद के उत्पीड़न का, राजकुमार सामन्तवादी कुसंस्कारों का, मन्त्री पुत्र सामन्तवाद के कुप्रथाओं का, चरवाहा सर्वहारा वर्ग का तथा

---

*1 मैन इन इण्डिया - वॉल्यूम - १, संख्या - २, श्री एस. सी. राय, पृ. ५०-५२

*2 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम १, सितम्बर, १६१८ - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३२८-३२६

अन्य पात्र जाति या वर्ग की विशेषताएँ लिये हुए विभिन्न कहानियों में प्रस्तुत किये गये हैं। उनका चरित्र एक व्यक्ति विशेष का चरित्र न होकर एक वर्ग विशेष की चारित्रिक विशेषता का प्रतीक या द्योतक बन गया है। विश्लेषित कथाओं में "पान और गिरगिट" "कुम्हार के लड़के की कथा", "दुष्ट रानी की कथा", "राजकुमारी एवं मंत्री पुत्र की कथा", "एक डाकुआ की कथा" आदि प्रमुख हैं जिनमें पात्र सम्बन्धी उपर्युक्त विशेषताएँ पायी जाती हैं।

"हो" कहानियों में पशु एवं पक्षी पात्र भी अधिक संख्या में पाये जाते हैं। "हो" जाति के लोग आरम्भिक काल में शिकारी रहे हैं और उनका जीवन वन्य प्रान्तरों में ही बीता है जहाँ वे विभिन्न पशु-पक्षी के निकट सम्पर्क में रहे हैं। पशु एवं पक्षी में भी उनलोगों ने दुष्ट एवं मंगलकारक चरित्रों का आरोपण किया है। "बाघ" इन कथाओं में सामन्तवादी दम्भ एवं परोपजीवी पात्र बनकर आया है। कहीं-कहीं उसे मूर्ख एवं दम्भी बताया गया है। बन्दर एवं सियार अथवा लोमड़ी को चतुर एवं व्युत्पन्नमति का दर्शाया गया है। "लोमड़ी" या सियार अपनी चतुराई से नीर-क्षीर न्याय करने में सक्षम हैं। वह एक व्यावहारिक न्यायकर्ता या गवाह के रूप में प्रस्तुत हुआ है। "भालू" एक मूर्ख एवं नासमझ पात्र के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जंगली साँभर को भी वात्सल्य से परिपूर्ण दिखलाया गया है जो मानव-शिशु का पालन-पोषण कर उसे नव-जीवन प्रदान करती है। "घड़ियाल" बेवकूफ एवं सीधे-सादे प्राणी के रूप में प्रस्तुत हुआ है। पूर्व में विश्लेषित "एक लोमड़ी और एक भालू", "सियार की धूर्तता", "दो सियार एक बाघ और एक बन्दर", "सियार और घड़ियाल", एक साँभर धातृ" आदि कहानियों में उपर्युक्त तथ्यों का अवलोकरन किया जा सकता है। इन कहानियों में पशु मनुष्य को कठिन समय में सहानुभूति दर्शाता है।

"हो" कहानियों में कुछ अतिप्राकृतिक पात्र भी पाये जाते हैं। इनमें राक्षस, परी, कोई देवता (बोंगा) आदि का आशीर्वाद या अभिशाप इन कहानियों में उभर कर सामने आता है। ऐसे पात्रों मे अक्सर राक्षस का नाश, परी का मानववत् चरित्र दर्शाकर लुप्त हो जाना, बोंगा या एरा (देवी) का बूढ़ा या बूढ़ी के रूप में प्रकट होकर अभीष्ट कार्य को सिद्ध कराकर अन्तर्धान हो जाना ऐसे पात्रों की विशेषता है। "पण्डुक के दो छोटे बच्चों की कथा" में लिटा को खरहा, बाघिन आदि अपना दूध देकर उनकी मदद करते हैं। "गरीब लड़के की कथा", "मसूर दाल की कहानी" आदि में राक्षस-राक्षसी का मानवभक्षी होना और मानव द्वारा ही उनका अन्त दर्शाया गया है। "राजकुमारी

और मंत्री के लड़के की कथा" में "मराङ्बोंगा" को बूढ़ी औरत के वेष में आकर मंत्री के पुत्र को पुनर्जीवित कर देने की घटना है। "फूल की परी" शीर्षक कथा में एक परी का मानव-स्त्री बनकर पुनः लुप्त हो जाना, परी जीवन की परिकल्पना पर आधारित है। "परी" को पराशक्ति सम्पन्न एक अतिप्राकृतिक जीव माना गया है जो स्वेच्छा से स्थूल एवं सूक्ष्म रूप धारण कर नाना प्रकार के कार्यों को सम्पन्न कर सकती है। परी का निवास स्थान कोई फल या फूल होता है, यह एक लोक विश्वास है।

"जातक कथाओं" की तरह "नीति कथाएँ" "हो" लोक कहानियों में पायी जाती है। विभिन्न पशु पात्र मानव की तरह आपस में वार्तालाप करते हैं, एक दूसरे को धोखा देते हैं, एक दूसरे की मदद करते हैं और मानववत् आचरण करते हैं। उनके कार्यकलापों के माध्यम से किसी नीति विशेष को प्रस्तुत किया जाता है। "दुष्टता का अन्त अवश्यम्भावी है", "स्वार्थ का सम्बन्ध अधिक दिन तक टिकता नहीं आदि कथ्यों को ऐसी कहानियों में विभिन्न पशु-पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। "सियार और घड़ियाल", "सियार और हलवाहा" आदि कहानियों में इन्हीं नीतियों को प्रस्तुत किया गया है। कहीं-कहीं दुष्ट प्रकृति के किसी पशु विशेष एवं उसके भावगत विशेषताओं से जोड़कर उसे मानव या पशु पात्र के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। "दुष्ट रानी" की कथा में छोटी रानी के नवजात पुत्र का मुँह नेवले की तरह हो जाता है। यह दुष्ट रानी की दुष्टता एवं कुटिलता का प्रतीक है।

हास्य व्यंग्य एवं मूर्खतापूर्ण कहानियों में किसी जाति विशेष या वर्ग विशेष की मूर्खता पर व्यंग्य किया गया है जो व्यक्तिगत न होकर वर्गगत है। "पान और पियाज-रोटी" पान (तांती) जाति की विपन्नता पर व्यंग्य है। "एक डाकुआ की कथा" में डाकुआ "जो मुण्डा का चपरासी होता है, जिसकी मूर्खता पर व्यंग्य किया गया है। "हो" जनजाति के लोगों को भी व्यंग्य-हास्य प्रिय है। वे विभिन्न अवसरों पर अवकाश के क्षणों में हास्य कथा कह कर अपना मनोरंजन करते हैं। इन कहानियों में समाज में उनकी श्रेष्ठता एवं अन्य गैर-"हो" जातियों का निम्न कोटि का होना प्रतिपादित होता है। "हो" लोक कथाओं में पात्रों की संख्या बहुत कम है जो आदिवासी लोक कहानियों की विशेषता है। अधिक पात्र कहानी की रोचकता को नष्ट कर देते हैं, यह सर्वमान्य है। पात्रों में जो कथोपकथन है, वह संक्षिप्त एवं आवश्यकतानुसार व्यंग्यपूर्ण भी है।

इन कहानियों की शैली प्रायः गद्यात्मक है। फिर भी किसी-किसी कहानी में बीच-बीच में आवश्यकतानुसार पद्य का प्रयोग किया गया है। "छोटी बहन"

(मिसिहोन)[*1], "एक नवयुवती की कथा"[*2], "मनुष्यभक्षी की कथा"[*3], "फूल की परी"[*4] आदि एक-सी कहानियाँ हैं जिनमें पद्य अथवा गीत का प्रयोग कहानी के मध्य किया गया है। इससे कहानियों की रोचकता बढ़ गयी हैं। कथानक रूढ़ियों का प्रयोग भी हो लोक कथाओं को रोचक एवं रोमांचक बना देता है।

"हो" लोक कहानियों में "हो" समाज की रूपरेखा, मानसिकता, सामाजिक रीति-कुरीति, समाज में मनाये जाने वाले पर्व-त्योहार उनकी उत्पति एवं वर्तमान रूपरेखा आदि का स्पष्ट चित्र मिल जाता हे। इन कहानियों में समाज के विभिन्न वर्गो-जातियों की सामाजिक स्थिति क्या है-यह भी स्पष्टतः परिलक्षित हो जाता है। ये कहानियाँ "हो" समाज में चिरकाल से मौखिक रूप से विभिन्न कथक्कड़ों के माध्यम से संचरित होती हुई इस युग तक चली आयी हे। कालक्रम से इनके मूल रूप में परिवर्तन होता रहा है। परंतु इनका मूलभाव वही है, जो पूर्व में रहा होगा। गाँव में किसी अलावके निकट अथवा गीती ओड़ा (रात्रि विश्राम गृह) में बैठकर वृद्ध व्यक्ति या वृद्धा स्त्री इन कहानियों को सुनाकर न केवल युवा वर्ग का मनोरंजन करती हैं, वरन् उनको भी "हो" समाज की विभिन्न विशेषताओं से अवगत करा देती है।

इन कहानियों के माध्यम से नयी पीढ़ी को मालूम हो जाता है कि "हो" समाज में "पान" (तांती), गौड़, कुम्हार, नाई आदि जातियों की सामाजिक स्थिति क्या है। विभिन्न पर्व-त्योहार एवं धार्मिक अनुष्ठानों की जानकारी इन कहानियों से ही हो पाती हे। इन कहानियों में भाई'बहन का अनन्य स्नेह उगागर होता है तो भाभी की दुष्टता का भी बोध होता है। दुष्टता का अन्त बुरा होता है और सच्चाई की विजय सर्वत्र होती है, यह प्रायः सभी कहानियों में सन्निहित रहता है ये कहानियाँ समाज में मानव की मानसिक अभिरूचि को जीवित रख रही है। इन कहानियों ने "हो" समाज में आशावादी दृष्टिकोण, भाग्यवाद एवं कर्मवाद के समन्वय के प्रति आस्था, प्रकृति के प्रति लगाव एवं प्रेम आदि का प्रतिपादन एवं विकास किया है।

---

*1 आदिवासी विशेषांक : १६ अक्टूबी, १६७६ – श्री योगेन्द्र मुनि, पृ. ३३

*2 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी – वॉल्यूम १, सितम्बर, १६१८ – श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३२८-३३१

*3 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी – वॉल्यूम १, सितम्बर, १६१८ – श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३२६-३३८

*4 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी – वॉल्यूम १, सितम्बर, १६१८ – श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. ३३८-३३६

पंचम अध्याय

"हो" कथानक रूढ़ियाँ

(1) कथानक रूढ़ियों की सामान्य अवधारणा एवं भेद

लोक कथाओं में अभिप्रायों अर्थात् कथानक रूढ़ियों का विशेष महत्त्व है। ये ही इनकी रोचकता बढ़ाते हैं, इनसे लोक कथाओं में अलौकिकता आती है एवं उनके सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। वस्तुतः लोक-कथा का अस्तित्व इन अभिप्रायों से ही सिद्ध होता है। इन अभिप्रायों अथवा कथानक रूढ़ियों का क्षेत्र विस्तृत है। कथा के निर्माण में ये अभिप्राय ही मूल कारण माने गये हैं। कहानी का केन्द्र-बिन्दु अभिप्रायों में ही निहित रहता है। अंग्रेजी में अभिप्राय को "मोटिफ" कहते हैं।*1

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल के मतानुसार - "अभिप्राय कहानियों का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण अंग है। उनका कथन है कि ईट-गारे की सहायता से जैसे भवन बनते हैं, वैसे ही भिन्न-भिन्न अभिप्रायों की सहायता से कहानियों का रूप सम्भावित होता है।"*2

अभिप्रायों अथवा कथानक रूढ़ियों की व्यापकता भी सर्वमान्य है। एक ही कथानक रूढ़ी कई जातियों की लोक-कथाओं में समान रूप से मिलती है। इस सम्बन्ध में आर्चर ने अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है - "अभिप्रायों के व्यापक प्रसार के कारण शायद ही कोई ऐसी कथा होगी जो किसी एक कबीले की अपनी सम्पत्ति कही जा सके। हो सकता है कि एक संथाल कथा का अभिप्राय (मोटिफ) बस्तर के किसी मुरिया कथा में दिखायी दे जाय।"*3

डॉ. श्यामाचरण दूबे का मत है कि अभिप्राय के आधार पर सम्पूर्ण विश्व के लोक-कथा साहित्य का विश्लेषण हमें बतलाता है कि मानव में नये अभिप्राय निर्मित करने की शक्ति आश्चर्यजनक रूप से सीमित है। थोड़े से ही अभिप्राय नए-नए रूपों में हमें मानव जाति की लोक-कथाओं में मिलते हैं।*4

---

*1 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. ६४-६५

*2 लोक कथा अंक - आजकल, मई-१९५४, डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ. २३

*3 लोक कथा अंक - आजकल, मई-१९५४, श्री आर्चर

*4 मानव और संस्कृति - डॉ. श्यामाचरण दूबे, पृ. १८२

डॉ. सत्येन्द्र के मतानुसार – "कथानक का मूलतत्त्व अभिप्राय ही है।......... लोक-कथा का परम्परागत रूप, सांस्कृतिक रूप, मनोवैज्ञानिक रूप, नैतिक रूप और भ्रमणकारी रूप अभिप्राय से ही परिलक्षित होता है। संसारभर की लोककथाओं की एकता इसी के द्वारा अभिव्यक्त की गयी है।"*1

श्री स्टिष्थ थॉम्सन ने विचार में "अभिप्राय कथा का लघुत्तम तत्त्व है जो परम्परा में स्थिर रूप में रहने की शक्ति रखता है। इस प्रकार की शक्ति रखने के लिये उसमें कुछ असाधारण और अपूर्णता होनी चाहिये। अभिप्राय कथानक के निर्माण तत्त्व हैं।

उन्होंने अभिप्रायों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है –

प्रथम – कर्ता-कथाओं में देवता, असाधारण पशु, आश्चर्यजनक प्राणी – जैसे, चुड़ैल, राक्षस, अप्सरा और पारम्परिक मानव-चरित्र जैसे-प्रिय सबसे छोटा बच्चा या क्रूर सौतेती माँ।

द्वितीय – कुछेक ऐसी वस्तुएँ जो कथा व्यापार में काम आने वाली होती है; जादू की वस्तुएँ, असाधारण रिवाज, अनोखे विश्वास।

तृतीय – कुछ घटनाएँ जिनमें बहुत-से अभिप्राय आ जाते है।

उपर्युक्त वर्गीकरण से पता चलता है कि अभिप्राय (कथानक रूढ़ियाँ) कथानक के सभी अंगों को अपने में समेटे हुए हैं; क्योंकि कथानक घटना, चरित्र और कार्य के मेल से बनता है।......... अभिप्राय कथानक का लोक कथात्मक रूप है।*2

श्री चन्द्र जैन के विचार से इन अभिप्रायों (कथानक रूढ़ियों) के निर्माण में कथक्कड़ों एवं लोक कथाकारों की कुशलता प्रशंसनीय है। ये कभी-कभी कथाओं में विलक्षण पात्रों को लाकर श्रोताओं की जिज्ञासा को पूर्ण करते हैं एवं उनके मानसिक धरातल को ही परिलक्षित कर देते है।*3

ब्लूमफील्ड के अनुसार – "सर्वत्र प्रत्येक कथक्कड़ और संग्रहकर्ता मानो ऐसा लगता है कि इन अभिप्रायों की समूची माला को उठाता है जिसकी तुलना हम मनकी माला से कर सकते हैं, उसे वह छिन्न-भिन्न कर देता है; जिससे मनके चतुर्दिक बिखर

---

*1 लोक साहित्य विज्ञान – डॉ. सत्येन्द्र, पृ. २७३

*2 लोक साहित्य विज्ञान – डॉ. सत्येन्द्र, पृ. २७४

*3 लोक साहित्य विज्ञान – श्रीचन्द्र जैन, पृ. ६७

जाते हैं और फिर आरम्भ से वह इन मनकों को पिरोता है।"*1

भारतीय साहित्य में परकाया प्रवेश, लिंग परिवर्तन, पशु-पक्षियों की बातचीत, किसी बाह्य वस्तु में प्राणों का बसना आदि कितने ही अभिप्राय हैं। ये सभी कथानक रूढ़ियाँ प्रधानतया दो प्रकार की हैं - एक लोक-विश्वास पर आधारित और दूसरी कवि कल्पित।*2

श्री जगदीश त्रिगुणायत के विचार से-"कथाओं में जब एक ही तत्त्व के सरल आकर्षण के कारण उसका बार-बार प्रयोग होता है और जब ऐसे प्रयोग की परम्परा बन जाती है तब उसे "कथानक-रूढ़ी" या अभिप्राय (मोटिफ) कहते हैं। ऐसी रूढ़ियाँ बने बनाये हुए पुल के समान होती हैं, जब कहानीकार के सामने कोई नाला आ जाता है तब वह पुल तुरन्त बिछा दिया जाता है। ये रूढ़ियाँ खूब प्रचलित और लोकप्रिय होती हैं। बिना इस लोकप्रियता के गुण के कोई बात रूढ़ी नहीं बन सकती।"*3

श्री चन्द्र जैन ने आदिवासियों की लोक-कथाओं में पाये जाने वाले कथानक रूढ़ियों का संग्रह किया है। उनके अनुसार निम्नांकित कथानक रूढ़ियाँ प्रायः किसी-न -किसी रूप में सभी आदिवासी लोक-कथाओं में मिलती हैं -

१. आपत्ति काल में कुलदेवता द्वारा सहायता
२. स्वप्नों के माध्यम से भविष्य का संकेत
३. नाग का रस्सी बन जाना
४. जादू की लकड़ी
५. जादू की डोरी
६. साधू का शाप एवं आशीर्वाद
७. सोने की अंगूठी का खो जाना
८. सोते हुए हँसना और रोना
९. साँप द्वारा छिपे हुए धन का संकेत
१०. सिंह का आदमी के साथ भोजन करना
११. खरगोश का नाचते हुए लड़की बन जाना
१२. धरती का हिलना

---

*1 लोक साहित्य विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. २७५

*2 लोक साहित्य विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. ६५

*3 मुण्डा लोक कथाएँ - श्री जगदीश त्रियुणायत, पृ. ८३

१३. आकाश से आग बरसना
१४. गगन से धन की वर्षा
१५. इन्द्रलोक से गजराज का धरती पर आना
१६. सियार की भविष्यवाणी
१७. सियार द्वारा निर्णय देना
१८. शेर का रात में बदला लेना
१९. शेर का घर के पीछे खड़ा होकर मनुष्यों की बातें सुनना
२०. शर्तों की पूर्ति के पश्चात् युवक का विवाह होना
२१. मुर्गे के कानों में हजारों मन अनाज का रखा जाना
२२. परियों का वरदान
२३. हाथी द्वारा राजा का चुनाव
२४. मंत्रित जल के छिड़काव से मरे हुए आदमी का जीवित होना
२५. प्राणों का तोता के शरीर में निवास
२६. राक्षस की पुत्री द्वारा प्रेमी को मक्खी बनाना
२७. मानव को पक्षियों द्वारा उद्बोधन
२८. सुनहरे बालों से परियों की पहचान
२९. जादू-टोना का पेंड़
३०. पशु-पक्षियों का मानव बोली में बोलना
३१. रूप परिवर्तन एवं लिंग परिवर्तन
३२. होड़ अथवा स्पर्धा
३३. चूहे का राजकुमारी से विवाह करना
३४. चूहों द्वारा लोहे का भक्षण
३५. चील द्वारा हाथी का भक्षण
३६. बिल्ली द्वारा हाथी को आकाश में उड़ा ले जाना
३७. लाल कपड़े का चमत्कार
३८. किसी शर्त के तोड़े जाने पर परी का अदृश्य हो जाना
३९. सत्य की विजय
४०. अपराधी को जलते हुए अंगारे पर चलने के लिये बाध्य करना
४१. बुद्धि परीक्षा

४२. पहेलियों को बुझाना

४३. स्त्री-हठ

४४. शाप के द्वारा हरे वृक्ष को धरती पर गिरना

४५. मंत्रों द्वारा सिंह के मुँह को बन्द करना

४६. मानव द्वारा पशु-पक्षियों की बोली समझना

४७. भाग्य-लेख

४८. भौजाई की फटकार

४९. अद्भुत न्याय

५०. मौन-भंग

५१. करामाती अंजन

५२. अंगूठी के माध्यम से प्रेम की पहचान

५३. मंत्रबल से जल-भरे तालाब का सूख जाना

५४. प्रसन्न होकर साँप द्वारा हीरे की अंगूठी देना।*1

इसके अतिरिक्त श्रीचन्द्र जैन ने बुन्देली, बघेलखण्डी और ब्रजलोक कथाओं से भी कुछ कथानक रूढ़ियों का संग्रह किया है, जो आदिवासी लोक- कथाओं में भी पायी जाती है। यथा-

१. आम खाने पर गर्भ रह जाना

२. देवी-देवताओं का मानव-रूप धारण करना

३. प्राण प्रवेश

४. पशु-पक्षियों की अभिभावकता

५. भाइयों का विश्वासघात*2

श्री जगदीश त्रिगुणायत ने "मुण्डा" लोक-कथाओं में पाई जानेवाली कतिपय कथानक रूढ़ियों का संग्रह किया है जो निम्नांकित है*3-

१. राजा के सात बेटे सात बेटियाँ

२. नगाड़े में मधुमक्खियों को बन्द कर ले जाना और शत्रु पर छोड़ देना

---

*1 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. ४९-५०

*2 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. ६९

*3 मुण्डा लोक कथाएँ - श्री जगदीश त्रियुणायत, पृ. ८३-८४

३. राजकुमारों की परीक्षा में घोड़ा, पोढ़ा, चारपाई, भैंस और बकरे का मांस
४. शिकार में तम्बाकू पीने की इच्छा से आग के लिये कहीं आदमी भेजना और किसी अन्य सुन्दरी से भेंट
५. सींग से अभीष्ट फल की प्राप्ति
६. क्रुर और भयानक राक्षसों द्वारा बहुत-सी लड़कियों का पालन और कोमल व्यवहार
७. नया कुआँ खोदकर चुमावन के नाम पर छली औरतों को ढकेल कर मार डालना
८. राजकुमारों का व्यापार के लिये निकलना, रूपैये का दुरूपयोग और पुनः चमत्कार
९. सहायता के लिये विवाह का आश्वासन
१०. कटे हुए नाक-कान द्वारा असली शिकारी की पहचान
११. हाथी द्वारा ठीक वर के गले में माला डालना
१२. राक्षस का भैंस बनकर बाजार के रास्ते में लेटना और पुनः राक्षस बनकर पालतू बच्चों के लिये खिलौना प्राप्त करना
१३. लड़कियों को, भाई या पति की चिता में कूदकर आत्म बलिदान
१४. द्वार पर आज्ञा लिखकर नालायक बेटे को घर से निकालना
१५. किसी बाघ-भालू के द्वार पर पहरेदार शिकारी का सो जाना और ढाल-तलवार का पहरा देना

कथानक रूढ़ियों के विषय में विद्वानों से, जिनमें मुख्य स्टिथ थॉमसन हैं, उन्होंने यह विचार व्यक्त किया है कि कथानक रूढ़ियाँ या "मोटिफ" का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। यह अन्तर्राष्ट्रीय है। अनेक देशों की लोक-कथाओं में एक ही प्रकार के "मोटिफ" मिल सकते हैं। इसका विस्तृत उदाहरण उन्होंने अपने विशालकाय ग्रन्थ "मोटिफ इन्डेक्स ऑफ फॉक लिटरेचर" में प्रस्तुत किया है।

2. "हो" कथानक रूढ़ियों के भेद एवं प्रमुख "हो" कथानक रूढ़ियाँ – अन्य आदिवासी लोककथाओं की तरह "हो" लोक-कथाओं में भी कथानक रूढ़ियों का प्रयोग काफी संख्या में हुआ है। ये कथानक रूढ़ियाँ देवी -देवता सम्बन्धी, मानव-व्यापार (आचरण आदि पर आधारित) मानव-व्यवहार या

सम्बन्ध सम्बन्धी, पशु-पक्षी सम्बन्धी, अतिप्राकृतिक शक्तियाँ सम्बन्धी, संख्या सम्बन्धी, प्रलय सम्बन्धी, पुनर्जीवन सम्बन्धी, परकाया प्रवेश सम्बन्धी, वृक्ष-पुष्प सम्बन्धी, राक्षस सम्बन्धी आदि विषयों पर आधारित हैं। "हो" लोक -जीवन सघन वन-प्रान्तरों में ही पल्लवित-पुष्पित हुआ है। अतः इनकी लोक-कथाओं में पशुओं एवं अन्य वन्य-जीवन से सम्बान्धित वस्तुओं का कथानक रूढ़ियों के रूप में अतिशय प्रयोग हुआ है। राजा, राजकुमार या अन्य सामन्तवादी कथानक रूढ़ियों का प्रयोग सामन्तवादी प्रभाव का प्रतिफल है। "हो" जादू-टोना, भूत-प्रेत आदि के प्रभाव से प्रभावित रहे हैं।

उन्होंने अपने समाज को सबसे ऊँचा माना है। अतः उनकी कथानक रूढ़ियों में साधारण चरवाहा या नौकर भी आश्चर्यजनक शौर्य-वीर का प्रदर्शन कर अभीष्ट एवं असम्भव कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ होता है। "सिंगबोंगा" या अन्य बोंगा का मानव रूप, विशेषकर वृद्ध पुरूष के रूप में प्रकट होना "हो" लोक-कथाओं में कथानक रूढ़ियों के रूप में पचुर मात्रा में विद्यमान है। "हो" लोक-कथाओं में निम्नांकित कथानक रूढ़ियों का प्रयोग हुआ है –

१. सिंगबोंगा का मानव (नौकर) के रूप में आना (सेंगेल गमा)।
२. सिंगबोंगा का दया करने हेतु बूढ़ा-बूढ़ी या ब्राह्मण के रूप में प्रकट होकर वरदान देना (राजा की लड़की एवं मंत्री के लड़के की कथा)
३. सिंगबोंगा द्वारा आकाश से आग की वर्षा (सेंगेलगमा)
४. सिंगबोंगा द्वारा मूर्ति को स्त्री (युवती) बना देना (हेरो पर्व की कथा)
५. परी का फूल में वास एवं मानव रूप में रूपान्तरण (फूल की परी)
६. राक्षस का मिलना और मनुष्य को खाने के लिये ले जाना (गरीब लड़के की कथा)
७. राक्षसों द्वारा राजकुमारी से विवाह करने एवं हरण करने का षड्यंत्र (राजकुमारी और मंत्री पुत्र की कथा)
८. राक्षस द्वारा चमत्कार-रोटी का वृक्ष (गरीब लड़के की कथा)
६. राक्षस के नाक-कान काटकर पहचान प्रस्तुत कर पुरस्कार पाना (मसूर दाल की कथा)
१०. गरीब लड़की को जंगल में राजकुमार का मिलना और विवाह (दो बहनों की कथा)

११. शर्त पूरा करने पर गरीब लड़के की राजकुमारी से शादी (दहेज की उत्पत्ति, कुम्हार के लड़के की कथा, बीर चेडेया, दो पण्डुक बच्चों की कथा)
१२. परकाया प्रवेश या रूपान्तर (डोंड़ साँप की कथा, सबई घास की उत्पति, कुम्हार के लड़के की कथा, गले में चिह्न वाली पाण्डुकी)
१३. पुनर्जन्म या पुनर्जीवित होना (कुम्हार के लड़के की कथा, मनुष्य भक्षी की कथा)
१४. सन्देशवाहक पक्षी (आग की वर्षा, जंगली भैसों का पालतू होना)
१५. पशु धातृ या अभिभावक-पोषक (कुम्हार के लड़के की कथा, साँभर धातृ)
१६. बाघ का मानववत व्यवहार (नवयुवती की कथा, दुष्ट भाभी का अन्त)
१७. सियार या लोमड़ी द्वारा न्याय (एक डाकुआ की कथा, एक लोमड़ी का कलापूर्ण छल, एक सियार की धूर्तता)
१८. सात समुद्र पार जाना (बीर चेंडेया)
१६. हाथी को सात समुद्र पार फेंकना (बीर चेंडेया)
२०. हड्डी के अवशेष से पुनर्जन्म (मनुष्यभक्षी की कथा, सबई घास की कथा, नवयुवती की कथा, गले में चिह्न वाली पंडुकी, दो बहनों की कथा)
२१. दुष्ट भाभियाँ एवं उनका अन्त (दुष्ट भाभी की कथा, सबई घास की कथा, नवयुवती की कथा, गले में चिह्न वाली पंडुकी)
२२. साँप तथा शेरनी द्वारा दूध देना (छोटी बहन)
२३. चूहे का मनुष्यवत व्यवहार एवं गुप्त सूचना देना (बुइदू बूढ़ा और चूहे की कथा)
२४. सात भाई एवं एक बहन (छोटी बहन, एक साँभर धातृ)
२५. दुष्ट स्त्री को कुएँ में डाल कर मार देना (छोटी बहन)
२६. सात की संख्या (रितुई गोंडाई की कथा, एक भाई का प्रतिशोध, दुष्ट भाभी का अन्त, एक साँभर धातृ, लुगुन गोत्र की कथा, पूर्ति गोत्र की कथा, राजकुमारी और मंत्री की कथा)
२७. मार्ग में राजकुमारी का मिलना और शादी होना (मसूर दाल की कथा)
२८. बाघ का मानव शिशु के लिये खेल आदि की सामग्रियाँ प्राप्त करना (कुम्हार

के लड़के की कथा)

२६. सर्प का अण्डा खाने से सर्प बन जाना (डोंड़ साँप की कथा)

३०. पशु-अंग (सींग आदि) से विभिन्न जीवों का जन्म (दो पंडुक बच्चों की कथा)

३१. आम खाने से गर्भ-धारण (दुष्ट रानी की कथा)

३२. उपदेश या वरदान से कार्य सिद्ध होना (जंगली भैसों का पालतू होना)

३३. सुंदर केश से मोहित होकर राजकुमारी का शादी करना (जंगली भैसों का पालतू होना)

३४. पशु द्वारा मानव की तरह प्रतिशोध लेना (एक लोमड़ी और भालू, दो सियार, एक बाघ और एक बंदर की कथा)

३५. साँप का रस्सी बन जाना (गले में चिह्न वाली पंडुकी का जन्म)

३६. गीत गाने से तालाब में पानी भर जाना (वृक्ष एवं सबई घास का जन्म)

३७. एक राजा की सात रानियाँ (दुष्ट रानी की कथा)

३८. छोटी रानी का दुष्ट होना (दुष्ट रानी की कथा, तुङ् राजा और पोंचइति)

३६. पुत्र प्राप्ति के लिये तपस्या करना (दुष्ट रानी की कथा)

४०. पशु द्वारा मानववत प्रतिशोध (एक लोमड़ी और एक भालू, दो सियार, एक बाघ और एक बंदर की कथा)

४१. अपने रक्षक को मारने के लिये तैयार होना (सियार की चालाकी, एक लोमड़ी का कलापूर्ण छल)

४२. बाघ का मनुष्य के साथ भोजन करना (एक नवयुवती की कथा)

४३. मछली के पेट से मानव का जन्म (कुम्हार के लड़के की कथा)

४४. मनुष्य के हड्डी-मांस से फलदार वृक्ष का जन्म (नरभक्षी की कथा)

४५. वृक्ष का मानव की तरह बोलना (नरभक्षी की कथा)

४६.वन में या मार्ग में अनायास धन की प्राप्ति (एक भाई का प्रतिशोध)

४७. ढोल में मधुमक्खियों को भरना और उनसे दुश्मन (दो भाइयों का साहसिक कार्य)

४८. मानव हड्डी के वाद्ययंत्र में प्रयोग से मानव-स्वर निकलना (दो बहनों की कथा)

४६. अमृत या अभिमंत्रित जल से पुनः जीवित हो जाना (दो बहनों की कथा)

५०. जादू-टोना के लिये सरसों के बीज का प्रयोग (राजकुमारी एवं मंत्री पुत्र की कथा)

५१. सूप का कान तथा कुदाल का दाँत के रूप में प्रयोग करना (मसूर दाल की कहानी)

५२. राजकुमारी को भगा ले जाना (राजकुमारी और मंत्री पुत्र की कथा)

५३. जादुई तलवार (राजकुमारी और मंत्री पुत्र की कथा)

उपर्युक्त कथानक रूढ़ियों से स्पष्ट है कि "हो" लोक-कथाओं में भी कथानक रूढ़ियाँ काफी संख्या में प्रयुक्त हुई हैं जो लोक-कथा को पूरा करने एवं मनोरंजक बनाने का प्रसाधन है।

षष्ठ अध्याय

"हो" लोक कथा और "हो" संस्कृति

1. संस्कृति की सामान्य अवधारणा तथा लोक कथा के साथ पारस्परिक सम्बन्ध

"संस्कृति" शब्द सम् उपसर्ग के साथ संस्कृत की (उ) कृ (ञ्) धातु से बनता है, जिसका मूल अर्थ साफ या परिष्कृत करना है। आज की हिन्दी में यह अंग्रेजी शब्द "कल्चर" का पर्याय माना जाता है। संस्कृति समस्त सधे हुए व्यवहार अथवा उस व्यवहार का नाम है जो सामाजिक परम्परा से प्राप्त होता है। संस्कृति को सामाजिक प्रथा का पर्याय भी कहा जाता है।*1

संस्कृति का मुख्य उद्देश्य है, विभिन्न संस्कारों द्वारा व्यक्ति की प्रतिभा और योग्यता का पूर्ण विकास। इस संस्कृति की सहज और सरल अभिव्यक्ति कर्तव्यों के प्रति वैयक्तिक एवं सामाजिक जागरूकता एवं कृतज्ञता के परिपालन के रूप में होती है।

संस्कृति अन्तःकरण और सभ्यता शरीर है। संस्कृति एक प्रकार का साँचा है, जिसमें समाज के विचार ढलते हैं। संस्कृति समाज की आत्मा और प्राण शक्ति हैं।*2

डॉ. राजबली पाण्डेय के अनुसार-संस्कार किसी भी धर्म या सम्प्रदाय के महत्त्वपूर्ण अंग है। इतिहास के आरम्भ से ही वे धार्मिक तथा सामाजिक एकता के प्रभावकारी माध्यम रहे हैं। उनका उदय सुदूर अतीत में हुआ था और कालक्रम से अनेक परिवर्तनों के साथ वे आज भी जीवित हैं। ....संस्कारों का उद्देश्य व्यक्तित्व के विकास द्वारा मनुष्य का कल्याण और समाज तथा विश्व से उसका सामंजस्य स्थापित करना है। संस्कार जीवन के विभिन्न अवसरों को महत्त्व और पवित्रता प्रदान करते हैं।*3

ऐतिहासिक क्रमानुसार संस्कृति के अनेक विकसित स्वरूप सामने आते हैं।

---

*1 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. १३०

*2 संत काव्य में लोक संस्कृति - "समाज" त्रैमासिक, अक्टूबर १९५८, श्री त्रिलोकीनारायण दीक्षित, पृ. ४५०

*3 हिन्दू संस्कार (प्रस्तावना) डॉ. राजबली पाण्डेय, पृ. ४-५

वैदिक संस्कृति हजारों वर्षों के व्यतीत हो जाने पर भी हमारे लिये आज भी वरेण्य है, जिसमें विश्व का कल्याण, जगत् की शांति एवं चराचर के हित की कामना मुखरित है। अतः यह संस्कृति गंगा की पावन धारा के समान सतत उत्कर्षमयी रहेगी। *1

संस्कृति के प्रमुख छः अंग हैं -

१. सामाजिक

२. धार्मिक

३. कलात्मक

४. राजनीतिक

५. आर्थिक

६. प्राकृतिक

किसी प्रदेश विशेष की सामाजिक व्यवस्था, धार्मिकता, कलात्मक अभिवृद्धि, राजनैतिक चेतना, आर्थिक दृढ़ता, प्राकृतिक अभिरूचि से ही उसकी सांस्कृतिक जागृति का अनुमान लगाया जाता है। समृद्ध संस्कृति में समाज उत्तरोत्तर वृद्धि करता है। जन-जन की मानसिक प्रवृत्तियाँ धार्मिक बनती है, कलात्मकता जीवन की साँसों को एक अभिनव उल्लास से अनुप्राणित करती रहती हैं, राजनैतिक प्रबुद्धता मानवीय विचारों के आदर्श शासक एवं शासित के चिन्तन में संलग्न करती हैं तथा आर्थिक समृद्धि जन-जन के जीवन को जीने के योग्य बनाती हैं, शालीनता लाती है, पारस्परिक कालुष्य की कालिमा को क्षीण करती है और सामाजिक विषमता को मिटा देती है। प्राकृतिक वैभव सांस्कृतिक सजगता में उदारता, व्यापकता, सुदृढ़ता एवं परोपकार की वृद्धि करता है। *2

मानव-विज्ञान की दृष्टि से संस्कृति उतनी ही पुरानी है जितना मानव। .... अलग-अलग क्षेत्रों में मानव-समाज ने अपनी यौन भावना, भूख, आवास, पारस्परिक वार्तालाप एवं आदान-प्रदान सम्बन्धी मलू आवश्यकताओं की पूर्ति सम्बन्धी विशिष्ट जीवन-प्रणाली का सृजन किया, जिसे हम "संस्कृति" की संज्ञा देते हैं। *3

एक अमरीकी मानव वैज्ञानिक के अनुसार "कल्चर इज द मैन मेड पार्ट

---

*1 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. १३२

*2 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. १३३-१३४

*3 भारतीय संस्कृति : मेरी दृष्टि में, आदिवासी अंक अक्टूबर १६७८, पृ. ५-प्रो. ललिताप्रसाद विद्यार्थी

ऑफ द इनविरॉनमेण्ट।" इस प्रकार संस्कृति को पर्यावरण का मानव निर्मित भाग भी कहा गया है।

संस्कृति मानवीय उद्देश्यों, विचारधाराओं की मानवीय साधनों की समष्टि है। भारतीय संस्कृति में "विभिन्नता" में एकता है। भाषा की विभिन्नता का राजनीतिक पक्ष जो "हो" साहित्य एवं उनमें अभिव्यंजित सामग्री के विश्लेषण से सांस्कृति समानता ही परिलक्षित होती है।

संस्कृति के सम्बन्ध में टायलर ने यह परिभाषा दी है - वह जटिल इकाई जिसके अन्तर्गत ज्ञान, विश्वास, कला, आचार, विधि, रीति और अन्य वे क्षमताएँ और अभ्यास सम्मिलित हैं जिन्हें मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में अर्जित करता है।*1

मैलिनोवस्की के अनुसार - संस्कृति के अन्तर्गत वंशगत शिल्पतथ्यों, वस्तुओं, तकनीकि प्रक्रियाओं, धारणाओं, अभ्यासों तथा मूल्यों का समावेश हो जाता है।*2

संस्कृति को आन्तरिक और बाह्य व्यक्त और अव्यक्त, इन दो पक्षों में विभाजित कर देखने की आवश्यकता है। व्यक्त संस्कृति रीतियों, प्रथाओं, आचारों, कलाओं और विभिन्न प्रकार के शिल्प-तथ्यों की समष्टि है तो अव्यक्त संस्कृति इन रूपों में मूर्त होने वाले मूल्यों और प्रयोजनों का समाहार।*3

संस्कृति सामाजिक मनुष्य के जीवन की सबसे बड़ी वास्तविकता है। इसी साधन के द्वारा वह परिवेश के साथ अपना समायोजन करता है। उसके द्वारा अपनी संस्कृति को अर्जित करने की - संस्कृतिकरण की यह प्रक्रिया आजीवन चलती रहती है।

संस्कृति विभिन्न पक्षों जैसे - धर्म, भाषा, संगीत, अर्थ-व्यवस्था, परिवार आदि में विभाजित रहती है, किन्तु इसके सभी पक्ष परस्पर सम्बद्ध और सकेन्द्रित होते हैं।*4

व्यक्ति अपनी संस्कृति द्वारा निर्णीत होता है और यही उसकी रचनात्मक अभिव्यक्ति का क्षेत्र निर्धारित करती है। .....संस्कृति व्यक्ति या व्यक्तियों से अधिक

---

*1 प्रिमिटिव कल्चर - १८७१, पृ. १ श्री टायलर

*2 एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल सायन्सेज १६३१, पृ. ३२१ श्री मैलिनोवस्की

*3 लोक साहित्य और संस्कृति - पृ. ८४, डॉ. दिनेश्वर प्रसाद

*4 लोक साहित्य और संस्कृति - पृ. ५८-८६, डॉ. दिनेश्वर प्रसाद

बड़ी होती है। ....व्यक्ति, समाज और संस्कृति की व्यवहार इकाई है - उसी के माध्यम से उसकी निरन्तरता का वहन और कार्यान्वयन होता है।*1

श्रीत्रिलोकी नारायाण दीक्षित ने लोक-संस्कृति के निम्नांकित मूल तत्त्वों को प्रस्तुत किया है।*2

१. भिन्नता में एकता

२. बाह्य रूप में परिवर्तन परंतु सात्त्विक स्थिरता

३. मानवता एवं सहिष्णुता

४. प्रकृति से अभिन्न सम्बन्ध

५. सत्य परिपालन

.६. विद्या और कला की उन्नति

७. आध्यात्मिक विकास

८. तत्त्वज्ञों का समय-समय पर आविर्भाव

९. ज्ञान की पिपासा

१०. द्रव्यमूलक शासन।

लोककथा और संस्कृति का पारस्परिक सम्बन्ध - संस्कृति के लोक साहित्य के कई प्रकार के सम्बन्ध हैं, जिनमें मुख्य हैं - प्रतिफलन, इच्छापूर्ति, आलोचना, शिक्षण और संचालन। बोआज ने केवल लोक-साहित्य के आधार पर सितिशियन जाति की जीवन-पद्धति का पुनर्निर्माण किया। उसके प्रयत्न से यह धारणा और भी दृढ़ हुई कि लोक-साहित्य संस्कृति को प्रतिफलित करता है अर्थात् लोक कहानियों और मिथों में जो सामग्री मिलती है, वह एक अर्थ में जाति-विशेष का आत्मचरित है। उनमें वही घटनाएँ और प्रसंग मिलते हैं जो किसी समाज की दृष्टि में सार्थक और महत्त्वपूर्ण होते हैं, अतएव वे उसकी अभिरूचि, विश्वास और मूल धारणा की अवगति के प्रामाणिक साधन हैं।*3

लोक-साहित्य की सामग्री प्रायः सामुदायिक जीवन की समकालीन

---

*1 लोक साहित्य और संस्कृति - पृ. ६२, डॉ. दिनेश्वर प्रसाद

*2 संत काव्य में लोक संस्कृति - "समाज" त्रैमासिक, अक्टूबर १९५८, श्री त्रिलोकीनारायण दीक्षित, पृ. ४५०

*3 लोक साहित्य और संस्कृति - पृ. १०८, डॉ. दिनेश्वर प्रसाद

वास्तविकता को चित्रित करती है और उसका यदि व्यवस्थित रीति से अध्ययन किया जाय तो वह जाति विशेष के व्यक्त और अव्यक्त भौतिक और मानसिक जीवन को अद्‌भुत रूप में उजागर कर सकती है।

यदि कुछ अपवादों को छोड़कर विचार किया जाय तो समस्त भारतीय लोक कहानियों की एक मुख्य विशेषता उनकी सुखान्तता है। यह सुखान्तता सत्य और न्याय की विजय के आस्थामूलक दृष्टिकोण को व्यक्त करती है और भारतीय लोक-मानस की अवगति का एक मूल्यवान् सूत्र है।[*1]

लोक-साहित्य वास्तविकता का ही नहीं, अपेक्षा का भी चित्रण करता है। वास्तविकता और अपेक्षा का द्वन्द्वसंस्कृति के रचनातन्त्र की एक बुनियादी विशेषता है और यह शायद कहावतों में सबसे अधिक प्रत्यक्षता से व्यक्त होता है।[*2]

ये लोक कहानियाँ हैं जिनके माध्यम से लोक-संस्कृति ने अनन्त यात्राएँ की है, लोक की वसुन्धरा के प्रत्येक भाग को देखा और समझा है। लोक की आत्मा को मुखर करने वाली लोक-संस्कृति के मूल में मुख्यतः एक लोककथा रहती है।[*3]

डॉ. सम्पूर्णानन्द ने लोक-कथा और लोक-संस्कृति के सम्बन्ध पर प्रकाश डालते हुए लिखा है-''ऐसा माना जाता है कि लोक-संस्कृति के मूल में ''मिथ्स'' हुआ करता है। ....कथा भी कई प्रकार की होती है। एक तो वह कथाएँ हैं जिनका सम्बन्ध उन समाजों और उन संस्कृतियों से है, जिनका आज लोप हो गया है। मिश्र देश की कथाएँ इसका उदाहरण हैं। दूसरी, वह कथाएँ हैं जो आज भी प्रचलित हैं। उन कथाओं की एक विशेषता होती है। निश्चय ही इनका आधार कोई ऐसी घटना होती है, जो कभी प्राचीन काल में घटित हुई मानी जाती है। परंतु जब वह लोक-संस्कृति में अवतरित होती है तो अपने पुरानेपन के साथ नूतन आवरण अपना लेती है। वह लोगों के दैनिक जीवन की किसी पहलू का प्रतीक बन जाती है। इसलिये वह जीवित घटना बन जाती है, ऐसी घटना का अतीत नहीं, वर्तमान है।[*4]

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के कथनानुसार-''भारतीय संस्कृति का सच्चा एवं

---

*1 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. १०५

*2 लोक साहित्य और संस्कृति - डॉ. दिनेश्वर प्रसाद, पृ. १०७

*3 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. १३६

*4 ''समाज'' पत्रिका - अक्टूबर १९५८ - डॉ. सम्पूर्णानन्द, पृ. ४२४

स्वाभाविक चित्रण लोक साहित्य में उपलब्ध होता है। लोकसंस्कृति के वास्तविक स्वरूप को देखने के लिये हमें लोक-साहित्य का ही अनुसन्धान करना होगा। पारिवारिक जीवन के जो मर्मस्पर्शी दृश्य यहाँ उपलब्ध हैं, उनके दर्शन अन्यत्र कहाँ......यहाँ जहाँ माता और पुत्री का दिव्य प्रेम दिखलाया गया है, वहाँ सास-बहू तथा भावज-ननद के कटु एवं विषाक्त व्यवहार का वर्णन भी है। भाई-बहन के निःस्पृह पवित्र और दिव्य प्रेम का वर्णन करने के लिये जो भी विशेषण प्रयुक्त किया जाय, वह थोड़ा ही हैं।"[*1]

लोक-संस्कृति की सुरक्षा एवं विकास के लिये लोक-कथाओं का महत्त्व सर्वोपरि है। विश्व के अनेक देशों में लोक-कथाओं का संकलन एवं संग्रह इस बात का परिचायक है। स्वीडेन में चार सौ से भी अधिक ऐसे संग्रहालय हैं जहाँ स्थानीय संस्कृति के प्रतीकों तथा उपकरणों और वहाँ के मौखिक साहित्य विशेषकर लोककथाओं को सुरक्षित रखने का यत्न किया गया है।

इसी भाँति फिनलैण्ड में लोक-जीवन सम्बन्धी श्रेष्ठ संग्रहालय स्थापित किये गये हैं, जिसमें मौखिक साहित्य के विशद् संग्रह उपलब्ध है।

आयरलैण्ड की राजधानी डब्लिन में लोक-कथाओं का संसार का सम्भवतः सबसे बड़ा संग्रहालय है।[*2]

इस प्रकार लोक-कथाओं की उपयोगिता, लोक-संस्कृति के संरक्षण एवं अध्ययन के लिये अतर्कित है। इन लोक-कथाओं की व्यापकता में जो विशालता देखने को मिलती है, इनमें भारतीय समन्वयवाद, भाग्यवाद, कर्मवाद, सामाजिक संगठन, अध्यात्मकवाद, सहिष्णुता, मानववाद आदि के शाश्वत स्वर मुखरित हो रहे हैं। सामाजिक उदारता में कल्पित जातिभेद का यहाँ स्थान नहीं है।

इस प्रकार लोक-संस्कृति इन कथाओं में समाहित होकर चिरन्तन बन गयी है। बोआस के मतानुसार - "लोक जीवन यापन के ढंग सम्बन्धी जो विवरण लोक-कथाओं में आते हैं उनमें समूह के रीति-रिवाज प्रतिबिम्बित दिखायी पड़ते हैं।" इस प्रकार बोआस लोक-कथाओं को एक प्रकार से समूह की आत्म-कथा मानते हैं।[*3]

किसी भी जनजाति की लोक-कथाओं में उपर्युक्त सारी विशेषताएँ पायी जाती

---

*1 लोक-साहित्य की भूमिका - डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, पृ. २३०

*2 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. १३७

*3 लोक कथा विज्ञान - श्रीचन्द्र जैन, पृ. १३८-१३९

हैं। "हो" लोक-कथाओं में भी लोक-जीवन एवं लोक-संस्कृति की सारी विशेषताएँ एवं उनका अन्योन्याश्रय सम्बन्ध हमें मिलता है। प्रायः सभी "हो" लोक-कथाएँ सुखान्तता के साथ ही समाप्त होती हैं। इन कथाओं में भविष्य के प्रति आशान्वित होने का दृढ़ विश्वास भी परिलक्षित होता है। इन कहानियों में मर कर भी लोग जी उठते हैं और अल्पावधि का कष्ट या विरह कथा के अन्त होने के पूर्व समाप्त हो जाता है और कथा का अन्त मिलन से एवं अभिप्रेय वस्तु या व्यक्ति की प्राप्ति से ही होता है। जहाँ मनुष्य की सीमित शक्ति अभिप्रेय वस्तु या फल की प्राप्ति में असमर्थ होती है वहाँ "सिंगबोंगा" (ईश्वर) उपस्थित होकर या अवतार के रूप में आकर अभिप्रेय फल को दिलाने में सहायक होते हैं। प्रायः सभी "हो" लोक-कथाओं में सत्य की विजय एवं असत्य का नाश दर्शाया गया है।

2. "हो" लोक–कथाओं में "हो" संस्कृति – लोक-कथाएँ किसी जाति या समुदाय विशेष के व्यक्तिगत एवं सामूहिक जीवन की सांस्कृतिक विशिष्टताओं को अभिव्यक्त करती हैं। ये कथाएँ आदिमयुग से चली आ रही हैं और अनन्त काल तक चलती रहेंगी। लोक-जीवन के आदिकाल से ही उनका जन्म हुआ होगा। इन कथाओं में विशेषकर आदिम जाति की कथाओं में जो अधिकांशतः मौखिक होती हैं, लोक-जीवन की सांस्कृतिक चेतना अधिक मुखर रहती है। लोक-कथाओं में जो अधिकांशतः मौखिक होती हैं, लोक-जीवन की सांस्कृतिक चेतना अधिक मुखर रहती है। लोककथाओं के कथक्कड़ इन कथाओं में युग-विशेष में समाज की स्थिति, आर्थिक-राजनीतिक व्यवस्था, पारिवारिक जीवन आदि का चित्र उपस्थित कर देते हैं। कालक्रमानुसार इनमें परिवर्तन-परिवर्द्धन होता रहता है।

"हो" लोक-कथाओं में "हो" संस्कृति का जीवन्त रूप हमें देखने को मिलता है। "हो" जनजाति प्रारम्भिक काल में घुम्मकड़ एवं शिकारी जीवन जीती रही थी। "हो" प्रदेश-सिंहभूम में आने के पूर्व ये लोग अपने पूर्वजों (मुण्डा जाति) के साथ छोटानागपुर में कुछ काल तक रहे। सिंहभूम में आने के बाद भी उन्हें विभिन्न जातियों (विशेष कर भूइयाँ) से संघर्ष करना पड़ा और साथ ही "असुर" लोगों के साथ भी इनका टकराव हुआ। "हो" जनजाति के लोग वहाँ के सामन्तवादी राजाओं एवं जमीन्दारों के शोषण के विरूद्ध भी बराबर संघर्ष करते रहे। उनके वन्य जीवनकाल में वन्य पशुओं के साथ बिताये गये जीवन की झलक उनकी लोक-कथाओं में मिलती है।

"हो" समाज पूर्व से ही पितृकुल प्रधान समाज रहा है। फिर भी वहाँ स्त्रियों का स्थान समाज में महत्त्वपूर्ण रहा है। "हो" लोगों की सामाजिक व्यवस्था अन्य जातियों से कुछ भिन्न रही है; क्योंकि अधिकांश ग्रामों में एक गोत्र (किली) विशेष के ही लोग पूर्व से बसते आये हैं। वहाँ जमीन या अर्थ-व्यवस्था उनकी अपनी होती है। वहाँ की जमीन पर वहाँ बसने वाले गोत्र विशेष के लोगों का व्यक्तिगत एवं सामूहिक अधिकार रहता है। "हो" समाज की अपनी सामाजिक व्यवस्था है, जिसके अपने नियम हैं। "हो" समाज में अपने गोत्र के बाहर ही शादी-ब्याह होता है। समाज के नियम को भंग करने पर व्यक्ति विशेष को समाज की ओर से दण्डित किया जाता है। "हो" समाज आरम्भिक युग में आखेट का प्रेमी रहा है। इनकी "गोत्र-कथाओं" के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि आखेट के क्रम में इनके सम्पर्क में आये पशु-पक्षी, वन-सम्पदा, नदी-झरना आदि जो भी हितकर सिद्ध हुए, इनके "गोत्र-प्रतीक" बन गये। "देवगम पक्षी" से "देवगम गोत्र", पीपल के पेड़ से काइका गोत्र, जामुन के रस से कुदादा गोत्र, झरना के नाम पर जामुदा गोत्र आदि की उत्पति हुई। इन्हीं कारणों से "हो" जनजाति में "गोत्र" की अब तक संग्रहित संख्या १२५ बतायी गयी है। इनमें बहुत-से उप-गोत्र सम्मिलित हैं। इन गोत्रों का अलग-अलग उद्भव-स्थान है। यथा - "अल्डा" का गंजिया, बालमुचु का गुइरा, बानरा का टोंटो, बासिंग का भोया, बारी का खूँटा, बिरूआ का लागड़ा, बोयपाई का पंडाबीर आदि ग्राम उनक उद्भव स्थान है।*1

सामाजिक दृष्टि से "हो" अपने समाज में तीन दृष्टियों से विशिष्ट रूप से जुड़ा होता है। प्रथमतः वह अपने परिवार का सदस्य होता है जिसके प्रति उसकी अपनी खास जवाबदेही होती है। द्वितीयतः वह जिस "गोत्र" का होता हे, उसके प्रति भी उसके कुछ अधिकार एवं कर्तव्य होते हैं। तृतीय, वह जिस ग्राम का निवासी होता है, उस गाँव के प्रति भी उसकी अपनी जवाबदेही होती है। उसके गोत्र का स्थानीय गोत्र के मामले में हो जनजाति के नियम बहुत कठोर हैं और प्रधान व्यक्ति ही ग्राम का मुण्डा होता है, जो उस ग्राम का प्रधान होता है। अपने गोत्र के प्रति पूरी निष्ठा एवं नियमों का पालन करने के प्रति "हो" लोग काफी जागरूक हैं। वे गोत्र के नियम एवं हित के विरूद्ध कोई कार्य नहीं करते। "गोत्र के नियम एवं मर्यादा को भंग करने वाले को "गोत्र" का मुखिया दण्डित करता है। "गोनोङ्" का जन्म शीर्षक कथा में सामाजिक नियम को भंग करने

---

*1 "हो" ग्रामर एण्ड वोकेबुलरी - श्री जे. डीनी, एस. जे., पृ. ११०-११९

वाली लड़की को सजा देने का प्रावधान था जो "मृत्युदण्ड" के समान था। बाद में इसे बदल दिया गया; क्योंकि वह अमानवीय था। इसी प्रकार सामन्तवादी युग में "हो" समाज में "रितुई गोंडाई सिंहकू" नामक सम्पन्न एवं वीर व्यक्ति को राजा जगन्नाथ सिंह द्वारा (जगन्नाथपुर में) झूठे इलजाम लगाकर दण्डित किया गया था। उसका "हो" समाज ने परवर्तीकाल में सामन्तवाद के खिलाफ विद्रोह कर बदला लिया। "रितुई गोंडाई की कहानी" सामन्तवादी युग में "हो" समाज पर किये गये अत्याचारों का दृष्टान्त है।

"हो" ग्राम एक सामाजिक इकाई होता है, जिसमें एक खास गोत्र के ही लोग अधिकांशतः बसते हैं। उस गाँव में सभी सामाजिक, धार्मिक आदि कार्य उस गाँव के परिचायक हैं। बन्दगाँव की टेबोघाटी के आगे दोनों तरफ कई गाँव हैं जिनके नाम का गोत्र प्रचलित है - यथा, अंगरिया, कुदादा, जोन्को, बुड़िउली, तापे, पाड़ेया, बरजो, सिरका आदि। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि "हो" जनजाति के लोग इसी क्षेत्र में सिंहभूम (कोल्हान) में फैल गये।*1

जब "हो" सिंहभूम में आये और वहाँ अपनी बस्तियाँ बसाने का कार्य किया, उस बीच उन्हें काफी जंगल आदि साफ करना पड़ा। यह क्षेत्र उपजाऊ एवं नदी-झरनों से भरा था। अतः उन्होंने इस क्षेत्र को अपना वासस्थल बनाया।

जिस गोत्र के लोग जिस जंगल को साफ कर कृषि योग्य एवं बास-स्थल बनाये, उस क्षेत्र के वे "खूँटकट्टीदार" हो गये। इसका अर्थ होता है "जंगल की सफाई" करनेवाले। इस प्रकार जो ग्राम बने एवं वहाँ जितनी भूमी खेती योग्य बनी, वह उस गाँव में बसने वाले एक गोत्र विशेष के लोगों की सामूहिक सम्पत्ति बन गयी। अभी भी "हो" ग्रामों में पूरी जमीन एक गोत्र विशेष की होती है। उस गोत्र का मुखिया एवं उसके वंशधर उस जमीन का भोग कर सकते हैं। उसे बेच या हस्तान्तरित नहीं कर सकते। "हो" लोक-कथाओं में भी घर का पशु आदि बेचने की घटना वर्णित है, परंतु जमीन बेचने का कोई प्रसंग नहीं मिलता। यह तथ्य "एक भाई का प्रतिशोध" शीर्ष कहानी में उभर कर सामने आया है। इस कथा का नायक भाइयों के अत्याचार से अपना ग्राम थोड़े समय के लिये छोड़ देता है। पंरतु जब उसकी आर्थिक स्थिति सुधर जाती है तो वह

---

*1 बुलेटिन ऑफ द बिहार ट्राइबल रिसर्च इन्स्टीच्यूट - जनवरी, १९६९. "द हो ऑफ सारन्डा" - ऐन इथनोग्राफिक स्टडी- पृ. ४६-४७ - श्रीमति आर. ओ. धान.

*2 बुलेटिन ऑफ द बिहार ट्राइबल रिसर्च इन्स्टीच्यूट - जनवरी, १९६१. "द हो ऑफ सारन्डा" - ऐन इथनोग्राफिक स्टडी- पृ. ४६ - श्रीमति आर. ओ. धान.

पुनः गाँव में आ जाता है। भाइयों के अत्याचार से पीड़ित होकर वह घर ओर जमीन नहीं बेच सका, जैसा कि अन्य क्षेत्रों में देखा जाता है।

"हो" लोगों का आर्थिक जीवन कृषि पर आधारित है। कोल्हान क्षेत्र (सिंहभूम) में मुख्यतः धान की खेती होती है और चावल ही "हो" का मुख्य भोजन है। चावल से वे "डियङ (हंड़िया) बनाते हैं जो उनका पेय ही नहीं, भोजन भी है। "हो" धान के अतिरिक्त गेहूँ, मकई आदि भी कुछ मात्रा में पैदा करते हैं। साग-सब्जी की भी वे खेती करते हैं जिसका वे साप्ताहिक हाटों में बेचकर घर के लिये नमक, तेल, साबुन आदि खरीदते हैं। जंगल से जंगली फलों, लकड़ी, दतवन, पत्ता आदि भी वे निकटवर्ती बाजारों-हाटों में लाकर बेचते हैं। हाट में बड़ा लाल "चींटा" एवं वर्षा ऋतु में पाया जाने वाला "फतींगा" भी वे भूनकर बेचते हैं, जिसे "हो" लोग खाते हैं। "हो" गो-दोहन नहीं करते। उनका यह लोक-विश्वास है कि लक्ष्मी उर्रि का दूध उनके बच्चों के पालन-पोषण के लिये है, दोहन कर बेचने या खाने के लिये नहीं। फलस्वरूप "हो" क्षेत्र में गाय या भैंस के दूध का अभाव है। "हो" गाय के दूध को एक प्रकार से गाय का रक्त मानते हैं। "हो" के घरों में "लाल चाय" ही पिया जाता है। हालाँकि ये चाय से अधिक "हंड़िया" पीना पसन्द करते हैं। किसी नवागन्तुक व्यक्ति (विशेषकर गैर आदिवासी-दीकू) से पूछते हैं कि "आप आदिवासी चाय पीयेंगे या दीकू चाय"। "हंड़िया" को ही वे आदिवासी चाय की संज्ञा देते हैं। ग्रामों एवं शहरों तथा हाटों में "हो" स्त्रियाँ "हंड़िया" का व्यापार करती हैं और यह भी उनकी आय का एक अच्छा साधन है। "हो" व्यापार बहुत कम करते हैं। फिर भी "दुष्ट भाभी का अन्त" शीर्षक कथा में "बरदा-बेपारी" अथवा बैल पर नमक का व्यापार करने वाले भाइयों का प्रसंग आया है। परंतु व्यापार उनका मुख्य पेशा नहीं है। धान या चावल का व्यापार वे केवल कृषि के उत्पादन के रूप में करते हैं। अभी भी "हो" लोगों के समाज में "अदला-बदली" का प्रचलन है जिसके अनुसार वे "चावल" या धान देकर नमक आदि प्राप्त करते हैं।

वन क्षेत्र मे रहने वाले "हो" लोगों का आर्थिक जीवन अधिक कठिन है, जहाँ उत्पादन हेतु जमीन कम है और जंगल-पहाड़ अधिक। वहाँ वन्य-पशुओं (विशेषकर हाथी) से फसल नष्ट भी अधिक किये जाते हैं। सिंहभूम का "सारन्डा" (सात सौ पहाड़ियों का प्रदेश) क्षेत्र ऐसा ही है। यहाँ की भूमि कृषि-कार्य के लिये उतना उपयुक्त नहीं है। "झूमपास" (सिप्टिंग कल्टिवेशन) भी होता है, जहाँ पहाड़ी क्षेत्र है। वहाँ की

जमीन को "हो" कई श्रेणी में बाँटते हैं। एक सर्वेक्षणात्मक अध्ययन के अनुसार उस क्षेत्र में निम्न प्रकार की कृषि-भूमि पायी जाती है -

१. गोड़ा-लाल एवं पथरीली-कंकड़ीली जमीन

२. कुदुरगोड़ा-नदी किनारे की बलुआही जमीन

३. बकई-घर से सटी हुई जमीन या बाड़ी

४. बाढ़ी-पहाड़ी ढालों पर की अपेक्षाकृत उपजाऊ जमीन

५. बेड़ा-धान खेत-घाटियों एवं नीचे की समतल भूमि के खेत।

मुख्यतः धान (गोड़ा धान) जून में बुन दिया जाता है और उन्हें नवम्बर तक काट लिया जाता है। इसे "हो" में "हम्बल-बाबा" कहा जाता है। धान काटकर जमीन में नमी रहने पर चना और मसूर छींट देते हैं जिसे फरवरी या मार्च में काटा जाता है।*1

पहाड़ियों पर जहाँ कम उपजाऊ जमीन है; "हो" झूमचास करते हैं। इसमे झाड़ी आदि को काट कर जला देते हैं और गोड़ा-गोंदली लगाते हैं। जून में वे "इरबा" (एक प्रकार का ज्वार आदि) लगाते हैं जिसे काटकर सितम्बर में "बिरही" (एक प्रकार का दलहन) लगा देते हैं। दो साल ऐसी जमीन पर खेती करने के बाद वे उसे छोड़कर अन्य स्थान को झूमचास के लिये साफ करते हैं।

आर्थिक विविधता के कारण "हो" का भोजन एवं खाद्य पदार्थ विभिन्न ऋतुओं में खाद्यान्न एवं फल फूल की उपलब्धता के अनुसार बदलता रहता है। उनका आहार वर्षभर में निम्न प्रकार का रहता है विशेषकर "सारन्डा" जैसे वन-प्रान्तर में जो कोल्हान का मुख्य भाग है -

१. जनवरी - फरवरी - चावल, मकई, ज्वार-बाजरा आदि।

२. मार्च-अप्रैल - कंदा, महुआ, पीपल साग, केन्दू, बड़ आदि के फल।

३. मई-जून - कोयनार साग, गेठी-कन्दा, जामुन, आम आदि के फल।

४. जुलाई-अगस्त - चाटू, पटकोई, भाजी, उमुन्दु, सिरगित, मुनगा आदि की पत्तियाँ। मुख्यतः महुआ से "सोरगा" आदि

*1 आदिवासी - २१ अगस्त, १९८०, पृ. हो जीवन, समाज एवं संस्कृति श्री योगेन्द्र मुनि तथा "हो दिशुम हो होने को" - भाग १, पृ. ६२ - श्री धनुर सिंह पूर्ति।

बनाकर खाते हैं (वर्षाऋतु में)

५. सितम्बर - गोंदली।

६. अक्टूबर-नवम्बर - मकई एवं गोड़ा धान*1

"हो" प्रदेश में अनेक पेड़-पौधे हैं, जिन्हें खाने, दवा-दारू या जादू-टोना के कार्य में प्रयुक्त किया जाता है। इनसे तेल भी निकाला जाता है। जैसे- महुआ, सखुआ, नीम तथा करंज के बीज से तेल निकालकर "हो" लोग अपने कार्य में लाते हैं। अधिकांश "हो" नीम का तेल लगाते हैं, विशेषकर औरतें इसका सेवन करती हैं। अब बाजार से भी सुगन्धित तेल खरीदकर व्यवहार में लाते हैं।

पशुपालन का कार्य भी "हो" करते हैं और पशुओं के लिये एक निवास स्थल होता है "जहाँ गोएटे या गोटो बोंगा" निवास करते हैं और पशुधन की रक्षा करते हैं। "हो" गाय एवं बैल तथा भैंस-भैंसा को कृषि-कार्य के लिये पालते हैं। वे नर-मादा, दोनों को हलों में या बैलगाड़ी में जोतते हैं।

बकरा एवं मुर्गा पालन भी वे करते हैं। ये दोनों पशु-पक्षी उनके लिये भोजन से अधिक धार्मिक अनुष्ठान के अवसरों पर बलि देने में प्रयुक्त होते हैं। बकरा मुख्यतः अन्तिम संस्कार "तोपा" "तेन तोपा" (कब्र पर चट्टान रखने) के समय बलि के रूप में मारा जाता है। जब किसी अवसर विशेष पर मेहमान आते हैं, तब भी बकरा काटा जाता है। शादी-ब्याह के अवसर पर या सम्बन्ध अच्छा बनाने के लिये तथा किसी को जुर्माना देने या शुद्धिकरण के अवसर पर भी बकरे का भोज दिया जाता है।

मुर्गा "हो" समाज में विशेष महत्त्व रखता है। उसकी बलि देकर विभिन्न बोंगाओं की पूजा-अर्चना कर उन्हें प्रसन्न किया जाता है। "मुर्गा" उनके आर्थिक जीवन में भी महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। मुर्गा, मुर्गी एवं अण्डा बेचकर "हो" कपड़ा, तेल, साबुन आदि खरीदते हैं। "मुर्गा लड़ाई" भी सिंहभूम में "हो" का प्रमुख खेल एवं जुआ है जिसमें हजारों रूपयों की हार-जीत होती है। मुर्गा लड़ाई का मुख्य मास दिसम्बर से फरवरी तक है।

इसके अतिरिक्त वे जंगली बकरी, वनमुर्गी, हिरण, साँभर आदि का शिकार कर जीवन-यापन करते हैं। "हो" तीरंदाजी में सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं। "कुम्हार के लड़के की कथा" एवं "गोनोङ्" की उत्पत्ति की कथा में तीर से बाघों को मारने की

---

*1 श्री नोवेल जोजोवार, बिहार प्रशासनिक सेवा द्वारा कथित एवं संपुष्ट तथ्यों के आधार पर संकलित।

घटना वर्णित है। आज भी ''हो'' जाति के तीर-धनुष उनके मुख्य शस्त्र हैं और अभी भी उनका निशाना अचूक होता है।

विभिन्न लोक-कथाओं में फल चुनने, शिकार करने आदि का प्रसंग आता है। ''दो बहनों की कथा'', गोत्र कथाओं में ''लुगुन गोत्र'', ''समद गोत्र'' आदि में शिकार कर भरण-पोषण की बात कही गयी है। पूर्व काल में जब ''हो'' वनों में भटकने वाली बनजारा जाति की तरह जीवन व्यतीत कर रहे थे, उस समय फलों और जानवरों के शिकार पर ही उनका भरण-पोषण निर्भर था। अभी भी वनों में उपलब्ध कंद-मूल फल-फूल वन्य पशु इनके जीवन-यापन में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

शिक्षा एवं औद्योगिक विकास से उनके जीवन में भी परिवर्तन आया है। सिंहभूम में लोहा, मैंगनीज, चूना, तांबा आदि की खानें हैं। साथ ही, जमशेदपुर में टाटा के कारखाने, जादूगोड़ा में यूरेनियम का खान एवं प्लाण्ट, घाटशिला में तांबा का कारखाना आदि की स्थापना से खानों एवं उद्योगों में ''हो'' लोगों को नौकरी करने का सुअवसर मिला है और वे मजदूर की श्रेणी से लेकर उच्च पदों पर भी कार्यरत हैं। भारतीय प्रशासनिक सेवा, बिहार तथा झारखंड प्रशासनिक सेवा, वित्त सेवा, भारतीय वन सेवा, आरक्षी सेवा, सेना आदि में ''हो'' के पढ़े-लिखे युवक उच्च पदों पर सेवारत हैं। शिक्षा के प्रसार एवं विकास से उनका जीवन-स्तर, आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्थिति आदि में यथेष्ट सुधार एवं प्रगति परिलक्षित है।

''हो'' जीवन समाज और संस्कृति पर श्री योगेन्द्र मुनि ने अपने निबन्ध में कुछ तथ्यों को उजागर किया है जो ''हो'' समाज की विशेषताओं को प्रकाशित करता है।

उनके अनुसार ''हो'' समाज में संस्कारों का बहुत महत्त्व है। ''हो'' समाज मे ''गर्भाधान'' से लेकर मृत्यु पर्यन्त अनेक संस्कार हैं जो उनके जीवन को शुद्धता प्रदान करते हैं। इन संस्कारों में गर्भाधान संस्कार, शुद्धि संस्कार, सामाजिक संस्कार, विवाह संस्कार, अन्तिम संस्कार एवं श्राद्ध संस्कार प्रमुख है। ''गर्भाधान संस्कार'' से सम्बन्धित कहानी ''दुष्ट रानी की कथा'' जिसमें ईश्वर का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिये राजा पूजा-अर्चना करता है और उसे फल की प्राप्ति के रूप में ''पुत्रों'' की प्राप्ति होती है। आम्रफल के सेवन से सभी रानियाँ गर्भवती होती हैं। छोटी रानीी इस संस्कार के महत्त्व को नहीं समझी और इसको मानने में त्रुटि कर देती हैं, जिसके फलस्वरूप उसके सुन्दर बच्चे का मुख, ''नेवला'' जैसा हो जाता है। स्पष्ट है कि ''हो'' समाज संस्कारों को विशेष महत्त्व देता है।

"हो" समाज में "न्याय व्यवस्था" भी ग्राम स्तर पर है, जिसका प्रधान "मुण्डा" होता है। "हो" सत्यवादी एवं न्यायप्रिय होते हैं। उनकी कथाओं में नीर-क्षीर न्याय की झलक हमें मिल जाती है। उनकी दृष्टि में अन्यायी का अन्त और न्याय की विजय अवश्यम्भावी है : "कुम्हार" के लड़के की कथा, "एक लोमड़ी का कलापूर्ण छल (कपट)" "एक सियार की धूर्तता", "राजकुमार के साहसिक कार्य" आदि कहानियाँ उनके इस दृष्टिकोण को स्पष्ट करती हैं। न्याय करने वाला पशु हो या मनुष्य, वह नीर-क्षीर न्याय करके निर्दोष को मुक्त कराता है और दोषी को दण्डित करता है।

"हो" समाज में शुद्धिकरण की भी व्यवस्था है। यदि कोई "हो" लड़की या लड़का किसी तरह अजातीय घोषित कर दिया जाता है तो उसे समाज जुर्माना आदि से दण्डित कर समाज में वापस ले लेता है। इस सन्दर्भ की कथा "गोनोङ्" की उत्पत्ति है, जिसमें एक चरवाहा (गौड़) का लड़का एक मुण्डा की दण्डित लड़की से शादी कर लेता है और "गोनोङ्" (लड़की का मूल्य) देकर "हो" समाज में "गोनोङ्" की प्रथा के प्रादुर्भाव के साथ-साथ "शुद्धिकरण" के लिये "दंड" की व्यवस्था का प्रादुर्भाव भी होता है ऐसा इस कथा से परिलक्षित होता है।

"हो" के पारिवारिक जीवन में स्त्रियों का प्रमुख स्थान है जो घर के कार्य से लेकर कृषि कार्य, क्रय-विक्रय आदि कार्यों में सक्रिय रूप से भाग लेती हैं। फिर भी "हो" परिवार पितृ-प्रधान परिवार होता है। वंश परम्परा पिता से चलती है। विवाह के उपरान्त वधू वर के घर में रहती है और उसे अपना घर समझ लेती है। "हो" समाज में विवाह की कई प्रथाएँ हैं। निम्नांकित प्रथाएँ उनमें प्रचलित हैं –

1. बापला – इसमें लड़के की ओर से लड़की के माँ-बाप के पास शादी का प्रस्ताव भेजा जाता है। यदि बात पक्की होने योग्य हुई तो मध्यस्थता करने वाले के माध्यम से "लड़की का मूल्य" (गोनोङ्) की बात लड़के वाले तक पहुँच जायेगी और इसके तय हो जाने पर शादी होगी। अगर बातचीत से मध्य कुछ अशुभ बातें हो गयीं तो ओझा-गुनी (दिऊरि या पाहन) के माध्यम से उसे दूर करने हेतु "सिंगबोंगा" को खस्सी या मुर्गे की बलि दी जाती है। इस पारस्परिक शादी में जो रस्म होती है उसे "एरातिल" कहते हैं जिसमें वर एवं कन्या एक दूसरे के प्रति शपथ लेते हैं। यह शपथ का आदान-प्रदान "हड़िया" (डियङ्) से भरे पात्र द्वारा होता है। "वर" किसी प्रकार का हो, लड़की के माता-पिता के वचन दे देने पर उसे चुन लेती है। यह घटना "एक घड़ियाल दामाद" शीर्षक कहानी में उभर कर सामने आयी है। लड़की का पिता वचन दे

चुका था कि यदि उसे लड़की होगी तो उसकी शादी उससे (घड़ियाल से) अवश्य करेगा। अतः शादी हुई। ''हंड़िया'' का आदान-प्रदान भी कहानी में स्पष्टतः परिलक्षित होती है। जब घड़ियाल ''डियङ्'' अधिक पीकर नव-विवाहिता को घायल कर देता है और तब उसकी पशु-प्रवृत्ति को खत्म करने के लिये ग्रामवासी उसे मार डालते हैं।

२. ''हो'' समाज में दूसरे प्रकार के विवाह की भी परम्परा चल पड़ी है जिसे ''दिकू आंदी'' कहते हैं। इसमें वैवाहिक कार्यों एवं रस्में को ''दिऊरी'' के स्थान पर ''ब्राह्मण'' सम्पन्न कराते हैं। इसमें वर-वधू को ''सालिग्रामशिला'' के समक्ष दाम्पत्य जीवन की निष्ठा से निर्वाह करने का शपथ लेना पड़ता है।

३. तीसरी पद्धति ''ओपरटिपी'' की है जो प्राचीनकाल से चली आ रही है। यह पद्धति ''कन्या-हरण'' द्वारा शादी की है। इस प्रथा के पीछे ''गोनोङ्'' बहुत बड़ा कारण है। लड़का अपनी मनचाही लड़की को लेकर अपने घर चला जाता है। बाद में कुछ ''गोनोङ्'' देकर शादी की रस्में पूरी की जाती है। लड़की को लेकर भागने के पीछे सामाजिक असमानता एवं रूढ़िवादिता है। इस घटना को ''राजकुमारी एवं मंत्री पुत्र'' की कथा में दर्शाया गया है। ऐसी शादी में लड़के को एवं वर पक्ष को अधिक कठिनाई होती है और तब सामाजिक मान्यता मिलती है। ''कुम्हार के लड़के की कथा'' में भी यही तथ्य सामने आया है।

४. चौथी पद्धति ''राजी खुशी'' की है। यह विवाह दोनों पक्षों के पारस्परिक इच्छानुसार बिना किसी समारोह या लेन-देन के सम्पन्न होता है। जब वर-कन्या यह पाते हैं कि उनके माता-पिता किसी कारणवश राजी नहीं हो रहे हैं तो दोनों गाँव से बाहर जाकर तब तक कहीं अन्यत्र रहते हैं, जबतक कि उनके माता-पिता उनके इस सम्बन्ध को मान्यता नहीं दे देते। इसका उदाहरण ''राजकुमारी एवं मंत्री पुत्र'' की कथा में मिलता है।

५. पाँचवीं पद्धति ''अनादेर'' कहलाती है। इसके अनुसार जब कोई लड़की किसी लड़के के साथ प्रेम करती है और लड़की वाले लड़के वाले को मनाने में असमर्थ हो जाता है तो लड़की जबरदस्ती लड़के के परिवार में आ जाती है। लड़के वाले उसे अनेक प्रकार के कष्ट देते हैं ताकि वह उनका घर छोड़कर चली जाय। परंतु सब कष्टों को सहते हुए अपनी सेवा भावना, कठिन परिश्रम एवं सहिष्णुता से जब वह घर वालों की सहानुभूति प्राप्त कर लेती है तो उसे उस घर में पत्नी का दर्जा प्राप्त हो जाता है। इस

प्रकार की शादी में "गोनोङ्" या किसी समारोह की आवश्यकता नहीं पड़ती है। "गोनोङ्" की प्रथा के कारण भी बहुत अधिक संख्या में "हो" लड़कियाँ कुमारी (अविवाहिता) रह जाती है।

"हो" समाज में लड़की की इच्छानुसार किसी लड़के को भगा कर ले जाते और शादी कराने की परम्परा नहीं मिलती है। परन्तु "जंगली भैंसों का पालतू होना" शीर्षक कहानी में या "साँभर धातृ" शीर्षक कथा में यह तथ्य परिलक्षित होता है जिसमें इच्छित युवक को लड़की द्वारा पकड़कर शादी सम्पन्न करायी जाती है। सम्भव है, यह परम्परा "हो" समाज में कभी रही हो अथवा इन लोक-कथाओं पर किसी अन्य क्षेत्र की कथाओं का प्रभाव मात्र हो।

विवाह से सम्बन्धित एक रस्म है जिसे "उलि साकी" कहते हैं। जब कोई युवती प्रथम बार विवाह के लिये ससुराल प्रस्थान करती है, तो अपने गाँव की सीमा पर आम के वृक्ष में "साकी" नया सूता या कपड़ा बाँध देती है। "साकी" शब्द "साक्षी" से उद्भव प्रतीत होता है। यह अपनी "जन्म-भूमि" को, अपनी माँ बुरू, देशाउली को हमेशा स्मरण रखने के लिये है। यह कार्य सम्पन्न कर वह वादा करती है - यद्यपि मैं जा रही हूँ फिर भी तुमको मैं भूल नहीं जाऊँगी। मेरा सम्बन्ध तुमसे बना ही रहेगा। जिस जन्म-भूमि में बचपन बिताई, युवती हुई, खेली-कूदी, तुम्हें मेरा प्यार हमेशा रहेगा।*1

विवाह में "गोत्र" का महत्त्व अत्याधिक है। समान गोत्र में शादी नहीं होती। जब कोई वर पक्ष वाला किसी वधू पक्ष के यहाँ शादी की बात करने प्रथम बार जाता है तो लड़की वाले पूछते हैं - "किसके राज्य से आपलोग आये हैं (किस गोत्र के आपलोग आते हैं), इसपर लड़के वाले कहते हैं -"हम लोग हसदा राज्य से आते है (अर्थात् हसदा गोत्र के हैं) वे सीधे गोत्र के विषय में नहीं पूछते।

शादी लड़की एवं लड़का-दोनों के घर में सम्पन्न होती है। यदि लड़की वाले निर्धन हैं तो वे लड़की को लड़का के घर ले जाकर वहीं शादी सम्पन्न करते हैं मुख्यतः वर पक्ष के लोग ही बारात लेकर लड़की के घर जाते हैं और विवाह करा कर नव वधू को ले आते हैं।*2

विवाह में या पर्व-त्योहार के अवसरों पर स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार के स्वर्ण एवं रजत आभूषण धारण करती हैं। उनके मुख्य आभूषण हैं - "लुतुर मुरकि" (कर्णफूल

*1 द हो ट्राइब ऑफ सिंहभूम - श्री सी. पी. सिंह, पृ. १६

*2 दी अफेयर्स ऑफ ए ट्राइब - श्री डी. एन. मजूमदार, पृ. ६५-६६

या झुमका), तका सकोम (हाथ की पहुँची या कंगन) तथा "तोनाको आन्दू" (पाजेब या पायल)। इसके अतिरिक्त वे नाक में कील या "नकवेसर" जैसा आभूषण भी धारण करती है। "एक नवयुवती की कथा" में बाघों के राजा द्वारा आभूषण आदि के साथ सुसज्जित कर उस युवती को विदा करने का विवरण है जो उसे (बाघ को) दादा मान ली थी और जिसकी शादी होने वाली थी। "हो" स्त्रियाँ आभूषणप्रिय होती हैं, यह "हो;; क्षेत्र में सर्वत्र देखने को मिलता है। केश-विन्यास भी उनकी शृंगार-प्रियता को दर्शाता है। "हो" स्त्रियों के केश लम्बे और वृद्धावस्था तक काले रहते हैं। वे अधिकांशतः "नीम" के तेल का प्रयोग करती हैं। उनका स्वस्थ सौन्दर्य एवं सुगठित शरीर पर रंगारंग परिधान उनके व्यक्तित्व को अत्यन्त आकर्षक एवं मोहक बना देता है। पर्व-त्योहार एवं विवाहादि के अवसर पर उनका सरल-सुलभ शृंगार एवं प्राकृतिक सौन्दर्य दर्शनीय होता है। "हो" बालाएँ कृत्रिम शृंगार प्रसाधनों का प्रयोग कम करती हैं। साड़ी, साया, ब्लाऊज-उनका मुख्य परिधान है। कंचुकी (चोली) भी युवतियाँ धारण करती हैं। ग्रामों में लड़कियाँ साया एवं कंचुकी पहन कर ही सब कार्य करती हैं। "हाट" (साप्ताहिक बाजार) उनका सांस्कृतिक एवं सामाजिक केन्द्र होता है, जहाँ सुदूरवर्ती ग्रामों से नर-नारी "हाट" में क्रय-विक्रय करने आते है। यहाँ युवक-युवतियाँ अपने जोड़े भी तय करते हैं और कभी-कभी इन्हीं हाटों से लड़कियों को लड़के विवाह के लिये चुनकर ले जाते हैं, जिसकी चर्चा पूर्व में की जा चुकी है।

"हो" अपने घर को अत्याधिक साफ-सुथरा रखते हैं। उनके मिट्टी के बने घर मिट्टी के विभिन्न रंगों से की गयी चित्रकारिता से अत्यन्त आकर्षक लगते हैं। "हो" का रसोई घर (अडिंग) अत्यन्त पवित्र माना जाता है। "हो" इस घर में अन्य किसी जाति के व्यक्ति को प्रविष्ट होने नहीं देते। उनका लोक-विश्वास है कि इस घर में उनके पूर्वजों की आत्माएँ जिन्हें वे "ओवा बोंगा" कहते हैं, निवास करती हैं। वे जो भी खाना बनाते हैं, उसको सर्वप्रथम अपने पूर्वजों को समर्पित करते हैं। यदि कोई विजातीय बहु घर में प्रवेश करती हैं तो जब तक वह "गोत्र" में नहीं मिला ली जाती, रसोई घर में प्रवेश नहीं कर सकती। उन्हें यह भय रहता है कि उसके प्रवेश से पूर्वजों की प्रेतात्माएँ नाराज हो जायेंगी और इससे उनका अहित हो सकता है।[*1]

---

*1 द जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम ३, भाग-१, मार्च, १९१७ - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. २७६-२८०

पारिवारिक सम्बन्धों में "हो" परिवार में भाई बहन का स्नेहिल सम्बन्ध सबसे अधिक श्लाघ्य है। सामान्यतः सात भाइयों में एक बहन का प्रसंग "हो" कहानियों में उपलब्ध है। कहीं-कहीं दो भाई एक बहन का भी प्रसंग आता है। बहनों की संख्या कहीं-कहीं दो पायी जाती है। बहन का बहन के प्रति स्नेह भी "हो" कथाओं में पाया जाता है। माँ-पुत्र, पिता-पुत्र या पिता-पुत्री आदि का सम्बन्ध प्रेम भरा एवं निकटता का प्रतीक है। परंतु अधिकांश कथाओं में भाई-भाई एवं ननद-भौजाई में अच्छा सम्बन्ध नहीं पाया जाता। भाई अपने भाई को विपन्न एवं फटेहाल देखना चाहते हैं। इसका उदाहरण "एक भाई का प्रतिशोध" शीर्षक कथा में हम पाते हैं। एक विधवा के सात लड़कों में सबसे छोटा लड़का "चीरूचूटिया" को उसके अन्य छः भाई विपन्न बनाकर रखना चाहते हैं। परंतु वह अपनी मेधा-शक्ति और चतुराई से अपनी आर्थिक स्थिति काफी सुधार लेता है जब कि अन्य छः भाई नष्ट हो जाते हैं।

भाई-बहन के पवित्र स्नेहिल सम्बन्ध का दृष्टान्त हमें "दुष्ट भाभी का अन्त" "छोटी बहन" आदि कथाओं में मिलता है। दोनों कथाओं में भाभी द्वारा ननद को सताये जाने की कथा है और दोनों में भाइयों ने अपनी पत्नियों को बहन को उत्पीड़ित करने के कारण मार डाला है।

बहन और बहन का स्नेहिल सम्बन्ध भी "दो बहनों की कथा" में दर्शाया गया है। बड़ी बहन रानी बनकर भी अपनी छोटी बहन को नहीं भूल पाती। वह उसके मृत शरीर को पुनः जीवित करने में सफल हो जाती है और अन्त में दोनों सुखपूर्वक रहने लगती है।

एक ऐसी कथा मिलती है जिससे मनुष्य के आदिमयुग की प्रवृत्ति का आभास मिलता है जिसमें मनुष्य अधिकांशतः पशु-प्रवृत्तियों से प्रभावित था। उसके लिये मनुष्य भी भले ही उसका निकट संबंधी ही क्यों न हो, भोज्य पदार्थ बन जाता था। "नरभक्षी की कथा" इसी तथ्य को उजागर करती है। इस कथा में सात भाइयों की एकमात्र बहन को छः भाई मारकर खा जाते हैं; क्योंकि सब्जी में गिरा उसका रक्त उन्हें बहुत स्वादिष्ट लगा था और उनके मन में एक अमानवीय भाव उठा था कि "जिसके रक्त के कुछ बूँद इतने स्वादिष्ट हैं, उसका मांस कितना सुस्वादु होगा।" इसी विचार से वे उसे (बहन को) मार कर खा जाते हैं। परंतु छोटा भाई "कुन्द्रा" बहन को बहुत प्यार करता था। अतः वह उसका मांस नहीं खाया और उसे चींटी के बिल में गाड़ दिया, जिससे वह पुनर्जीवित हो उठी। इस कथा में भी छोटे भाई और बहन का अनन्य प्रेम उभर कर सामने आया

है।

"हो" समाज में बड़े भाई की इज्जत अधिक होती है। सभी उसकी बातें मानते हैं और सहयोग देते हैं। इसका दृष्टान्त हमें "हेरो पर्व की कथा" में मिलता है। सभी चार भाईयों के प्रयत्न से मिट्टी की मूर्ति जब स्त्री बन जाती है तो चारों भाई उसे अपनाना चाहते हैं। परंतु पंचायत में फैसला होने पर सभी उसे बड़े भाई की पत्नी मान लेते हैं और सुखी जीवन व्यतीत करते हैं। इसमें "हो" समाज में पंचों की महत्ता एवं उनके न्याय की मान्यता पर प्रकाश भी पड़ता है।

"हो" जनजाति के जीवन में पर्व-त्योहारों का विशेष महत्त्व है। सभी पर्व उनके कृषि-चक्र से जुड़े हुए हैं। वे विभिन्न ऋतुओं में भिन्न-भिन्न पर्वों को सोल्लास मनाते हैं। उनके सभी पर्व सामूहिक जीवन-दृष्टि पर आधारित हैं। इनके मुख्य पर्व माघे, हेरो, जोमनामा आदि है। उनके पर्व, कृषि कर्म एवं माह का विवरण निम्न प्रकार प्रस्तुत है*1_

	पर्व	*कृषि–कार्य*	*महीना*
१.	माघे पर्व या देशाउली बोंगा	फसल काटना, खलिहान में निकौनी	जनवरी तथा फरवरी
२.	बा पर्व	बड़ा जमीन में बीज वपन बसन्तागमन	मार्च तथा अप्रैल
३.	हेरो पर्व	खेत की जोताई एवं बुआई	मई तथा जून
४.	बताउलि पर्व	रोपनी का कार्य	जुलाई
५.	जोमनामा पर्व	नये धान की कटाई (गोड़ा धान की)	
६.	कॉलोम पर्व	धान काटकर खलिहान में लाना	नवंबर एवं दिसंबर
७.	मकर पर्व	धान की पीटाई आदि	दिसंबर एवं जनवरी

उपर्युक्त पर्व "हो" के कृषि-जीवन से निकट सम्बन्ध रखते हैं। ये पर्व मात्र पर्व नहीं, वरन् विभिन्न देवताओं (बोंगा) की आराधना एवं बलि द्वारा उन्हें प्रसन्न करने का अनुष्ठान भी है। माघे में देशाउली बोंगा, हेरो में देशाउली और जाहेर बुड़ि (एरा),

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम ३, भाग-१, मार्च, १६१७ - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. २८०

जोमनामा में सिंङबोंगा आदि देवताओं की पूजा "हो" किया करते हैं। इन पर्वों की उत्पत्ति कथाएँ, "हो" लोक-कथाओं में पायी जाती हैं "हेरो" सृजन का पर्व है, ऐसा उक्त कथा से पता चलता है। "लक्ष्मी की कथा" में लक्ष्मी-पूजा या सोहराई पर्व की उत्पत्ति की कथा कही गयी है। "मागे या माघे पर्व" की कथा में माघे पर्व की उत्पत्ति की कथा है। माघ मास की पूर्णिमा के अवसर पर यह पर्व मनाया जाता है। यह देशाउली बोंगा की पूजा है।

"हो" जीवन में लोक-विश्वास का अधिक महत्त्व है। "हो" लोक-जीवन में "शकुन विचार" का बड़ा महत्त्व है। विशेषकर शादी-ब्याह या अन्य शुभ यात्राओं के अवसर पर "हो" शकुन एवं अपशकुन पर बहुत अधिक ध्यान देते हैं। विवाह ठीक करने हेतु जाते समय यदि कोई वृक्ष की डाल जाते हुए लोगों की बायीं ओर गिरे तो वह लड़की के लिये अपशकुन है और दाहिनी ओर गिरने पर लड़के के लिये अमंगलकारी समझा जाता है। उक्त दल के मार्ग मे दाहिनी ओर से यदि अकेला सियार, गिद्ध, गिरगिट या मधुमक्खियों का झुण्ड गुजर जाय तो लड़के के लिये और बायीं ओर से गुजरने पर लड़की के लिये अमंगलकारी होता है। इसी प्रकार यदि कोई कृषक खेत जोतने जाते समय सर्प को विवर में प्रविष्ट होते देखता है तो यह फसल के खराब होने का सूचक है। यदि रोपनी आदि करने हेतु जाते समय डोंड़ साँप को सिर उठाये देख लेता है तो वह इसे शुभ मानता है।*1 "हो" घर में जब चूहा देख लेते हैं तो उन्हें "चुरडु बोंगा" के आगमन का भय हो जाता है। जिसके आगमन से धन-धान की क्षति सम्भावित हो जाती है। कनगोजर अथवा कनखजुरा का दर्शन वे शुभ मानते हैं।*2

इसी प्रकार स्वप्न-दर्शन के सम्बन्ध में भी उनके कुछ अपने लोक-विश्वास हैं। उन्हें यदि स्वप्न में बाघ का दर्शन हुआ तो उसे वे किसी राजसी उपलब्धि का कारक मानते हैं। यदि स्वप्न में हंड़िया पीना, मिरचा खाना या बिरनी से डंक मारा जाना देखते हैं तो समझते हैं कि कोई उनके साथ गाली-गलौज करेगा। हाथियों को झुण्ड में देखना अच्छी फसल (धान) होने का सूचक है। यदि आनी जमीन पर सामयाना गाड़ने का स्वप्न

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम ३, भाग-१, मार्च, १९१७ - श्री बी. सुकुमार हलदार, पृ. २८०-२८१

*2 मैन इन इण्डिया - वाल्यूम - ३४, पृ. ४, अक्टूबर-दिसम्बर १९५४. पृ. २८६ रिलिजियस बिलिप्स ऑफ हो" - श्रीगौतम शंकर राय तथा अन्य

होता है तो यह अच्छी वर्षा का सूचक है। यदि स्वप्न में "सबई घास" या पुआल काटना दिखायी पड़े तो यह अकाल पड़ने का सूचक है। यदि बोआरी या गरई मछली ककड़ने का स्वप्न हो तो मुद्रा-प्राप्ति का यह सूचक है। यदि बोआरी या गरई मछले पकड़ने का स्वप्न होगा तो यह किसी पुरूष के मरने का सूचक होगा। इसी प्रकार यदि मिरगल, रेहू या पोठिया पकड़ने का स्वप्न होगा तो यह किसी स्त्री की मृत्यु का सूचक होगा। अगर कोई तेल लगाने का स्वप्न देखता है तो उसको जख्म होगा। यदि चीटियों के दल के जाने का स्वप्न देखता है तो यह किसी व्यक्ति की मृत्यु का सूचक है।*1

"हो" लोक-कथाओं में विभिन्न एरा (देवी) एवं बोंगा (देवताओं) की पूजा-अर्जना एवं उनके आवास आदि का विवरण मिलता है। इन देवी-देवताओं की स्थिति एवं उनके प्रभावादि लोक-विश्वास पर आधारित हैं। लोक-विश्वास अधिकांशतः "हो" मिथों में पाये जाते हैं, जिनमें मानव आदि की सृष्टि, उनके विकास-विनाश आदि की कथाएँ उपलब्ध हैं। अन्य जन-जातियों की तरह "हो" में भी अनेक देवी-देवता हैं जिन्हें मुख्यतः तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया है -

1. बोंगा (देवता)	१. सिङ् बोंगा	- सर्वशक्तिमान देवता, सूर्यदेव
	२. मराङ बोंगा	- अत्याधिक शक्तिशाली देवता
	३. देवशाउली बोंगा	- ग्राम देवता, जाहेर थाना में आवास
	४. बुरू बोंगा	- पहाड़ियों पर निवास करने वाले देवता
	५. बीर बोंगा	- वन देवता
	६. गोटोबोंगा	- गोहाल देवता
2. एरा (देवी)	१. बिन्दी एरा	- पहाड़ की देवी
	२. बन्धा नगे एरा	- जल देवी
	३. बगेया एरा (आत्मा)	- वृक्ष पर वास करने वाली देवी
	४. कुदरा एरा	- वन देवी-इनके तीन रूप हैं -
	(क) भरम कुदरा	- उच्च भूमि पर वास करने वाली
	(ख) धन कुदरा	- शिशु भक्षिणी
	(ग) बुनुम कुदरा	- जादुगरों द्वारा निर्देशित*1

*1 आदिवासी - २६ अगस्त, १६७१ - "जोमनाम" "श्री बुधराम हेम्ब्रम"

५. जहेर एरा - जहेर थान (पूजा स्थल) की देवी

3. रोआ – "रोआ" का अर्थ "हो" में छाया या आत्मा होता है। उनके लोक-विश्वास के अनुसार मृत्यु पश्चात् आत्मा शरीर से निकल कर अपने "कब्र" के निकट भटकती रहती है और उसे वर्षा, ग्रीष्म, शरद् ऋतुओं में कष्ट झेलना पड़ता है। अतः "हो" अपने पूर्वजों की आत्मा (रोआ) को अपने घरों में ही आमंत्रित कर निवास हेतु अनुनय-विनय करते हैं। वे "अडिंग" (रसोईघर) में उनके आवास के लिये एक चबुतरानुमा ऊँचा सथान मिट्टी से बना देते हैं। सामूहिक रूप से ये "हाम-हो" या "ओवा-बोंगा" के नाम से जाने जाते हैं। पर्व के अवसर पर ग्रामवासियों द्वारा सामूहिक रूप से उनकी पूजा-अर्चना की जाती है।

"हो" लोक कहानियों में बोंगा, एरा और रोआ का प्रसंग, उनका प्रभाव, उनका वरदान, अभिशाप आदि की कथाएँ प्रचलित हैं। जैसा कि ऊपर वर्णित है, सिंगबोंगा सर्वशक्तिमान देवता हैं, जिन्हें "हो" सबसे अधिक आदर एवं श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। "हो" लोक-विश्वास के आधार पर सृष्टि की रचना के कारक सिंगबोंगा ही हैं। "धरती बनने की कथा" "पेड़-पौधा आदि बनने की कथा", "मानव के सृजन की कथा" आदि सृजन कथाओं में सभी जीवों के सृजन के प्रणेता सिंगबोंगा ही है। यही नहीं, सृष्टि के विनाश के भी वे ही कारक हैं। "सिङ्बोंगा" में सनातन धर्म के ब्रह्मा, विष्णु और महेश - तीनों एकात्म होकर प्रकट हुए हैं। "सेंगेल गमा" (अग्नि वर्षा) का आयोजन सिङ्बोंगा ही करते हैं, जो "अग्नि प्रलय" के सदृश्य है। इस प्रलय का कारण भी पृथ्वी पर पाप का आधिक्य होना बताया जाता है। यह "सेंगेल गमा" "हो" लोगों के इस लोक-विश्वास पर आधारित है कि सिंगबोंगा को अप्रसन्न करने पर सर्वनाश अवश्यम्भावी है। अतः सिंगबोंगा को वे कभी अप्रसन्न करना नहीं चाहते।

"असुर की कथा" में भी "सिंगबोंगा" के कोप का दृष्टान्त प्रस्तुत किया गया है। "सिंगबोंगा" विनाश करने के पहले बहुत अधिक चेतावनी देते हैं, यह "हो" लोक-विश्वास का अभिन्न अंग है। "सिंगबोंगा" पहले विभिन्न संदेशवाहकों को भेजकर असुरों को सद्मार्ग पर चलने का सन्देश भेजते हैं। जब असुर अपनी आसुरी प्रवृत्ति को

---

*1 आदिवासी - २६ अगस्त, १६७१ - "जोमनाम" "श्री बुधराम हेम्ब्रम"

नहीं छोड़ते तो उनका सर्वनाश करने के लिये "सिंगबोंगा" स्वयं अवतरित होते हैं और उनका (असुरों का) विनाश करते हैं।

"अग्नि वर्षा" मिथ में ही "नगे एरा" का भी प्रादुर्भाव हुआ हैं जो अग्नि प्रलय से मानव एवं अन्य जीव को अपने जलागार में ले जाकर बचा लेती हैं। अतः "नगे एरा" दया की देवी सिद्ध होती है। "नगे एरा" ही मानव-सृष्टि को बचाने में समर्थ हुई। "हो" लोक-विश्वास के अनुसार "सिंगबोंगा" के शाप से ही अब "नगे एरा" जलाशय में इधर-उधर भटकती रहती है।

"लक्ष्मी की कथा" में "गोटो बोंगा" की उत्पत्ति वर्णित है। यह "हो" के कृषि जीवन एवं पशुधन के प्रति स्नेह एवं लगाव का परिचायक है। "हो" अब गोटो बोंगा की पूजा श्रद्धापूर्वक करते हैं जिसमें "गौड़" या "गोप" जाति के लोग भी सम्मिलित होते हैं। इसमें यह लोक-विश्वास है कि "गोटो बोंगा" की कृपा पर ही पशुधन का विकास निर्भर करता है।

"मागे पर्व" की कथा में यह वर्णित है कि इस अवसर पर "देशाउली" "जहेर एरा" एवं "सिंगबोंगा" की पूजा होती है। "मागे पर्व" या "माघे पर्व" वंश-वृद्धि की कामना का पर्व है। यह भारत के अन्य क्षेत्रों में, विशेषकर बिहार में मनाया जाने वाला "होली" पर्व का पर्याय है। परंतु "होली" के हर्षोल्लास के साथ-साथ विभिन्न देवताओं "देशाउली आदि" की अर्चना का अनुष्ठान इसमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। इस पर्व को शुभारम्भ करने के लिये गाँव के पुजारी (दिउरी) को अपनी पत्नी के साथ दो दिनों तक उपवास व्रत करना पड़ता है और पूरी पवित्रता से इस पर्व का अनुष्ठान करना पड़ता है। "धरती की पूजा" इसमें डियङ् (हड़िया) से की जाती है, जो नये चावल से बनाया जाता है। इस पर्व में भी "गोटो बोंगा" की पूजा होती है।

"हेरो पर्व की कथा" में भी "सिंगबोंगा" की पूजा-अर्चना से जीव सृजन की कथा परिलक्षित है। "मिट्टी की काया" में प्राण डालना ईश्वर का कार्य है, यह सर्वमान्य लोक-विश्वास है। "हेरो" पर्व सृजन का पर्व है। इस पर्व मे अभी भी "हो" प्रतीक के रूप में भीत्ति-चित्र बनाते हैं। खेतों में बीज-वपन कार्य-सृजन के कार्य के शुभारम्भ का परिचायक है।

"जोमनामा" पर्व भी "सिंगबोंगा" एवं लक्ष्मी की अर्चना का पर्व है, जिसमें नये अन्न को उनके प्रति अर्पित करने के बाद ही ग्रहण किया जाता है। "जोमनामा पर्व" आते ही ग्रामवासी गा उठते है -

"भादो चन्डु सेटेर याना
नामा बाबा बियार याना,
डोलारेया हागा मीसी बाबा इर्रते।
बाबाम ईरेया सेरेसेरे,
बाबाम दुपीले गासा गासा
लक्ष्मी एंगा ओड़ातेबु बेयादा रोमी।"[*1]

(हे भाई बहनो! नया धान तैयार होकर पक गया है अब उसे काटने चलें)। उसे काटकर और ढोकर अपने निवास स्थान में आज लक्ष्मी माँ का स्वागत करें।

आगे वे अपने पितरों के साथ-साथ "सिंगबोंगा" का आवाहन एवं अर्चना निम्न प्रकार करते हैं –

"मान्डी–डियाङ् जोमनु केयते,
पितरू–माता कजिः केयते,
दोला रेया हागामीसी सुसुन आकाड़ाते।
जोहार तानाले सिङ् बोंगा,
गोहारि तानाले सिङ् बोंगा,
नेले कागेया जोपन्नू मुंकू दिनसी एमा लेना।"[*2]

अपने पितरों को नया धान का भात (मांडी) और हंड़िया (डियङ्) का भोग अर्पित कर हमलोगों ने भी भोजन कर लिया। अतः हे भाई-बहन! अब नृत्य-स्थल में चलें।

हे भगवान् (सिंगबोंगा)! हमलोग आपसे अर्चना करते हैं कि हमें सदा इसी तरह ही सुखी बनाये रखें।

इस प्रकार पूरी निष्ठा और पवित्रता का पर्व "जोमनामा" है, जिसमें समर्पण भी भावना सर्वोपरि है।

"हो" लोगों में यह लोक-विश्वास है कि "हंड़िया", "जाति प्रथा" कर्म का सृजन (बँटवारा) आदि का कार्य "सिंगबोंगा" द्वारा ही किया गया। यह "जाति एवं कर्म के बँटवारा" की कथा में परिलक्षित होता है।

---

*1 आदिवासो – २६ अगस्त, १६७१ – "जोमनाम" "श्री बुधराम हेम्ब्रम"

*2 द ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स ऑफ बंगाल – श्री एच. एच. सिल्ले, पृ. ३३

"पुनर्जन्म" या पुनः जीवित होने की परिकल्पना भी "हो" लोक-विश्वास का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। "हो" लोक-साहित्य में अनेक ऐसी कथाएँ उपलब्ध है जो उनके इस लोक-विश्वास की पुष्टि करती हैं। "हो" लोगों के अनुसार आत्मा मरती नहीं है, वह शरीर को छोड़कर बाहर चली जाती है। "रोआ" की परिकल्पना का यही आधार है। पुनर्जन्म या फिर से जीवित होने का लोक-विश्वास "मनुष्य भक्षी की कथा", "कुम्हार के लड़के की कथा" आदि में यह स्पष्ट रूप से पाते हैं। उनके लोक-विश्वास के अनुसार "शरीर का कोई अंग या हड्डी मिल जाने से "सिंगबोंगा" की कृपा प्राप्त कर सम्बन्धित व्यक्ति को पुनः जीवित किया जा सकता है और इसकी पुष्टि उक्त कथाओं में की गयी है।

"हो" लोगों में यह लोक-विश्वास प्रचलित है कि नवजात शिशु का "नाल पुरइन" घड़े में रखकर इस प्रकार सुरक्षित जमीन में गाड़ दिया जाय ताकि उसे कोई पशु या वन्य-जीव खा नहीं जाय। यदि उसे कोई कुत्ता या अन्य जानवर खा जायेगा तो वन में जाने पर उस बालक को बाघ खा जायगा। इसलिये "हो" लोग "नाल-पुरइन" को गाड़कर उसकी रक्षा करते हैं। "नाल-पुरइन" के गाड़ने की घटना पर आधारित गोत्र कथा में "टुबिड गोत्र" का प्रसंग आया है। "हो" के शिशुओं के जन्म के समय जिन पशु-पक्षियों ने मदद की अथवा शुभ संवाद दिये (बोली बोलकर) उनके नाम पर उस शिशु का गोत्र निर्धारित हुआ। "हो" लोक-विश्वासों के अनुसार वन-प्रान्तर में पाये जाने वाले पशु-पक्षी, नदी, झरना, वृक्ष, पुष्प, फल आदि उनके जीवन के सहायक हैं और सभी "सिंगबोंगा" द्वारा सृजित हैं। अतः प्राकृतिक पदार्थ ही "हो" जनजाति के गोत्र-प्रतीक बन गये।

"हो" लोगों में "फल" खाने से (आम का फल) गर्भ रहने और सन्तानोत्पत्ति का भी लोक-विश्वास है। यह लोक-विश्वास "दुष्ट रानी की कथा" में उभर कर सामने आया है। एक विशेष समारोह या अनुष्ठान करके "फल" या अन्य प्रकार का कन्द-मूल सेवन करने से संतानोत्पत्ति का लोक-विश्वास उनमें प्रबल है।

"हो" लोगों में यह लोक-विश्वास बहुत प्रबल है कि मरणोपरान्त मृतात्माएँ पुनः उनके घरों में आ सकती है। वे इन प्रेतात्माओं से बहुत भयभीत एवं आतंकित रहते हैं। जब वे मृत व्यक्ति को कब्र में गाड़कर पुनः उसका "फेरा" देने जाते हैं (संध्या काल) तब वे घर में एक विशिष्ट स्थान पर राख फैला देते हैं। उनकी यह धारणा है कि मृतात्मा

यदि उनके घर में आयेगी तो राख पर उसके पदचिह्न देखते हैं तो आतंकित होकर चीखना-रोना शुरू कर देते हैं।

"प्रसव" में कष्ट या कठिनाई होने पर "हो" में यह लोक-विश्वास है कि यह "खराब नजर" का प्रभाव है या युवती का विवाह पूर्व किसी युवक से अवैध सम्बन्ध का प्रभाव है। ऐसी स्थिति में "सिंगबोंगा" को एक मुर्गा की बलि देते हैं और इस प्रकार प्रसव पीड़ाहीन होकर शिशु का जन्म होता है।*1

गर्भवती स्त्री की अकाल मृत्यु पश्चात् वह प्रेत बन जाती है और गर्भवती स्त्रियों को प्रभावित करती है और प्रसव में बाधा पहुँचाती है ऐसा भी "हो" लोगों की धारणा है। अकाल मृत्यु का कारण वे कोई बुरी नजर (डायन आदि का) या किसी प्रेतात्मा (बोंगा) का कोप मानते हैं।*2

"हो" लोगों का यह लोक-विश्वास है कि सामान्य मृत्यु होने पर आत्मा (रोआ) किसी-न-किसी जीवधारी के रूप में पुनः जन्म ले लेती है। उनके मतानुसार भी आत्मा अमर है। पुनर्जन्म की अनेक कथाओं पर पूर्व में विचार किया गया है, जिनमें मनुष्य का पुनर्जन्म मछली के पेट से या वृक्ष से हुआ है। किसी व्यक्ति के मरने के तीन दिन बाद "हो" एक सगुन करते हैं जिसके माध्यम से वे जान जाते हैं कि मृत व्यक्ति का जन्म किस रूप में हुआ है। वे घर में (रसोई घर में) राख फैला देते हैं। दो औरतें दो कोने में बैठ जाती हैं। घर का किवाड़ बन्द कर पुरूष सदस्य पूछता है - "सुखिला कि दुखिला" (प्रवेश किया या नहीं)। राख पर यदि किसी चिड़िया या कीड़ा-मकोड़ा का चिह्न मिल गया तो समझते हैं कि उसका (मृतात्मा का) पुनर्जन्म चिड़िया आदि में हो गया। अगर मनुष्य का पैर आदि छाप मिला तो उसे मनुष्य के रूप में पैदा हुआ मानते हैं, यह "हो" लोगों का लोक-विश्वास है। इस आयोजन (समारोह) को "हो" रा आदेर अथवा केया आदेर कहते हैं।*3

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम २, भाग-१, १६१६ - श्री गिरिन्द्र नाथ सरकार, पृ. १३५

*2 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम २, भाग-१, १६१६ - श्री गिरिन्द्र नाथ सरकार, पृ. १३७

*3 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम २, भाग-१, १६१६ - श्री गिरिन्द्र नाथ सरकार, पृ. १३६

"हो" का अंतिम संस्कार (मरणोपरान्त) "जङ् तोपङ्" (अस्थिविसर्जन) होता है। पूर्व की कहानियों में हम विचार कर चुके हैं कि किसी मृत व्यक्ति की हड्डी या अवशेष जमीन में गाड़ देने से वह पुनः कुछ काल बाद जीवित हो उठा। "हो" दाह-संस्कार के चौथे दिन एक गड्ढा (कब्र) खोदकर अस्ति अवशेष को नये घड़े में रखकर गाड़ देते हैं इसी समारोह को "जङ् तोपङ्" कहा जाता है। इस अवसर पर उनके नंगाड़े से स्वर आता है - "तोपङ् तोपङ् जङ् तोपङ०" या बन्दुक छोड़कर या अन्य रूप से इसकी सूचना प्रसारित कर देते हैं।*1

---

*1 जनरल ऑफ बिहार एण्ड उड़िसा रिसर्च सोसाइटी - वॉल्यूम २, भाग-१, १६१६ - श्री गिरिन्द्र नाथ सरकार, पृ. १४१-१४२

सप्तम् अध्याय

"हो" लोक–कथा : भाषिक स्वरूप, संरचनात्मक विशेषताएँ

1. "हो" लोक कथाओं का भाषिक स्वरूप

"हो" लोक-कथाओं की भाषा "हो" भाषा है, जो "मुण्डारी" भाषा का ही एक रूप है। यह योगात्मक परिवार की भाषा है। "हो" भाषा के स्वरूप पर पूर्व में ही विचार किया जा चुका है। "हो" लोक कथाएँ अन्य लोक जीवन में व्यवहृत या चालू शब्दों, उक्तियों, गीतों आदि का प्रयोग "हो" लोक कथाओं में किया गया है। "हो" भाषा भी लोक-भाषा है और यह एक परिनिष्ठित भाषा से अलग है। "हो" लोक-कथाएँ अधिकांशतः कथक्कड़ों से संग्रहित है, अतः इनमें लोक प्रचलित शब्द एवं सघन वन-प्रान्तरों में प्रचलित शब्द प्रयुक्त किये गये हैं। पूर्ववर्ती कथाओं में "हो" भाषा का मौलिक रूप उभरता है तो परवर्ती लोक कथाओं में कुछ हिन्दी या अन्य भाषाओं (बंगला या उड़िया) के शब्द भी आ गये हैं। "तांती" शब्द का पर्याय उड़िया में "पान" (पाण) से "हो" में "पिआयं" हो गया है। "पान और पियाज रोटी" कथा में इसी पिआयं का प्रयोग किया गया है। हिन्दी का ठीक, सुख, प्रधान शब्द "हो" लोक कथाओं में टिकी, सुकु एवं परदान बनकर व्यवहृत किये गये हैं।

इन कथाओं के वर्ग भेद से भाषा का भेद नहीं उभरता है। राजा भी एक साधारण "हो" की तरह ही "हो" भाषा में बोलता है। अघोष ध्वनि प्रधान होने के कारण "हो" लोक कथाओं में गुस्सा होने या बिगड़कर बोलने पर भी भाषा में कोई विकार या विद्रुपता नहीं आती।

"हो" लोक कथाओं में पात्र निर्जीव एवं सजीव दोनों ही हैं। अतः क्रिया के साथ एक विशेष सूचक चिह्न लगाकर दोनों का अर्थ ध्वनित किया जाता है। इसी प्रकार क्रिया एवं पुरूष के विभिन्न रूपों में भिन्न-भिन्न सूचक चिह्नों को लगाकर अर्थ परिवर्तन किया जाता है, जो "हो" भाषा की विशेषता है और लोक कहानियों की भाषा में भी इसी का प्रयोग होता है।

"हो" लोक कथाओं में लिंग भेद दर्शाने के लिये भी अलग-अलग शब्दों का प्रयोग किया गया है, जो "हो" भाषा में प्रचलित है। जहाँ आदमी के बच्चे-बच्ची का

विवरण आता है, वहाँ कोवा या कुई (कोवाहोन या कुईहोन) तथा जहाँ पशु-पक्षी का विवरण आता है, वहाँ साण्डी सिम तथा एंगा सिम (मुर्गा-मुर्गी) का प्रयोग किया गया है।

"हो" लोक कथाओं में भी आदर सूचक एवं अनादर सूचक शब्द का प्रयोग किया गया है। जब किसी को आदर पूर्वक 'बैठिये' कहा गया है तो "दुबबेन" का प्रयोग किया गया है और आदर सूचक चिह्न बन गये हैं।

अतिशयता दर्शाने के लिये भी "हो" भाषा में "एसु" शब्द का प्रयोग होता है। "हो" लोक कथाओं में भी इसका प्रयोग हुआ है। "गरीब लड़के की कथा" में या "अग्नि की वर्षा" में इसका प्रयोग किया गया है। "एसुरेगेतना" (बहुत गरीब) एवं "एसु कुर्कुर लेना" (बहुत गुस्सा होना) शब्दों का प्रयोग इन कथाओं में किया गया है। जहाँ कहीं प्राचीन काल (काफी पहले) का प्रयोग होता है, "हो" लोक कथाओं में "एसुरिया" (बहुत वर्ष) शब्द का व्यवहार किया गया है।

"हो" लोक कथाओं में भी छोटे-छोटे वाक्य कथोपकथन के रूप में प्रयुक्त किये गये हैं। "छोटी बहन" शीर्षक कहानी में भाभियाँ ननद से कहती हैं- "अमसेन में, ना–आः विङ तोआ आगुई मेः"। (तुम जाकर साँप का दूध ले आओ)। यह आदेशात्मक वाक्य बड़े सरल ढंग से प्रस्तुत किया गया है। जब छोटी बहन को सर्प का दूध नहीं मिलता तो वह रोने लगती है। इस पर सर्पिनी आकर उसे दूध देती है और सान्त्वना देकर विदा करती है - "होन माई, आलमराः याः, आलम दुकुवाः।" "ओबाः सेनोः मे आण्डोः आंजा तोवा अन अमाः हिलिमतेको समाकोम।" (ऐ लड़की, तुम दुःखी होकर रोओ मत। मेरा दूध ले जाकर अपनी भाभियों को दे दो)। इस प्रकार सरल ढंग से तथ्यों को "हो" लोक कथाओं में प्रस्तुत किया गया है। भाव की प्रगल्भता भी प्रस्तुत किये गये हैं। "छोटी बहन" में छोटी बहन को जब भाभियाँ सेमल के पेड़ पर चढ़ाकर सीढ़ी हटा लेती हैं, तो वह पेड़ पर ही रोती-कलपती अपने भाइयों को पुकारती है। रोते-रोते उसके अश्रुपूरित नेत्र सूख जाते हैं - "राः आः राः आः ते मेड दाः जाकेन रोयना।" इस छोटे से वाक्य में भाषा की प्रगल्भता अवलोकनीय है, जो "हो" भाषा की विशेषता है।

"हो" लोक कथाओं में बहुत से ऐसे शब्द आये हैं, जो हिन्दी भाषा से लिये गये हैं। "गदराया" हिन्दी लोक भाषा शब्द है, जिसका अर्थ होता है "पुष्ट" या पूरा पलाक हुआ। "बुड्ढू बूढ़ा और चूहे" की कथा में इसका प्रयोग "गोदरा-गोदरा" भिन्डी (पुष्ट पेड़) के रूप में किया गया है। इसी प्रकार "बेपार" (व्यापार), दूकु (दुख), बलू (भालू), साबिन (सब), सीढ़ी (सीडी), हाती (हाथी), सिपाई (सिपाही), डिंकी (ढेंकी),

बान्दा (बाँध या तालाब), बुड़ा (बूढ़ा), दोबा (धोबी), पोरजा (प्रजा), सुकुरी (सुअर), बोस्ता (बस्ता या बोरा), मुचि (मोची), प्रीतियान (प्रीति या प्यार करना), राजा मंत्री अनेक शब्द हिन्दी से ''हो'' भाषा में आये हैं जिनका प्रयोग भावाभिव्यक्ति के लिये किया गया है।

''हो'' लोक कथाओं में जहाँ किसी विषय या बात पर अधिक जोर देना होता है, वहाँ एक शब्द को दो बार प्रयुक्त कर निहित भावार्थ को अभिव्यक्त किया गया है, जैसे ''हजर-हजर बचर'' (हजारों वर्ष), कुसुड-कुसुड (सुबक-सुबक कर), जोम-जोम ते (खा-खा कर) आदि शब्दों का प्रयोग अनेक कथाओं में मिलता है। संक्षिप्त एवं संश्लिष्ट शब्दों का प्रयोग ''हो'' लोक कथाओं में पाये जाते हैं जो कथक्कड़ को भावाभिव्यक्ति के लिये उपयुक्त होते हैं।

2. ''हो'' लोक कथाओं की संरचनात्मक विशेषताएँ – अन्य लोक कथाओं की तरह ''हो'' लोक कथाओं में भी प्रेम का अभिन्न पुट, अश्लीलता का अभाव, मानव की मूल प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति, समृद्धि और मंगल कामना की भावना, अन्त संयोग से, रहस्य, रोमांच और अलौकिकता की प्रधानता, उत्सुकता की प्रबल भावना और वर्णन में स्वाभाविकता एवं सहजता को बोध का हम अवलोकन करते हैं। ''भाई-बहन'' का प्रेम इतना गहरा और सात्त्विक है कि बहन को कष्ट देने वाली पत्नियों की हत्या भाई कर देता है। ''दुष्ट भाभी'' का अन्त, छोटी बहन आदि कहानियाँ इस तथ्य को उगाजर करती हैं। सभी कहानियों का अन्त संयोग से ही होता है। कहीं-कहीं वियोग का भी पुट मिलता है, जो कहानी को सार्थक बनाने के लिये प्रयुक्त होता है। ''सबई घास की कथा'', ''गले में चिह्न वाली पंडुकी'' आदि कथाओं का अन्त वियोग से होता है। ''मंत्री पुत्र एवं राजकुमारी की कथा'', छोटी बहन आदि का अन्त संयोग से ही होता है। रहस्य, रोमांच एवं अलौकिकता आदिम जीवन का अभिन्न अंग है। ''हो'' लोक कथाओं में भी इनका बाहुल्य है। ''मसुर दाल की कथा'', ''कुम्हार के लड़के की कथा'', ''दो बहनें'', ''आग की वर्षा'' आदि कहानियों में रहस्य, रोमांच एवं पारलौकिक शक्तियों का प्रादुर्भाव हमें देखने को मिलता है। सभी कथाओं में उत्सुकता बनी रहती है कि आगे क्या हुआ या होगा। वर्णन सहज, सरल एवं स्वाभाविक प्रतीत होता है। कहीं-कहीं कल्पना की उड़ान है तो कहीं-कहीं जीवन की कठोर यथार्थता सामने आ जाती है। ''फूल की परी'' में केवल कल्पना है तो ''एक भाई का प्रतिशोध''

में जीवन की यथार्थता, पारिवारिक कलह एवं उसका दुःखद अन्त दर्शाया गया है, जो हमारे समाज में निरन्तर चलता रहता है। इन लोक कथाओं में भी यथार्थवाद की अपेक्षा आदर्शवाद को ही अधिक अपनाया गया है। "हो" समाज का भावुक लोकमानस इन कथाओं में उभर कर सामने आया है जो दुःख को सुख मे , विपत्ति को सम्पत्ति में, दरिद्रता को समृद्धि में बदल देने में विश्वास करता है। उसका हर कार्य "सिङ्बोंगा" पूरा कर देते हैं। अलौकिक सिङ्बोंगा लौकिक जीवन में "बूढ़ा", "बूढ़ी" ब्राह्मण या "खुजली वाला नौकर" के रूप में अवतरित होकर अपने भक्तों का कल्याण करते हैं। "हो" लोक कथाओं में यह पारलौकिक तत्त्व अत्यन्त मुखर होकर सामने आता है। "सिंगबोंगा" जहाँ "चेरा" का सृजन कर पृथ्वी का निर्माण करते हैं, वहीं पाप के अधिकतम होने पर "अग्नि प्रलय" का आवाहन कर पाप को नष्ट कर देते हैं। यह "हो" लोक कहानियों के लोक़-मानस की, लोक विश्वास की उपज है जो युगों से "हो" लोक कथाओं में कथक्कड़ों के माध्यम से चली आ रही है।

"हो" लोक कथाओं में अन्य लोक कथाओं की तरह आशावादी दृष्टिकोण, भाग्यवाद एवं कर्मवाद का समन्वय, प्रकृति चित्रण की बहुलता एवं समानता की व्यापकता देखने को मिलती है। "हो" लोक कथाओं में एक बहन अपने भाइयों से मिलकर भाभियों का उत्पीड़न से मुक्त होने के लिये कई असम्भव कार्य कर देती है। सर्प एवं शेरनी अपना दूध देती हैं (छोटी बहन) और सर्प उसकी लकड़ी को बाँध कर घर तक पहुँचाता है-"गले में चिह्नों वाली पंडुकी"। इनके पात्र इतने साहसी हैं कि एक चरवाहा राजा के हाथी से लड़ता है और उसे उठाकर सात समुद्र पार फेंक देता है (वीर चेंडेया)। एक साधारण चरवाहा राजकुमारी को प्राप्त कर लेता है। भाग्य और कर्म से बड़ा बन जाता है (मंत्री पुत्र और राजकुमारी की कथा एवं भैंसों का पालतू होना)। "हो" लोक कथाओं का जन्म ही प्रकृति की गोद में सुरम्य वनाच्छादित घाटियों में हुआ है। अतः प्रायः सभी कथाओं में प्रकृति चित्रण मिलता है। प्रकृति के पेड़-पौधे, पशु-पक्षी सभी मानववत् जीवन्तता के साथ इन लोककथाओं में सहभागी बनते हैं। समानता या साम्यवादी दृष्टिकोण इन कथाओं में इतना अधिक है कि एक साधारण चरवाहा राजा की लड़की से अपने पौरूष के बल पर शादी कर लेता है।

लोककथाओं की संरचना में कथानक, पात्र, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, देश-काल, भाषाशैली तथा उद्देश्य विषयक तत्त्व होते हैं। इन्हीं तत्त्वों से कथा की रचना होती है। "हो" लोककथाओं में भी ये सभी तत्त्व वर्तमान हैं और इनसे "हो" लोक

कथाओं का गठन एवं विकास हुआ है।

"हो" लोककथाओं में सभी प्रकार के कथानकों को आधार मानकर कहानियाँ कही गयी हैं एवं उनका संकलन हुआ है। पौराणिक कथा (मिथ) के रूप में "असुर कथा", "आग की वर्षा" आदि प्रमुख है। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक आख्यान के रूप में "रितुईगोंडाई की कथा", "तुंग राजा की पंचायती" आदि प्रमुख हैं। "जाति कथा", "गोत्र कथा", 'पशुकथा", "परी कथा" आदि विभिन्न विषयों पर आधारित लोक कथाएँ "हो" लोक साहित्य में वर्तमान हैं। ये सभी कथाएँ "हो" लोक साहित्य में वर्तमान हैं। ये सभी कथाएँ लोक जीवन पर आधारित हैं और इनमें लोक का राग-विराग, उदारता, संतोष, आत्म-निर्भरता, चतुराई, श्रद्धा, दया आदि का अवलोकन हम करते हैं।

इन कथाओं के पात्र "सिंगबोंगा" (परमेश्वर) से लेकर पशु-पक्षी, पेड़-पौधे तक हैं जो मानववत् आचरण करते हैं और बाघ प्रसन्न होकर युवती को आभूषण आदि से अलंकृत कर विदा करता है (नवयुवती की कथा)। सियार या लोमड़ी न्याय करने में सहायक होते हैं और नीर-क्षीर न्याय मिलना उनके माध्यम से संभव हो पाता है (एक राजकुमार का साहसिक कार्य)। इन कथाओं में मनुष्य के अतिरिक्त देवी-देवता, राक्षस, पशु-पक्षी, परी, कुल्हाड़ी, पेड़, नदियाँ आदि भी जीवन्त पात्र के रूप में आये हैं, जिनमें किसी-न-किसी रूप में मानवीय भावनाएँ विद्यमान हैं। "असुर कथा" एवं "आग की वर्षा" में "सिङ्बोंगा" स्वयं पृथ्वी पर अवतरित होकर आसुरी प्रवृत्ति का नाश करते हैं। बुइदू बूढ़ा और चूहा, लोमड़ी और भालू, एक लोमड़ी की धूर्तता आदि कहानियों में पात्रों की विविधता अवलोकनीय है।

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भी "हो" लोक कथाएँ महत्वपूर्ण हैं। "हो" लोक जीवन में जो जिस प्रकृति एवं स्वभाव का होता है, उसे लोककथाओं में उसी रूप में प्रस्तुत किया गया है। बाघ दो दम्भी, सियार एवं लोमड़ी को धूर्त, बन्दर की धोखेबाज (चालाकी से) भालू की बेवकूफी, तेली, नाई को चालबाज एवं धोखेबाज आदि के रूप में चित्रित किय गया है। चरित्र-चित्रण में व्यक्तिगत चरित्र से अधिक वर्गगत, जातिगत एवं समाजगत चरित्र का चित्रण किया गया है। अधिकांश पात्र प्रतीक के रूप में आये हैं जो एक वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं। "हो" लोक कथाओं में भाभी को ननद के प्रति दुष्टता का प्रतीयक माना गया है और भाई-बहन का स्नेह सम्बन्ध गहनतम एवं पवित्रता को पराकाष्ठा पर रखा गया है। परंतु एक भाई को फलते-फूलते देख नहीं

सकता (एक भाई का प्रतिशोध)। छोटे भाई का चरित्र अधिक आदर्श दर्शाया गया है (मनुष्यभक्षी की कथा)। "हो" लोककथाओं में चरित्र-चित्रण में मनोवैज्ञानिक प्रणाली को अपनाया गया है। जाति कथाओं में कुछ जाति को मूर्ख एवं कायर के रूप में चित्रित किया गया है, जो "हो" समाज की मान्यता है (पान और गिरगिट, पान द्वार मच्छरों का शिकार)।

कथोपकथन की दृष्टि से "हो" लोककथाओं में पात्रानुकूल भाषा एवं शैली को अपनाया गया है। सियार या लोमड़ी राजदरबार में जाकर भी अपनी धूर्तता के अनुसार ही बातें करते हैं (एक राजकुमार का साहसिक कार्य)। छोटे-छोटे सरल वाक्यों में ही विभिन्न पात्रों का काथोपकथन होता है। "हो" लोककथाओं में कई स्थानों पर "स्वगत" कथन भी प्रस्तुत किया गया है जो अवसरानुकूल है। "दो सियार, एक बाघ और बन्दर की कथा में सियारिन को जब मालूम होता है कि वह जिस गुफा में है, वह बाघ का है और जब बाघ अपनी गुफा के दरवाजे पर आता है तो बच्चों को पीटना शुरू कर देती है। बच्चे जब रोते हैं तो वह कहती है-"तुम लालची बच्चे, अभी तुम लोगों को सात बाघों का जिगर (कलेजी) खिलायी हूँ। फिर भी तुम लोगों की भूख शान्त नहीं हुई, धैर्य रखो एक दूसरा बाघ आ रहा है। ....इतना जोर से मत चिल्लाओ कि वह शोरगुल सुनकर भाग जाय।" और सियारिन के इस कथोपकथन के फलस्वरूप वह बाघ भाग जाता है। इस प्रकार "हो" लोककथाओं में अनेक प्रभावशाली और अर्थपूर्ण परंतु सरल कथोपकथन की शैली अपनायी गयी है जो कथा को रोचक और गतिशील बनाती है। मुर्खो के कथोपकथन में मूर्खता स्पष्टतः परिलक्षित होती है। "पान द्वारा मच्छरों का शिकार" कथा में सबसे बुद्धिमान् (बेवकूफ) पान मच्छरों को मारने का यह प्रस्ताव करता है - "क्यों न हमलोग मच्छरों को तीर-धनुष से मार दें।"

देश-काल की दृष्टि से भी "हो" लोककथाएँ कालक्रमानुसार विभिन्न सामाजिक स्थितियों को दर्शाती हैं। "रितुई-गोंडाई की कथा" में राजतंत्र के युग में व्याप्त अत्याचार एवं दमन की कथा उजागर होती है। "तुङ् राजा और पंचायत" की कथा में राजघरानों में व्याप्त कदाचार एवं उसका प्रतिफल परिलक्षित होता है। "राजकुमारी एवं मन्त्री पुत्र की कथा" भी राजघरानों की समकालीन स्थिति को दर्शाता है। गोत्र कथाएँ इस तथ्य को उजागर करती हैं कि बहुत पूर्व आदिकाल में "हो" में गोत्र-प्रथा नहीं थी। वह परवर्ती काल में, "आखेटयुग में" ही प्रारम्भ हुई और वनों में भटकते "हो" समाज के विभिन्न वर्ग अपने कल्याणकारी फलों, झरनों, वृक्षों, पक्षियों

आदि को अपना गोत्र-प्रतीक बनाया (कुदादा गोत्र, जामुदा गोत्र, मेलगांडी गोत्र, देवगम गोत्र कथा)। ये कथाएँ अधिकांशतः उस काल की याद दिलाती है जब सामाजिक संगठन आदर्श था और पशु भी न्यायार्थ राजदरबार में जा सकता था। उस काल में देवी-देवता (सिंगबोंगा, नगएरा आदि) भी वरदान और अभिशाप देते थे। प्राकृतिक शक्तियों के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति की भावना अधिक थी और उनके प्रति देवत्व का भाव रखा जाता था। अन्यायी और दुष्टता की सजा सर्वत्र दी गयी है। एक भाई का प्रतिशोध एक लोमड़ी का कलापूर्ण छल, दुष्ट भाभी का अन्त, छोटी बहन आदि इसके ज्वलंत उदाहरण हैं।

उद्देश्य की दृष्टि से "हो" लोककथाएँ केवल मनोरंजक एवं ज्ञानवर्द्धन का साधन रही हैं। कुछ कथाएँ ऐसी हैं जो धार्मिक अनुष्ठानों के समय कही जाती हैं। "असुरकथा" इसी प्रकार की एक कथा है। इन कथाओं के माध्यम से शिक्षा, राजनीति के सिद्धान्तों की सुलभ जानकारी, कुटनीति, धार्मिक तत्त्वों एवं अनुष्ठानों का स्पष्टीकरण, पर्वों की उत्पत्ति, जाति एवं गोत्र की उत्पत्ति की जानकारी देना एवं विभिन्न चरित्रों से समाज को अवगत करा देना इन कथाअें का उद्देश्य रहा है। पहले "हो" क्षेत्र में जवान लड़के एवं लड़कियों के लिये अलग-अलग रात्रि-आवासगृह रहते थे, जहाँ बूढ़े एवं बूढ़ी स्त्रियाँ लोककथाओं के माध्यम से लड़के-लड़कियों का मनोरंजन एवं ज्ञानवर्द्धन किया करती थीं। यह परम्परा किसी-न-किसी रूप में अभी भी "हो" समाज में विद्यमान हैं। "हो" लोककथाएँ भी अधिकांशतः मौखिक ही रही हैं और विभिन्न कथक्कड़ इनको सुनाकर इनका प्रचार-प्रसार करते रहे हैं। "हो" समाज का गौरवशाली इतिहास, उनका शौर्य, आजाद एवं उन्मुक्त रहने की उनकी जिजीविषा इन कथाओं के माध्यम से जागृत रही है।

उपदेशात्मक "हो" लोककथाएँ "हो" जाति को पापों की विभीषिका से बचाजी हैं। "अग्निवर्षा" और "असुर कथा" सुनकर कोई भी "हो" प्रकृति के विरूद्ध एवं "सिंगबोंगा" को अप्रसन्न करने का दुःसाहस नहीं कर सकता है। "सिङ्बोंगा" की सर्वशक्तिमत्ता एवं सर्वव्यापकता का परिचय उन्हें इन्हीं लोककथाओं से मिलता है। इन्हीं कथाओं के माध्यम से वे पुनर्जन्म या पुनर्जीवन की कल्पना कर पाते हैं और इसके प्रति आस्थावान् रहकर आत्मा को अमर मानते हैं (दो बहनों की कथा, राजकुमारी एवं मन्त्री पुत्र की कथा, मनुष्यभक्षी की कथा आदि)।

भाषा एवं शैली की दृष्टि से "हो" लोककथाएँ अत्यन्त सरल, अर्थपूर्ण एवं प्रभावशाली प्रतीत होती हैं। सभी "हो" लोककथाएँ "हो" भाषा में ही कही गयी हैं और

उसमें "हो" भाषा के अतिरिक्ति हिन्दी, बंगला आदि के शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। व्यंग्य-विनोद, कटाक्ष, अवसरानुकूल शब्द आदि का प्रयोग "हो" लोककथाओं में किया गया है। "एक राजकुमार के साहसिक कार्य" शीर्षक कथा में सियार जब न्यायाधीश के समक्ष गवाही देता है, तो कुटिल व्यंग्य प्रस्तुत कर यह सिद्ध कर देता है कि "कोल्हू का निर्जीव लट्ठा किसी जीवित घोड़ा को जन्म नहीं दे सकता।" कथा का प्रारम्भ "बहुत दिनों की बात है", "बहुत वर्ष हुए" "आदिकाल में" आदि शब्दों से होता है जो कथा की प्राचीनता सिद्ध करते हैं। कथा के द्वितीय चरण में उसके पात्र एवं घटनाएँ निरूपित होती हैं और इसी के साथ कथा का विकास होता है।

शैली की दृष्टि से "हो" लोककथाएँ गद्यात्मक, पद्यात्मक एवं गद्य-पद्य मिश्रित (चम्पू) शैली में प्रस्तुत की गयी हैं। अधिकांशतः "हो" लोककथाएँ गद्य में ही उपलब्ध हैं। परंतु कुछ कथाओं में यथा-छोटी बहन, एक नवयुवती की कथा, मनुष्यभक्षी की कथा, फूल की परी, वृक्ष एवं सबई घास का जन्म, दो बहनों की कथा आदि में गद्य के मध्य पद्य या गीत का प्रयोग भावभिव्यक्ति को अधिक करूण, भावप्रवण एवं प्रभावशाली बनाने के लिये किया गया है। ज्ञातव्य है कि श्रोताओं पर स्थायी प्रभाव डालने के लिये इस शैली का प्रयोग किया जाता है जो "हो" लोककथाओं में भी द्रष्टव्य है। "गले में विह वाली पंडुकी" शीर्षक कथा में जब एक ननद को उसकी भाभियाँ उसे सेमल वृक्ष पर चढ़ा कर छोड़ दिया तो वह यह करूण भरे गीत गाकर अपने भाइयों को बुलाती है -

"रङ रङ के दामार कोम,
कते दूर रे दादा बरदा बेपारी"

और उसकी करूणा भरी आवाज को उसके भाई सुन लेते हैं और उसके पास आ जाते हैं

"दो बहनों की कथा" में भी छोटी बहन की हड्डी जब एक सांरगी में प्रयुक्त होती है तो उससे एक दर्दभरा गीत उभरता है-

"हमलोगों के प्यारे पिता जंगल में
हमलोगों को तिरिल फल देने ले गये थे।
हाय! हमलोगों ने उसे हमेशा के लिये खो दिया।
मेरी बड़ी बहन मेरे लिये पानी लाने गयी
और वह कभी नहीं लौटी।

वह राजकुमारी बन गयी।
अब मेरी हड्डियाँ ही अजनबी आदमी की
सारंगी में शेष रही,
हमेशा के लिये खो गये
अपने सगे लोगों के लिये
अब रोना ही शेष है।"

इस गीत को सुनकर ही राजकुमारी अपनी छोटी बहन को पाने के लिये विचलित हो उठती है और "सिंगबोंगा" की कृपा से उसे पा लेती है। इस प्रकार या पद्य कथा के विकास की महत्त्वपूर्ण कड़ी है और इनसे कथाएँ अधिक रोचक और मार्मिक बन जाती हैं। लोककथाओं के इस विशिष्ट शैली का प्रयोग "हो" लोककथाओं में भी खूब हुआ है।

उपसंहार

''हो'' लोककथाओं के विवेचन से स्पष्ट होता है कि ये कथाएँ साहित्यिक एवं सांस्कृतिक दृष्टियों से अत्यन्त समृद्ध हैं। ये शताब्दियों से लोक जीवन में प्रचलित रही हैं और ''हो'' लोगों के जीवन को अनुशासित करती रही हैं।

जैसा कि निर्दिष्ट किया गया है, ये कथाएँ तीन प्रकार की हैं -

१. मिथ या मिथक

२. आख्यान

३. लोक कहानी

''हो'' मिथों में शून्य से सत्ता के निर्माण की कथा सन्निहित है। शरीर के किसी भी अंग अथवा अस्थि अवशेष से सम्पूर्ण शरीर की पुनः सृष्टि ''हो'' लोगों में व्याप्त अस्तित्ववाद एवं पुनर्जीवन के सिद्धान्त एवं दर्शन का परिचायक हैं। इनमें सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक अव्यवस्था को मिटाकर सुव्यवस्था लाने की बात कही गयी हैं। इन मिथों में वर्णित घटनाएँ सर्वकालिक प्रतीत होती हैं। तामसिक एवं सात्त्विक प्रवृत्तियों का संघर्ष सर्वयुगीन है, जो ''हो'' मिथों मे भी वर्णित है। इन मिथों में वर्णित ''टोटेम'' अथवा गोत्र प्रतीकों ने ''हो'' समाज के परवर्ती जीवन की सामाजिक व्यवस्था को नियंत्रित किया है। ''हो'' लोक जीवन के पर्व, धार्मिक अनुष्ठान, सामाजिक कर्म आदि भी किसी-न-किसी मिथ से जुड़े हुए हैं।

''हो'' आख्यानों में पूर्ववर्ती ''हो'' समाज एवं उसके जीवन के पुराकालिक इतिहास, उसकी संस्कृति के उद्भव एवं विकास की कथा सन्निहित हैं। इन आख्यानों में मुख्य रूप से ''हो'' सामाजिक जीवन से सम्बन्धित समस्याओं, लोक देवताओं, राजा तथा ''हो'' क्षेत्र में बसने वाली अन्य जातियों के जीवन एवं विशेषताओं का भी निरूपण मिलता है। इनके विश्लेषण से यह स्पष्टतः ज्ञात होता है कि सामन्तवादी उत्पीड़न के समक्ष ''हो'' लोग कभी झुके नहीं। उनके अनुसार राजा और प्रजा का संबंध उत्पीड़क एवं उत्पीड़ित का रहा हैं। इससे यह भी पता चलता है कि ''हो'' समाज कभी भी हीन भावना से ग्रस्त नहीं रहा और उसके आत्मबल एवं आत्म-सम्मान की भावना को कोई भी शक्ति कुचलने में सफल नहीं हो सकी। उसका एक साधारण सदस्य (जैसे चरवाहा) राज परिवार के किसी भी सदस्य से अधिक समर्थ एवं शक्तिशाली दर्शाया गया है। इन आख्यानों में रूप परिवर्तन अथवा मृत्योपरान्त पुनर्जन्म को लेकर अधूरी कथा को पूर्ण

करने का संयोजन इनकी अपनी विशिष्टता है।

मिथ एवं आख्यान की तुलना में ''हो'' भाषा में लोक कहानियों की संख्या कहीं अधिक है। इन कहानियों में विषयगत विविधता भी अधिक है। युगों से ये कहानियाँ कथक्कड़ों के माध्यम से संवाहित होकर आज भी विद्यमान है। ये ''हो'' लोगों का मनोरंजन ही नहीं करतीं, वरन् उनके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक जीवन को शासित एवं नियंत्रित भी करती हैं। इन कथाओं में ''हो'' समाज का लोक जीवन, पर्व-त्योहार, धार्मिक अनुष्ठान, देवी-देवता, आर्थिक व्यवस्था, प्रकृति जगत् से संबंध आदि विषय काफी जीवन्त होकर स्थापित हुए हैं। इन कहानियों के पात्रों में घटनाओं में विविधता परिलक्षित होती है। इन कहानियों के पात्र जीवन्त हैं और उनके दैनिक दुःख-सुख में घुले मिले हुए हैं। ''हो'' लोगों की भावुकता, उनकी स्पष्टवादिता, आत्म-सम्मान की भावना, अपने समाज एवं संस्कृति के प्रति उनकी निष्ठा, सामन्तवाद अथवा शोषण के प्रति विद्रोह और प्रबल प्रतिकार की भावना का निरूपण इन कहानियों में स्पष्टः परिलक्षित होता है। विषय की विविधता भी इन कथाओं की विशेषता है।

इन कहानियों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि इनमें वर्गविशेष के प्रतीक के रूप में विभिन्न पात्रों को प्रस्तुत किया गया है। राजा सामन्तवाद के उत्पीड़न एवं शोषण का, मंत्रीपुत्र सामन्तवादी बुराइयों का, चरवाहा सर्वहारा वर्ग का, राजकुमारी पुरानी दकियानुसी विचारधारा का और नाई धूर्तता का प्रतीक बनकर विभिन्न कहानियों में आये हैं। उनका चरित्र व्यक्ति विशेष का चरित्र न होकर एक पूरे वर्ग का चरित्र बन गया है। अतिप्राकृतिक शक्तियाँ एवं पात्र भी इन कहानियों में सक्रिय भूमिका निभाते हैं जिनसे कहानियों में रोचकता के साथ-साथ उनका विकास संभव हो पाता है। इन कहानियों में कालक्रमानुसार कुछ परिवर्तन परिलक्षित होता है, परंतु उनका मूल भाव वही है, जो पूर्व काल में था।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि ''हो'' लोककथाएँ ''हो'' जाति की अमूल्य साहित्यिक एवं सांस्कृतिक धरोहर है।

कुल संकलित "हो" लोककथाएँ

1. धरती बनने की कथा

विश्व की सृष्टि के पूर्व जंगल, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी आदि नहीं थे। केवल पानी-ही-पानी था। ईश्वर (सिंगबोंगा) ने विचार किया-"यह पानी कैसे हटे और धरती का कैसे निर्माण हो।"

उन्होंने सर्वप्रथम एक कछुए का सृजन किया। वह पानी के भीतर घुसा और नीचे से मिट्टी लाकर डालना शुरू किया। वह बार-बार मिट्टी को पानी के ऊपर लाकर छोड़ देता। परंतु इससे मिट्टी एकत्र नहीं हो सकी और धरती का निर्माण नहीं हो सका।

ईश्वर ने सोचा - "कौन मिट्टी को भीतर से लाकर इस प्रकार जमा कर सकता है कि धरती बन जाय।" कछुआ बोला - "मैं अकेला हूँ और एक हाथ से मिट्टी लाता हूँ। एक बड़ा हाथ दें तो पूरी (अधिक) मिट्टी ले आऊँगा।"

तब ईश्वर ने एक केकड़ा बनाया जिसको पाँच हाथ दिये। केकड़ा पानी के भीतर चला गया और मिट्टी लाने लगा। वह मिट्टी पूरी-की-पूरी ले आता था। परंतु मिट्टी पानी में घुल जाती थी। इस प्रकार केकड़ा से भी धरती का निर्माण नहीं हो सका।

तब ईश्वर ने पुनः विचार किया - "मिट्टी ऊपर तक कैसे आयेगी, पानी भरा हुआ है" ईश्वर ने जाँघ से मैल छुड़ाकर दो "चेरा" पैदा किया और एक को स्त्री तथा दूसरे को पुरुष बनाया। दोनों चेरों को पानी में छोड़ दिया। इन दोनों ने मिलकर कुछ भी काम नहीं किया। उस पर ईश्वर सोचने लगे - "इन चेरों ने मिलकर कुछ भी काम नहीं किया। ये मिट्टी नहीं लाये और बिनाा काम किये रह गये।" लेकिन चेरों ने पानी के भीतर मिट्टी खा-खा कर उस मिट्टी से पहाड़ बनाना शुरू कर दिया था। इस तरह ऊपर से नहीं, नीचे से ही मिट्टी निकालना शुरू किया। इसकी जानकारी इन्होंने सिंगबोंगा (ईश्वर) को नहीं दी। इन चेरों से और बच्चे हुए और सब ने मिलकर धरती बनाने का काम शुरू किया। इस प्रकार कालक्रम से मिट्टी पानी के बाहर आ गयी। धीरे-धीरे मिट्टी पानी के ऊपर आती गयी और पानी भीतर-भीतर सूखता गया। थोड़ी-थोड़ी मिट्टी बनते-बनते कुछ समय बाद मिट्टी का पर्वत बन गया। कुछ दिनों के बाद यह मिट्टी जमकर (सूखकर) कड़ी हो गयी और इस प्रकार धरती का निर्माण हो गया। जहाँ कहीं गढ्डा रह गया, वह समुद्र बन गया।

अभी भी चेरा सिङ्बोंगा के आदेशानुसार मिट्टी से पहाड़ बनाता रहता है।

कछुआ और केकड़ा अब पानी में या किनारे पर रहते हैं।

2. पेड़–पौधे एवं जीवधारियों का सृजन - जब धरती का निर्माण हो गया और कहीं-कहीं पानी भी शेष रहा गया, लेकिन धरती पर इनके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं था, केवल खाली और उबड़-खाबड़ धरती थी। तब सिंगबोंगा (ईश्वर) ने विचार किया कि यह धरती किस प्रकार अच्छी होगी। उन्होंने चेरा, कछुए और केकड़े को बुलाया। उन्होंने विचार किया कि धरती कहीं ऊँची और कहीं नीची है, यह एक तरह से समतल नहीं है। सिंगबोंगा ने सोचा कि उन्हें (चेरा, कछुआ और केंकड़ा) हाथ और पैर नहीं है। ये धरती को समतल कैसे करेंगे।

तब सिंगबोंगा ने हाथ–पैर (दो हाथ–दो पैर) देकर "सुरमि–दुरमि" का सृजन किया। इन्होंने थोड़े दिनों में ही धरती को समतल कर दिया। तब वे सिंगबोंगा से बोले-"हमने धरती को समतल कर अपना काम खत्म कर दिया।" सिंगबोंगा बोले - "अच्छा तुमलोगों को मदद करने के लिये बाघ–भालू, बनैला भैंसा, हिरन, हाथी आदि का सृजन करता हूँ, जिन्हें जोतकर धरती का तुमलोग उपजाऊ बना लोगे।" "इस प्रकार सिंगबोंगा ने इन जीवों को बनाया। सुरमि–दुरमि ने इन्हें जोतकर धरती को खेत बनाया और इस पेड़-पौधों को रोप दिया। इस प्रकार पहाड़ बन गया और समतल जमीन खेत बन गया।"

ऐसी किंवदन्ती है कि सुरमि–दुरमि ने कई पोखरे भी बनाये थे। पहाड़ियों पर या पहाड़ियों से घिरे अभी भी ऐसे पोखरे हैं। ऐसा विश्वास है कि पहाड़ियों से घिरे अभी भी ऐसे पोखरे के आसपास बड़े-बड़े देवी या देवता रहते हैं। कहीं-कहीं असुर भी रहे हैं। आज भी ओझा–गुनि लोग असुर देवता और सुरमि–दुरमि की पूजा करते हैं ओर "हो" समाज में ये दुष्ट प्रेतात्मा की तरह माने जाते हैं।

3. मानव के सृजन की कथा — धरती के निर्माण के पश्चात् पेड़–पौधा आ जाने से सभी ओर अत्याधिक सुन्दर दृश्य देखकर सिंगबोंगा बहुत प्रसन्न हुए। तब सिंगबोंगा ने विचार किया - "धरती कितनी सुन्दर है। इसकी रक्षा के लिये किसका सृजन किया जाय" उन्होंने सुरमि–दुरमि को कहा-"तुमलोगों ने बहुत काम और सेवा की है। इसी के बल पर तुम लोग राजा बनोगे।"

इसके बाद सिंगबोंगा ने मिट्टी से मूर्ति बनायी और नाक-आँख आदि बनाकर

उसमें जीवन डाल दिया। सिंगबोंगा ने इसका नाम "लुकु" (लुकुहड़म) रखा। सिंगबोंगा ने उसे धरती समर्पित कर दी। "लुकु" अन्य सभी जीवधारियों से अलग रहता था।

सुरमि-दुरमि ने सिंगबोंगा से कहा-"अपने सभी जीवों की दो-दो (जोड़ी) बनाया है। इसलिये आप इस मानव की भी जोड़ी बनाइये।"

इसपर सिंगबोंगा ने उस आदमी को सुला दिया। लुकु के सो जाने के बाद सिंगबोंगा ने उसकी बायीं पसली की हड्डी को निकाल कर एक "स्त्री" का सृजन किया और उसे मानव का रूप दिया। इस प्रकार लुकु को एक नया जीवन साथी मिला। जग जाने पर लुकु ने सिंगबोंगा से पूछा कि यह कौन है, सिंगबोंगा ने जवाब दिया - "यह तुम्हारी जोड़ी है। अब तुम लोग साथ रहोगे। इसका नाम "लुकुमि" (लुकुबुढ़ि) होगा।"

लुकु बुढ़ा लुकुमि बुढ़ि पेड़ों के फल-फूल खाकर रहने लगे। उस समय फल-फूल काफी होता था। ईश्वर ने उन्हें "जोजो" (इमली) का फल खाने से मना किया था। वे इसके अलावा अन्य फलों को खाकर रहने लगे। लेकिन "इमली" के फल को देख-देखकर वे ललचाते रहे। एक दिन दोनों ने विचार किया - "इस पेड़ के फल को खाने से क्यों मना किया गया, देखने में यह कितना अच्छा है। यह अच्छा है और खाने के योग्य हैं।" ऐसा कहते हुए उन दोनों ने "जोजो" फल खा लिया।

इमली (जोजो) फल खाने पर दोनों के दाँत कटकटाने लगे, वे सिहरने लगे और शर्म का अनुभव करने लगे। इससे दोनों में आत्मज्ञान आ गया और वे अपने को खाली और नंगा महसूस करने लगे। इसपर दोनों ने अपने को पेड़ के पत्तों से ढक लिया।

इसपर ईश्वर ने दोनों को बुलाया सिंगबोंगा ने सोचा कि इन दोनों ने मेरे आदेश का उल्लंघन किया है। उन्होंने कहा - "तुम दोनों जोजो का फल खाकर शर्म और भय का अनुभव कर रहे हो। तुम लोगों ने मेरी बात नहीं मानी।" सिंगबोंगा ने उन्हें ग्रीष्म ऋतु आदि के कष्टों को झेलते हुए जीवन बिताने के लिये भेज दिया।

इसके बादद लुकुबुढ़ा और लुकुमी बुढ़ी खेत में काम करके अपना भरण-पोषण करने लगे। दूसरे-दूसरे जो जीवधारी थे, उन्होंने बहुत-से बच्चों को पैदा किया। लेकिन ये दोनों कुछ भी पैदा नहीं कर सके। सिंगबोंगा ने उन्हें देखकर विचार किया - "जब तक ये दोनों एक साथ खाट बनाकर नहीं सोयेंगे, उन्हें संतान नहीं होगी।" एक दिन सिंगबोंगा एक वृक्ष का रूप धर कर आये और बोले - "तुम लोग डियङ् (हंड़िया) बनाकर धरती पर गिरा कर पीयो।" सिंगबोंगा ने उन्हें "रानू" जड़ी

लाकर दी और हंड़िया बनाने की विधिक बता दी।

इसके बाद उनलोगों ने धान से भूसी अलग कर चावल बनाया और उससे हंड़िया तैयार की। वे हंड़िया धरती पर गिरा कर पीने लगे। वे खाट बनाकर एक साथ सोने लगे। कुछ दिनों के बाद उनके बच्चे हुए।

सिंगबोंगा से लमटा घास बोली – "हे सिंगबोंगा, मैंने "हो" मानवों को पाप करते देख लिया है। अब मैं क्या करूँ।" सिंगबोंगा ने कहा–"तुम इनके शरीर में सट जाओ और उनको वस्त्र प्रदान करो। जो भी तुमसे होकर गुजरे, उसमें तुम सट जाया करो।" इस प्रकार लमटा घास मनुष्य के निर्वस्त्र शरीर पर वस्त्र की तरह सट गयी।

कुछ समय बाद कोई लड़का बीमार पड़ गया। वे सिंगबोंगा को खोजने निकल गये। सिंगबोंगा एक बूढ़े के वेष में रहते थे और उन्हें कभी-कभी देख आया करते थे। सिंगबोंगा बूढ़े के रूप में उन्हें मिल गये। सिंगबोंगा ने कहा– "तुम लोग सिंगबोंगा बूढ़े के नाम से एक सफेद मुर्गे की बलि दो इससे तुम्हारा लड़का ठीक हो जायगा।"

इसपर लुकु ने कहा–"हे दादा, तुम मुर्गे की बलि लेकर पूजा कर दो और मुर्गे को खा लो।"

सिंगबोंगा बोले – "नहीं, मैं यह कार्य नहीं करूँगा। तुम ही पूजा करो और मुर्गे को बलि देने के बाद खाओ।"

इस पर लुकु बूढ़ा ने चावल लाकर जमा किया और पूजा की। उसने मुर्गे की बलि देकर उसके रक्त को चावल में डाल दिया और यकृत् तथा प्लीहा को काट कर चढ़ा दिया। वह घर आ गया। पुनः लौट कर जाने पर उसने दादा को (सिंगबोंगा को) चावल और मुर्गे का जिगर और प्लीहा को खाते देख लिया।

यह देखकर सिंगबोंगा ने कहा – "अब तुम दोनों हमको प्रत्यक्ष नहीं देख सकोगे।" ऐसा कहकर उन्होंने उनकी आँखों को भेलवा से दाग दिया। उनकी सफेद आँखें काली हो गयीं और तब से वे सिंगबोंगा को नहीं देख सके।

4. सेंगेल गमा (आग की वर्षा) – सृष्टि के निर्माण के बहुत दिनों बाद मनुष्यों की संख्या बहुत बढ़ गयी। पूरी धरती और रास्ते मानवों से भर गये। इन लोगों ने सिंगबोंग को स्मरण करना छोड़ दिया और कुमार्गगामी हो गये। सभी बुरे और भले के भेद को भूल गये। यह देखकर सिंगबोंगा बहुत अप्रसन्न हुए और सोचने लगे कि इन मानवों को कैसे साफ-सुथरा किया जाय। तब सिंगबोंगा ने "अग्नि देव" का

आह्वान किया। जंगल के सभी पेड़-पौधे जलने लगे, पानी सूख गया और सभी जीवधारी नष्ट हो गये। मनुष्य रास्ते में चलते-चलते, बैठे-बैठे, खेत वाले किसान खेत में, घर वाले घर में, नाचने वाले नाचते-नाचते, बाजा बजाने वाले बाजा बजाते-बजाते ही मर गये। इनमें से कोई खड़ा-खड़ा, कोई बैठा-बैठा और कोई चलते-चलते खत्म हो गया।

"हो" बूढ़ा लोग कहते हैं कि अग्निवर्षा से सभी मरकर पत्थर बन गये। इनमें से अभी भी पत्थर की मूर्तियाँ और पत्थर के मान्दर-नगाड़ा देखने को मिलते हैं। कहीं-कहीं पहाड़ों पर तथा जंगलों में बाध-भालू और हाथी भी पत्थर बन गये। उड़ीसा के मयूरभंज जिले में एवं सिंहभूम के बेनीसागर में अग्नि वर्षा से पत्थर बने मनुष्यों की मूर्तियाँ अभी भी मिल जाती हैं, ऐसी किंवदन्ती है। इस प्रकार सिंगबोंगा ने अग्नि वर्षा द्वारा सभी जीवों को नष्ट कर दिया।

परंतु इस "अग्नि प्रलय" के समय नगे-एरा (वरूण देवता या जल की देवी) ने मानव तथा अन्य सभी जीवों के एक-एक जोड़े को बचा लिया। इन सभी को जल के भीतर अपने घर मे बन्द कर रोक रखा। मानव जोड़े को "तुम्बा" में बन्द करके रखा तथा अन्य जीवों के जोड़ों को केकड़े द्वारा बनाये गये बिलों में छिपाकर रख दिया।

आग की वर्षा समाप्त होने पर मानव की जोड़ी नगेएरा से छिपकर बाहर आ गयी। सिंगबोंगा को जब यह मालूम हुआ तो नगेएरा पर वे नाराज हो गयी। उन्होंने नगेएरा को श्राप देते हुए कहा कि "तुम भी इन दोनों की तरह इधर-उधर भटकती फिरोगी।" परंतु नगेएरा के समझाने पर सिंगबोंगा प्रसन्न हो गये और उन जोड़ों से सृष्टि का विस्तार किया।

इन दो आदि पुरूष एवं नारी से जब संतान बहुत दिनों तक नहीं हुई तो ईश्वर ने विचार किया कि बिना संतान के सृष्टि कैसे चलेगी। उन्होंने देखा कि ये दोनो एक दूसरे से अलग-अलग सोते हैं। तब सिंगबोगा ने उन्हें "डियङ्" (हंड़िया) बनाकर दिया। धरती पर थोड़ा "डियङ्" गिरा कर उनलोगों ने भी लिया और दोनों साथ-साथ सोने लगे। इस प्रकार कालक्रमानुसार उनसे बाल-बच्चे हुए और सृष्टि का फिर से विकास हुआ। इसके बाद सभी लोग अच्छी तरह रहने लगे।

5. जाति और काम का बँटवारा – बूढ़े लोग कहते हैं कि जब मनुष्यों की संख्या अधिक हो गयी तो सिंगबोंगा ने विचार किया कि सभी लोगों को उनके

भरण-पोषण के लिये अलग-अलग काम में लगाना अच्छा होगा। ऐसा विचार कर सिंगबोंगा ने धरती पर वर्तमान सभी वस्तुओं को इकट्ठा किया। इनस धान, घोड़ा, गाय, बकरी, लाठी, सूता आदि उनके सामने आ गये। उसने सभी मनुष्यों को इकट्ठा करके कहा-"जो पहले से घोड़ा पालन करता है, वह घोड़ा लेकर डण्डे से उसका पालन-पोषण करे।" "इस तरह एक "हो" आगे आया और घोड़े पर उछल कर चढ़ गया और उसे दौड़ा दिया।"

एक महतो ने धान के बीज ले लिये। उसे व्यापारा करने का आदेश सिंगबोंगा ने दिया। एक व्यक्ति केन्दू की डाल लेकर खड़ा हुआ, वह "गोप" (गौड़) हुआ और उसका कार्य गाय-बकरी की चरवाही करना हुआ। जिसने "सूत" पकड़ लिया, वह तांती हुआ और उसका काम झाडू-टोकरी बनाकर अपना भरण-पोषण करना हुआ। कुछ लोग धान का पौधा ले आये और वे चासी (कृषक) "हो" हुए। लोहे का काम करने वाले लोहरा बन गये। इस प्रकार जाति और काम का बँटवारा हो गया। इस प्रकार सातों जाति के लोगों ने सिंगबोंगा को फल लाकर अर्पित किया। इस प्रकार लोग कर्म एवं जाति के अनुसार काम करने लगे और वे भात, सब्जी एवं फल खाकर जीवनयापन करने लगे।

6. जाति की उत्पत्ति कथा – "ओते बोड़म" और सिंगबोंगा स्वतः उत्पन्न हुए। उन्होंने पत्थर और धरती का निर्माण किया और उसे घास-वृक्ष से आच्छादित किया। तब उन्होंने पशुओं का सृजन किया। पहले उन्होंने पालतू पशुओं को सृजन किया तत्पश्चात् जंगली जानवरों को बनाया।

जब मनुष्य के बसने योग्य सब कुछ हो गया, तो उन्होंने एक लड़का और एक लड़की का सृजन किया। उन्होंने उन्हें घाटी में एक गुफा में रख दिया। वे कालक्रमानुसार जवान हुए। जब सिंगबोंगा ने उन्हें प्रजनन कार्य के संबंध में बिल्कुल अनभिज्ञ पाया, तब उन्होंने उनमें उत्तेजना एवं वासना की प्रवृत्ति जगाने के लिये चावल से बनायी गयी "इलि" (डियङ्) का निर्माण किया और उन्हें दिया।

जब उस प्रथम माता-पिता से बारह लड़के और बारह लड़कियाँ पैदा हुई तो सिंगबोंग ने भैंसा, बैल, बकरा, भेड़ा, सुअर, मुर्गी और साग-सब्जी का भोज आयोजित किया और उन बारह लड़के-लड़कियों के जोड़ों को भोज के लिये आमंत्रित किया। पहले दो जोड़ों ने भैंसा और बैल के मांस को ग्रहण किया वे ब्राह्मण-क्षत्रिय कहलाये। जिस जोड़े ने खस्सी (बकरा) का भोज ग्रहण किया, वे शूद्र हुए और जिस जोड़े ने "घोंघा"

खाये, वे भूइयाँ कहलाये। सुअर का मांस ग्रहण करने वाले "संताल" कहलाये। प्रथम दो जोड़ों ने मांस त्याज्य अवशेष एक जोड़ा को दिया, वे घांसी कहलाये। इस प्रकार विभिन्न जातियों की उत्पत्ति हुई।

7. असुर की कथा – बूढ़े लोग कहते हैं कि पुरातनकाल में "असुर" रहते थे। उस जमाने में सुरमि-दुरमि भी रहते थे। उनलोगों ने पेड़-पौधा, झाड़ी आदि को साफ कर धरती (जमीन) को समतल बनाया था और इसी कार्य के लिये सिंगबोंगा ने उनका (सुरमि-दुरमि) का सृजन किया था।

इस काल में मनुष्य "हो" की तरह "असुर" भी रहते थे। वे देखने में असुन्दर थे। उनका सिर-कान, हाथ-पैर आदि बहुत बड़े-बड़े या बहुत छोटे-छोटे (बेडौल) होते थे। उनको देखकर भय की अनुभूति होती थी। वे मनुष्यों "हो" के बीच में नहीं रहते थे। सिंगबोंगा ने उन्हें बलवान् बनाया था।

सिंगबोंगा ने "हो" को खेती का काम सिखाया और असुर को लोहा गलाने का। कुछ समय बाद असुरों की बुद्धि खराब हो गयी और वे दम्भी हो गये। असुरों के पास काफी सोना-चाँदी, रूपया-पैसा जमा हो गया और वे सम्पत्ति वाले धनवान् बन गये। वे लोगों को मारने और उनकी हत्या करने लगे। वे किसी से भी डरते नहीं थे और सिंगबोंगा (ईश्वर) से भी नहीं भय खाते थे। उनके इस कुकृत्य के कारण सिंगबोंगा ने उनका नाश करने का निश्चय किया।

असुर बड़े-बड़े कच्चे पेड़ों को काटकर रात-दिन लोहा गलाते थे। कच्ची लकड़ी की आग से चारों तरफ जलन की अनुभूति होने लगी। जंगल के पेड़-पौधे, पशु-पक्षी सभी खत्म होने लगे। बाँध और तालाब का पानी सूखने लगा। जंगल के जीव-जन्तु को पानी और चारा नहीं मिलने लगा। जीव-जन्तु जोर-जोर से चिखने-चिल्लाने लगे और सिंगबोंगा को पुकारने लगे। कुछ समय बाद ईश्वर (सिंगबोंगा) ने भी आग की गर्मी का अनुभव किया और चीख-पुकार सुनी। सिंगबोंगा ने विचार किया - "असुर धन इकट्ठा करने में लगे हुए हैं। भट्ठी की आग किस तरह फैल गयी। इससे पेड़-पौधे नहीं बचेंगे और सभी जीव-जन्तु मरकर नष्ट हो जायेंगे।"

सिंगबोंगा ने पानी में रहने वाली एक चिड़िया को बुलाया और कहा - "तुम असुरों के पास जाकर बोलों कि वे रात-दिन लोहा गलाने का काम न करें। यदि वे दिन में गलावें तो रात में छोड़ दें और यदि रात में गलावें तो दिन में छोड़ दे। जंगल में

पेड़-पौधे सब नष्ट हो रहे हैं, बाँध-तालाब सूख रहे हैं और सभी जीव-जन्तु नष्ट हो रहे हैं। उन्हें चारा नहीं मिल रहा है और पानी भी किसी को नहीं मिल रहा है।"

इस पर वह चिड़िया उड़कर असुरों के पास गयी और कहा - "हे असुर लोग, सिंगबोंगा ने यह संदेश भेजा है कि आप रात-दिन लोहा नहीं गलावें। दिन में गलावें तो रात में छोड़ दे और रात में गलावें तो दिन में छोड़ दें। जंगल के पेड़-पौधे सभी खत्म होते जा रहे हैं। बाँध और पोखरा का पानी सूख गया है और जंगल के जीव-जन्तु नष्ट हो रहे हैं।"

असुरों ने उस चिड़िय को पकड़ लिया और उसे कोयले की राख से काला कर दिया और कहा - "हमलोग सिंगबोंगा की बात नहीं मानेंगे। हमलोग उसे नहीं जानते।"

इस प्रकार वह अपना काला शरीा लिये सिंगबोंगा से जाकर बोली - "ये लोग आपको नहीं मानते। उन लोगों ने कोयला मलकर मुझे काला कर दिया।"

तब सिंगबोंगा ने "दिऊरी तथा हंस" चिड़िया को बुलाया और उन्हें असुरों से अपना संदश कहने के लिये भेजा। असुर उन दूतों पर भी बिगड़ गये। उन लोगों ने दिउरी चिड़िय को गर्दन खींच कर खाली बाँस में भर दिया। हंस की गर्दन और पैर को खींचकर लम्बा कर दिया और उस पर धूल छिड़क दिया। उसे तीर से भी बाँध दिया। ये दोनों भी सिंगबोंगा के पास वापस आकर इन सब घटनाओं को बताया।

इसके बाद सिंगबोंगा ने "नीलकण्ठ और चाड़" चिड़िया को बुलाया। इन लोगों ने भी असुरों के पास जाकर सिंगबोंगा का संदेश कह सुनाया। पर असुरों ने उनकी बात न मानकर उन्हें पकड़ लिया। "चाड़" का आग की राख में लपेट दिया ओर नीलकण्ठ को पकड़कर नीला पानी में डुबा दिया। इस प्रकार "चाड़" "चेटे-चेटे" और नीलकण्ड "टोंय-टोंय" बोलते हुए भागकर सिंगबोंगा के पास आये और सारी घटना साफ-साफ सुना दी।

इसके बाद सिंगबोंगा ने "लाङ्" और "बोचो" चिड़िया को बुलाया और उन्हें भी अपना संदेश असुरों को सुनाने के लिये दूत बनाकर भेजा। लेकिन असुरों ने इनकी बात भी नहीं मानी। इनको भी असुरों ने पकड़ लिया। "लाङ्" चिड़िया की पूछ उखाड़कर उसमें मुर्गा का पंख खोंस दिया और "बोचे" को हल्दी के पानी में डुबो दिया। ये दोनों भी सिंगबोंगा के पास आकर आपबीती सुना आये।

इसके बाद सिंगबोंगा ने सोना दीदी और चन्दाकुई को बुलाया और असुरों के पास भेजा। परंतु असुरों ने इनकी बात भी नहीं मानी और गुस्से में भरकर उन्हें पकड़

लिया। सोना दीदी पर गर्म माँड़ फेंक दिया और चन्दाकुई के ललाट पर कुछ लगा दिया। इन दोनों ने भी सिंगबोंगा के पास आकर अपनी आपबीती सुनायी।

कुछ समय बाद सिंगबोंगा ने अपने उड़ने वाले घोड़े को बुलाया और सोचा कि शायद असुर उसकी बात मान लेंगे। वह असुरों के पास जाकर सिंगबोंगा का संदेश सुना दिया।

इस पर असुरों ने कहा – "हमलोंग सिंगबोंगा को नहीं जानते हैं और उसकी बात नहीं मानेंगे।" ऐसा कहकर सिंगबोंगा के घोड़े को पकड़ लिया और उसके पैर (खुर) को दो भागों में फाड़ दिया। वह अभागा घोड़ा भागकर सिंगबोंगा के सामने जाकर खड़ा हो गया और अपनी व्यथा-कथा सुना दी।

सिंगबोंगा ने तय किया कि अब असुरों का नाश अवश्य करना होगा। सिंगबोंगा ने ऐसा सोचा कि अब किसी को बुलाना या कहना ठीक नहीं है। अब किसी दूत को भेजना भी ठीक नहीं है।

ऐसा विचार कर सिंगबोंगा ने खुजली रोग से ग्रस्त नौकर लड़के का रूप धारण कर लिया। वे असुरों की बस्ती में चले गये। असुरों के गाँव में जाकर नौकर के काम के लिये कहने लगे – "आप सज्जन लोग (महाशय) हमें अपने यहाँ नौकर रख लो। मैं सभी काम कर दूँगा।"

इसपर असुर लड़कियाँ आपस में कहतीं – "ऐ लड़की! देखो, इसको नौकर रखेगी" दूसरी उत्तर देती – "हमलोग इस तरह के खुजली रोग वाले नौकर को नहीं रखते। हमलोग इस लड़के को नहीं जानते (पहचानते) हैं"

इस प्रकार वह सभी असुरों के घर गया और उसे ऐसा ही जवाब मिला। इसके बाद पूछ-पूछ कर वह एक बूढ़ा-बूढ़ी के पास पहुँचा। उन्हें संतान नहीं थी। उनसे खुजली वाले लड़के ने पूछा – "ऐ दादा-दादी, क्या आप हमें नौकर रखेंगे?मैं आप लोगों के धान को मुर्गी से रक्षा करूँगा।"

इस पर बुढ़िया बोली – "अच्छा, रहो। मैं खेत पर काम करने जाऊँगी। तब तुम घर पर धान को फैलाकर सुखाना।" इस प्रकार वह खुजली वाला लड़का उस बूढ़ा-बूढ़ी के यहाँ नौकर हो गया।

जब दोनों खेत पर काम करने जाते तो वह धान को पसारता और सुखाता। वह धान कूटकर चावल भी बना देता था। इस प्रकार बूढ़ा-बूढ़ी के वापस आने पर उन्हें भूसी रहित चावल मिलता।

एक दिन खुजली वाले लड़के ने कहा - "ऐ दादा-दादी, आज एक मुर्गा का अण्डा लाओगे। मुझे बहुत-सा फोड़ा-फूंसी हो गया है। मैं उससे मलहम बनाकर लगाऊँगा।"

इस पर इन्होंने एक अण्डा ला दिया। अण्डा मिलने पर वह असुर लड़कों का लट्टू नचाने का खेल देखने चला गया। वे सभी लोहे के लट्टू से खेल रहे थे। असुर लड़कों ने उसे भी खेल में शामिल होने के लिये कहा। "तुम्हारा लट्टू कहाँ है" असुर लड़कों ने पूछा।

इसपर उसने मुर्गी के अण्डे को निकाला। उसने उस अण्डे को नचाया। मुर्गी के अण्डे वाले लट्टू की मार से असुर लड़कों के लोहे के लट्टू फट गये। परंतु अण्डे के लट्टू को कोई नहीं फोड़ सका। खुजली वाले लड़के ने बारी-बारी से सभी के लट्टुओं को फाड़ दिया। इसके बाद असुर लड़कों ने उसे लट्टू के खेल में सम्मिलित नहीं किया।

उन लड़कों ने बूढ़ा-बूढ़ी से खुजली वाले लड़के की शिकायत की - "ऐ बूढ़ा-बूढ़ी! जब धान सूख रहा था तो यह नौकर हमलोगों के साथ लट्टू खेलने चला गया था और काफी धान-मुर्गियाँ खा गयीं।"

लेकिन खुजली वाले लड़के ने मुर्गियों को भगा दिया था और धान को जमा कर पूरा एक सूप नाप कर ला दिया था। इसने उसे कूट दिया था जिससे और चावल कम नहीं हुआ। इस प्रकार खुजली वाले लड़के को डाँट नहीं पड़ी।

दूसरे दिन उसने मालिक और मालकिन से कहा - "ऐ दादा-दादी! आज आटा की रोटी खाने को मन ललच रहा है। थोड़ा गेहूँ पीस कर लायेंगे।"

इसके बाद कूट-पीसकर आटा की एक रोटी बनाकर वह असुर बच्चों के पास गया। आज वहाँ छुरी की लड़ाई का खेल हो रहा था। खुजली वाला लड़का भी वहाँ चला गया। वहाँ वह खाली हाथ से छुरी की लड़ाई के खेल में शामिल हो गया और हाथ से ही मार-मार कर बारी-बारी से सभी की छुरियाँ तोड़ डालीं।

इसपर उन लोगों ने उसके मालिक से शिकायत की - "यह खुजली वाला लड़का आज दिन-भर हमलोगों के साथ छुरी की लड़ाई का खेल खेलता रहा है और चटाई पर का धान सब मुर्गियों ने खाकर खत्म कर दिया है।"

नौकर लड़के ने बाकी बचे धान को इकट्ठा कर लिया, वह एक सूप हो गया। उसे कूट कर वह पाँच पैला (दस सेर) चावल ले गया। चावल देखकर घर के मालिक-मालकिन खुश हो गये और उसे नहीं डाँटा।

इसके बाद सिंगबोंगा (खुजली वाला लड़का) ने असुरों के लोहे के उत्पादन को कम कर दिया। असुर बहुत जोर-जोर से भाँथी चलाकर लोहा गलाते, पर वह पूरा नहीं होता।

इसपर असुर लोग खुजली वाले लड़के के मालिक के पास गये और बोंगा पूजा के लिये कहने लगे - "ऐ बूढ़ा-बूढ़ी! लोहा ठीक से नहीं गल रहा है। थोड़ा देख लीजिये।"

उनलोगों ने कहा - "वह नौकर बहुत विद्या जानता है। वह पाँच पइला धान से पाँच पइला चावल निकाल देता है। उसी के पास तुमलोग जाओ और बोंगा की पूजा कराओ।"

इस पर असुर लोग उस खुजली वाले लड़के के पास गये और बोले - "तुम बहुत विद्या जानते हो। थोड़ चलकर तुम देख लो, लोहा ठीक से नहीं गल रहा है।"

"मेरा घाव सब अभी ठीक कहाँ हुआ है। मैं नहीं देख सकता हूँ।" उसने कहा।

इसके बाद वह फिर सोचकर बोला - "अच्छा, आज पानी और चावल छोड़ जाओं। कल सुबह आओ तो बताउँगा।"

दूसरे दिन सुबह असुरों के आने पर उसने कहा - "जाओ और एक सफेद मुर्गी सिंगबोंगा के नाम से बलिदान करो। लोहा ठीक से गलने लगेगा।"

इसपर उनलोगों ने सफेद मुर्गी की बलि दी और लोहा अच्छी तरह गलने लगा।

कुछ दिन बीत जाने पर फिर लोहा गलना बन्द हो गया। वह पानी की तरह पतला होकर बेकार में बह जाता।

असुर फिर चावल लेकर नौकर लड़के पास दिखाने आ गये।

"चावल को छोड़ दो और कल सुबह आना।" उसने उनसे कहा।

दूसरे दिन सुबह आने पर उसने कहा - "खस्सी देना होगा। एक सफेद बकरा की बलि दो। लोहा ठीक से गलने लगेगा।"

इस पर असुरों ने एक सफेद बकरा की बलि सिंगबोंगा के नाम पर दी और उसके बाद लोहा ठीक से गलने लगा।

परंतु कुछ दिनों के बाद लोहा का ठीक से गलना फिर बन्द हो गया। वह गलने पर पानी की तरह पतला होकर बह जाता। इसपर फिर असुर लोग उस नौकर लड़के के

पास गये और बोले – "चावल देख लो। लोहा फिर नहीं बन पा रहा है।" लड़के ने चावल को छोड़ जाने और दूसरे दिन आने के लिये कहा।

"असुर लोगों को नर-बलि देनी होगी।" लड़के ने कहा। इसपर असुर लोग चिन्तित और उदास होकर चले गये।

असुर लोग बहुत विचार करने लगे कि बलि के लिये आदमी को कहाँ से लायेंगे। बहुत विचार करने पर तय हुआ कि उस खुजली वाले नौकर को ही बलि दे दी जाय।

उसके मालिक के पास काफी रूपैया-पैसा इकट्ठा करके गये। "हमलोगों को बलि के लिये कोई आदमी नहीं मिला। हमलोग आपके नौकर को लेंगे। कितना रूपया देना होगा।"

उनलोगों ने कहा – "यह खुजली वाला लड़का धान-चावल ठीक से रखता है और सभी की भलाई के लिये काम करता है। उसकी बलि दे देने से कौन यह सब काम करेगा। इसलिये हमलोग उसे नहीं देंगे।" असुर लोग दुःखी होकर चले गये।

असुरों को जब कोई आदमी अन्त तक नहीं मिला तो उस नौकर लड़के को जबरदस्ती बलि चढ़ाने के लिये ले आये। इस पर वह लड़का बोला – "आपलोग सिंगबोंगा को पूजना चाहते हैं। लेकिन आप्रलोग गला रेत कर मुझे बलि नहीं दे। मैं लोहा गलाने की भट्ठी में प्रवेश करूँगा और आप लोग मुझे जला देंगे। एक सफेद बकरा का चमड़ा साफ कर ले आइये। धान का आटा और कोदो का आटा कुरमी लड़की कूट-पीस कर तैयार करेगी और हमारे भट्ठी में घुसने के बाद उस आटा से भट्ठी को लिप-पोत कर आग जला देंगे। रात-दिन भट्ठी को पैर से चलाते रहेंगे। इसके बाद नया सूत के बीठे पर घड़ा के पानी लायेंगे और आम के पत्ता से भट्ठी के आग पर छिड़केंगे।"

असुर लोगों ने लोहे की भट्ठी को खूब अच्छी तरह से बनाया और उनको चारो तरफ से अच्छी तरह बंद कर दिया। खुजली वाले नौकर के भट्ठी में घुसने के बाद कुमारी युवतियाँ आटा का लेप बनाकर और मिट्टी से भट्ठी के दरवाजे को बन्द कर दिया। सफेद बकरा के चमड़े से बने भाँथी को असुर कन्याएँ रात-दिन चलाती रहीं। इसके कई दिन बाद सूत के बीठा पर नये घड़े के पानी लेकर आम के पत्ता से भट्ठी की आग पर छिड़काव करके भट्ठह को बुझाया गया।

सब ने आश्चर्य से देखा – यह क्या चमत्कार हो गया। खुजली वाला नौकर लड़का सोना-चाँदी के आभूषण से सजकर दमकता हुआ रूप लेकर बाहर आया।

उसका पूरा शरीर सोना के गहनों से भरा था।

उसे देखकर असुरों को प्रलोभन हुआ। इस प्रकार के सुन्दर सोने के आभूषण और शृंगार के साधन तो असुरों के पास भी नहीं थे।

वह दिव्य रूप वाला लड़का बोला - "आपलोगों ने मुझे जलाने के लिये भट्ठी में डाला और मैं सोने के गहनों को लेकर बाहर आया।"

उसे देखकर सभी कहने लगे - "देखो, खुजली वाला लड़का कितना गहना लेकर आया है। इसके गहनों को हमलोग ले लें।"

"यह भला कैसे होगा, आपलोग भी पूरा लायेंगे। आपलोग भाई-बन्धु के साथ भट्ठी में घुसें और इसे प्राप्त करें।" लड़के ने ऐसी बात कही।

यह बात सुनकर अधिकांश स्त्रियाँ इस काम में लग गयीं और सभी असुर भट्ठी में प्रविष्ट होने लगे। सभी असुरों को भट्ठी में घुस जाने के बाद उस लड़के ने असुर स्त्रियों से कहा - "अच्छा, अब तुम लोग लोहा और कोयला को राख से पीसकर भट्ठी के द्वार बंद कर दो।"

इस पर असुर स्त्रियों ने लोहा और कोयला की राख से भट्ठी के दरवाजे को बन्द कर दिया। सफेद बकरा के चमड़े की भाँथी को रात-दिन चलाती रहीं। आग पूरी तरह लग जाने पर भीतर से लोग (असुर) खेत के चूहे की तरह हल्ला करने लगे। इस पर असुर स्त्रियाँ उस लड़के से पूछने लगीं - "भीतर में किस प्रकार का हल्ला-गुल्ला हो रहा है?"

लड़के ने कहा - "असुर लोग सोना-रूपा की छीना-झपटी कर रहे हैं। सब में सोना लेने की होड़ लगी हुई है।"

भाँथी खूब जोर-जोर से चलती रहीह। भट्ठी के दरवाजे से खून बहने लगा। यह देखकर असुर स्त्रियों ने पूछा - "तुम धोखा तो नहीं दे रहे हो दरवाजे से खून क्यों बह रहा है?"

लड़के ने कहा - "कोई बात नहीं है असुर महिलाओं! आपलोगों के पुरूष पान खा रहे हैं। इसी से हल्का लाल रंग बह रहा है। आपलोग चिन्त न करें और जोर-जोर से भाँथी चलावें।"

इस प्रकार कई रात और कई दिनों तक भाँथी चलने से भट्ठी जलकर खत्म हो गयी। इसके बाद भट्ठी को तोड़ा गया। उसके टूटने पर केवल मानव-अस्थियाँ खट-खट करती बाहर निकलीं।

असुर स्त्रियाँ रो-रोकर कहने लगीं - "अरे लड़का! तुमने हमलोगों को धोखा दिया और सभी मर्दों को जला दिया।"

"हाँ, तुमलोगों को समझाने के लिये मैंने चिड़ियाँ और घोड़ भेजा था। परंतु तुमलोगों ने बात नहीं मानी।"

ऐसा कहकर सिंगबोंगा सूत का रास्ता पकड़कर ऊपर उठने लगे। परंतु असुर स्त्रियों ने उनका पैर पकड़ लिया।

सिंगबोंगा ने उनसे कहा - "तुमलोग भी धरती पर अन्य लोगों की तरह अपना भरण-पोषण करो। देवा (पुजारी)" के लड़के की तरह तुमलोग भी बलि देकर सिंगबोंगा की पूजा करों। अब से तुमलोग भी सरसों और धान के दाना को पैरों से मीसकर छुड़ाओगी। सिर के केश को बाँध कर धरती पर सब मिल-जुलकर अनाज को सभी तरफ बो कर लगाओ। बीज छींटने पर इस प्रकार पहाड़ पर गिरने पर पहाड़ के देवता का नदी मे गिरने पर नदी के देवता का, गढ़ा में गिरने पर गढ़ा के देवता का और झाड़ी-झरना जहाँ भी गिरेगा, वहाँ से देवी देवता तुम्हारा नुकसान नहीं करेंगे। उनकी पूजा करोगी तो किसी को कोई बिमारी नहीं होगी और किसी आदमी को बुरी आत्माएँ नहीं पकड़ेंगी।"

इसके बाद असुर स्त्रियों ने मुर्गी, सुअर, भेंड़, बकरा, आदि की बलि दी।

इस प्रकार असुरों का सिंगबोंगा द्वारा नाश नहीं किया जाता तो पेड़-पौधे, जीव-जन्तु आदि नहीं बचते और मनुष्य भी जीवित नहीं रह पाते। असुरो के नाश के लिये सिंगबोंगा खुजली वाला नौकर बन कर बूढ़ा-बूढ़ी के घर में आये और असुरों का छल द्वारा नाश किया और सभी जीव-जन्तु मानव आदि को अथवा समस्त सृष्टि की रक्षा की।

8. हेरो पर्व की कथा — प्राचीन काल में एक गाँव में चार भाइयों का एक "हो" परिवार रहता था। सभी भाई कुंआरे थे और एक ही साथ रहते और खाते-पीते थे। उनके घर से कुछ दूर एक अन्य परिवार रहता था जो "हेरो" पर्व मनाया करता था। इस पर्व में चावल पीसकर आटा बनाकर उससे रोटी बनाते थे और उसी आटा को घोलकर दीवार पर मानव और घोड़ा की आकृति बनाते थे।

एक दिन बड़ा भाई गाँव में गया और एक नारी का भीत्तिचित्र देखा। उसने उसी प्रकार की लकड़ी की मानव आकृति बनाकर रात में उसी भीत्तिचित्र पर चिपका दिया। उसने इस सम्बन्ध में किसी को कुछ नहीं बताया।

दूसरे दिन दूसरा भाई जब गाँव में घूमने गया तो उसने काठ की मूर्ति को देखा। जब रात हो गयी तो उसने चुपके से जाकर उस काठ की मूर्ति पर मिट्टी का लेप चढ़ा दिया। तीसरा भाई ने भी उस मूर्ति के देखा और रात में जाकर उसे विभिन्न रंगों से रंग दिया और मोतियों से सजा दिया। सबसे छोटा भाई चौथे दिन वहाँ गया और सुन्दर मूर्ति में प्राण डाल दें। उसने इसनी तन्मयता और भक्तिपूर्वक सिंगबोंगा की प्रार्थना की कि उन्होंने प्रसन्न होकर उस मूर्ति में प्राण डाल दिया। वह मूर्ति शीघ्र ही एक सुन्दर युवती में परिवर्तित हो गयी। छोटा भाई उसे घर ले आया और अपने कमरे में उसे रख दिया।

दूसरे दिन अन्य तीनों भाइयों ने उस युवती को देखा। तीसरे भाई ने पूछा कि क्या उसने उस युवती को उसी घर से प्राप्त किया है, जहाँ मूर्ति बनी थीं।

जब छोटे भाई ने हामी भर ली तो तीसररे भाई ने कहा - "अच्छी बात है। उस पर में मेरा अधिकार होना चाहिए क्योंकि मैंने ही उस मूर्ति को सजाया था।"

दूसरे भाई ने अपना अधिकार जताते हुए कहा - "यह मेरी है क्योंकि लकड़ी के मूर्ति पर मिट्टी का लेप लगाने का कार्य मैंने किया था।"

इस प्रकार वह सुन्दर एवं आकर्षक युवती को लेकर चारों भाइयों में काफी संघर्ष होने लगा। अन्त में यह बात गाँव की पंचायत में गय। पंचों ने अपना फैसला बड़े भाई के पक्ष में दिया और अन्य भाइयों को इस फैसले को स्वीकार करना पड़ा। उसी समय से "हो" लोग "हेरो" पर्व धूमधाम से मनाते हैं - और सुन्दर-सुन्दर चित्र बनाते हैं।

9. डोंड़ साँप (पानी का साँप) – एक लड़की जंगल में पत्तियाँ तोड़ने और जलावन की लकड़ी चुनने गयी थी। जब लकड़ी चुन रही थी, उसे दो अण्डा दिखायी पड़ा और वह उन्हें मोरनी का अण्डा समझकर उठाकर घर ले आयी वास्तव में वे अण्डे पहाड़ी साँप के थे।

जब वह दूर खेतों पर काम करने गयी थी, उसके छोटे भाई ने उन अण्डों को देख लिया। उसने उन अण्डों को तोड़ दिया और तलकर खा गया। जब वह घर वापस आयी तो उसके छोटे भाई ने सारी बातें उसे बता दी।

बहन ने कहा - "प्रिय भाई! यह तुमने क्या किया, मैं उन्हें मोरनी का अण्डा समझ कर ले आयी थी। पर पता नहीं, वे किसके अण्डे थे। तुमने बहुत जल्दबाजी कर

दी।"

दो-तीन दिनों के बाद उस लड़के को एक अजीब अनुभूति होने लगी। उसे ऐसा लगा कि उसमें कुछ परिवर्तन हो रहा है और वह धीरे-धीरे एक साँप के रूप में रूपान्तरित हो रहा है। उसने अपनी अनुभूति अपनी बहन से बतायी। उसके अनुरोध पर उसकी बहन ने उसे टोकरी में रखकर ढक्कन को बन्द कर दिया और उसे जंगल के भीतर ले चली। उसने जंगल में जाकर उस टोकरी को रख दिया। उसके भाई ने टोकरी के भीतर से कहा - "अब मैं साँपों के बीच में ही रहूँगा। तुम थोड़ी दूर जाकर कहीं पर अपने को छिपा लो ताकि पहाड़ी साँप तुम्हें देख न सकें।

तदनुसार वह सुरक्षित स्थान पर चली गयी तब लड़के ने गीत गाना शुरू किया -

"नाइङ् दो, नाइङ् दो, बुरूबीङ किङ् नो लिङ्,
नाइङ् दो, नाइङ् दो, सांगस उरूकिङ ने डिङ आना।"

(मैं अब पहाड़ी साँपों के घर में जा रहा हूँ। वे दो पहाड़ी साँप मुझे अपने घर ले जा रहे हैं।)

जैसे ही उसने गीत गाना शुरू किया चट्टानों की दरार से दो साँप निकल आये और अपने भयंकर फनों से टोकरी को मारना प्रारम्भ किया। पर वे ढक्कन को खोल नहीं सके। इस प्रयास में उन्हें खरोंच भी आ गयी।

जब वे चले गये तो उस सर्प लड़के ने अपनी बहन से किसी जंगल के तालाब या कुण्ड में उसे ले चलने को कहा। उस लड़की ने वैसा ही किया। जब उसने टोकरी को ले जाकर पानी में रख दिया तो उसके भाई ने कहा - "अब मैं हमेशा पानी के सर्प के रूप में रहूँगा। तुम समय-समय पर इस कुण्ड में मछली मारने आया करोगी। तुम हमेशा पानी के किनारे ही रहोगी।" इस प्रकार वह लड़का प्रथम "डोड़ साँप" (जल-सर्प) बना।

10. दहेज (गोनोङ्) की उत्पत्ति – पुराने जमाने में बिना मुँह ढके जम्हाई लेना "हो" जाति के (करवा गोत्र के) लोगों में अशुभ लक्षण माना जाात था। वह बाघा का लक्षण माना जाता था। यदि कोई बिना मुँह ढके जम्हाई लेता हुआ मिल जाता तो तुरन्त पकड़कर बाघ की गुफा के पास ले जााकर उसके भाग्य के भरोसे छोड़ दिया जाता।

एक बार एक मुण्डा की लड़की बिना मुँह पर हाथ रखे जम्हाई लेती हुई पकड़ी गयी और रीति के अनुसार उसके घर वाले उसे बाघ की गुफा के पास ले गये।

वहाँ लोगों ने भात बनाया। उस लड़की को तेल और हल्दी का लेप लगाया गया। तब उसे भात खिलाया गया। उसके बाद उसे गुफा के सामने एक ऊँचे स्थान पर बैठा कर वे लोग वहाँ से चले गये।

एक चरवाहा जो कुछ दूर पर मवेशियों को चरा रहा था, इस कार्यवाही को दूर से देख रहा था। संध्या समय वह लड़का अपने मवेशियों को बाड़े में रखकर धनुष-बाण से सज्जित होकर उस गुफा के पास आ गया। जैसे ही बाघ माँद के पास आया और उस अबला लड़की पर छलांग लगानी चाही, उस चरवाहे ने अपनी तीर के निशान से उसे मार गिराया। वह उस लड़की को पत्नी बनाने के लिये घर ले गया।

उस नये जोड़े को पति-पत्नी के रूप में रहते कई मास व्यतीत हो गये। उसके बाद एक ताँती उस चरवाहे के यहाँ कपड़ा बेचने के लिये आया और उस लड़की को देखकर पहचान लिया। तांती ने चरवाहा से कहा - "मैं इस लड़की को जानता हूँ। यह हम लोगों के अमीर मुण्डा की बेटी है। इसको अपने घर में रखकर तुमने बेवकूफी का काम किया है। यदि मुण्डा को इसका पता चल गया तो तुम्हारा जीवन गम्भीर खतरे में पड़ जायगा।"

बेचारा गरीब चरवाहा बहुत डर गया। अन्त में उसने हिम्मत की और मुण्डा को शादी की सहमति के मूल्य के रूप में तीन गायें और एक भैंस देने का प्रस्ताव किया। तांती ने इस सम्वाद को मुण्डा तक पहुँचा दिया। यह बात मुण्डा को अविश्वसनीय लगी क्योंकि उपहार (गोनोङ्) की कीमत उस गरीब चरवाहे के लिये काफी अधिक थी। अतः मुण्डा ने इस तथ्य की छानबीन करा लेना उचित समझा। उसने एक दूत चरवाहा के पास भेजा। उस आदमी के माध्यम से उपहार (गोनोङ्) मिल जाने पर मुण्डा ने अपनी औपचारिक सहमति दे दी।

यह कहा जाता है कि तभी से "हो" समाज में जम्हाई के लिये इस कठोर नियम को तोड़ दिया गया और कन्या के लिये दहेज (गोनोङ्) लेने की प्रथा चल पड़ी।

11. नरभक्षी की कथा – प्राचीन काल में एक माता-पिता को सात लड़के और एक लड़की थी। सभी जवान लड़के शिकारी का जीवन व्यतीत करते थे और तीर-धनुष के प्रयोग में निपुण थे। उनकी बहन की शादी सुदूरवर्ती ग्राम के एक किसान के साथ हुई थि, जहाँ वह अपने पति के साथ रहती थी।

बहुत दिनों के बाद उसने अपनी माँ से मिलने की इच्छा व्यक्त की और पति की अनुमति माँगी। जब उसे अनुमति मिल गयी तो वह अपने मायके आ गयी। घर पर

उसे अपने परिवार के लिये खाना बनाने का काम मिला।

एक ऐसी घटना घटी कि जब वह सरसों का साग काट रही थी तो उसकी उँगली कट गयी और बहुत अधिक खून निकल कर साग में मिल गया। उसके भाई शिकार कर काफी शिकार लेकर वापस आये। शिकार किये पशुओं के मांस को भी उसने पकाया। जब उसके भाई खाने बैठे तो सबसे अधिक सुस्वाद उन्हें साग लगा। वे यह जानने के लिये उत्सुक हो उठे कि साधारण साग का स्वाद इतना अच्छा कैसे हो गया। उन्होंने अपनी बहन पर दबाव डालकर पूछना शुरू किया और अन्त में उसकी बहन ने सच्ची बात कह दी।

उसके भाई यह सोचने लगे कि जिसका खून इतना मीठा है कि साधारण साग इतना सुस्वादु हो गया, फिर उसका मांस तो और अधिक मीठा होगा।

अन्ततः उन लोगों ने अपने माता-पिता से उसे उसके पति के घर तक छोड़ आने का प्रस्ताव किया। अनुमति मिल जाने पर वे उसे एक सघन वन में ले गये। जब रात हो गयी तो उन लोगों ने अपनी बहन को पेड़ पर चढ़ा दिया और स्वयं उसके नीचे सो गये। सुबह में उसके भाई उसे तीर से मारने को तैयार हो गये। उसके मन के भाव को वह जान गयी उसने गीत गाना शुरू किया –

"सुनो ऐ करात फल के वृक्ष
एक व्यथा कथा।
सात भाई हैं, जो
मारना चाहते हैं अपनी एकलौती बहन को
सभी के तीर उसपर लगने से चूक जायँ।"

उसपर लगातार छः तीरों के निशान चूक गये और हर तीर चलने पर वह यही गीत दोहराती रहीं।

अब सबसे छोटे भाई की बारी थी। वह अपनी बहन को मारना नहीं चाहता था। परंतु उसके भाइयों ने उसे जान से मार देने की धमकी देकर उसे डरा दिया। उसने आँखों में आँसू भर कर रोते हुए तीर-धनुष उठाया। यह देखकर उसकी बहन फिर गाने लगी –

"यदि उससे बच गई मैं,
तो उसे हाथ धोना होगा
प्राणो से।

ऐ करात फल, प्रार्थना है तुमसे
कि उसका निशाना
सिद्ध हो, अचूक हो।"

छोटे भाई ने ठीक निशाना नहीं लगाया और चाहता था कि उसका तीर चूक जाय। परंतु तीर अपने निशाने पर लग गया और उसकी प्यारी बहन मरकर गिर पड़ी।

छः भाइयों ने चाकू एवं अन्य औजार निकाले और उसके मांस को काटकर तैयार किया। उसे पकाने के बाद सभी भाई उसके मांस को खाने के लिये तैयार हुए। पर छोटा भाई एकान्त में बैठकर विलाप कर रहा था। जब छोटे भाई को खाने को कहा गया तो उसने स्नान कर खाने की बात कही। वह नदी में चला गया और वहाँ मछली तथा केकड़ा पकड़ कर भून लिया और अपने साथ ले आया। जब वह वापस आया तो उसके भाइयों ने उसके साथ बैठकर खाने को कहा। परंतु वह उनसे थोड़ी दूर बैठकर खाने चला गया। उसने अपनी प्यारी बहन के मांस को चीटियों के बिल में डाल दिया और भुने हुए केकड़ा आदि को खाने लगा। इसके बाद वे सभी अपने घर वापस आ गये और अपने माता-पिता से कह दिया कि बहन के घर जाकर उसे पहुँचा आये।

जब बहुत दिन बाद भी वह लड़की अपने पति के घर वापस नहीं आयी तो उसका पति वापस ले जाने के लिये चल पड़ा। रास्ते में चीटियों के एक टीले पर उसने एक करात पेड़ को देखा। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि यह वृक्ष उस लड़की के मांस से पैदा हुआ था जिसे उसके छोटे भाई ने चीटियों के बिल में गाड़ दिया था। उस पेड़ पर एक फल लगा हुआ था। वह उस फल के देखकर ललचाया और बहुत नीचा होने के कारण उसे वह आसानी से तोड़ सकता था। परंतु जैसे-जैसे वह उसके निकट गया, वैसे-वैसे वह फल उससे दूर होता गया और वह उसकी पहूँच से बाहर होता गया। उसने उसे तोड़ने की बहुत कोशिश की, परंतु असफल रहा। अन्त में उसे एक आवाज सुनायी पड़ी। एक आवाज आ रही थी कि वह उस फल को तभी पाने में सफल हो सकेगा जब उसका छोटा साला कुन्द्रा इस पेड़ को काट देगा। तब वह फल को छोड़कर अपने श्वसुर के घर की ओर चल पड़ा। उसके सालों ने उसे बैठने के लिये एक मचिया दी। पर उसे भी उसने अस्वीकार कर दिया। उनलोगों ने उसे खाना और पीने को दिया। पर उसे भी अस्वीकार कर दिया। अन्त में बहुत आग्रहपूर्वक पूछने पर उसने कहा कि तबतक वह किसी चीज को स्वीकार नहीं करेगा जबतक उसे वह "करात" का फल नहीं मिल जाता। वह फल कुन्द्रा द्वारा उस पेड़ को काटने पर ही मिल सकेगा। कुन्द्रा को

उसके अनुरोध को पूरा करने को कहा गया। उसने पेड़ को जब काटना शुरू किया तो एक गीत सुनायी पड़ा -

"कोमल हाथों से
पेड़ को काटो
मेरे भाई प्यारे।"

कुन्द्रा ने धीरे-धीरे कुल्हाड़ी चलाना शुरू किया। अन्त में पेड़ कटकर जब गिर गया तो उसने अपनी बहन को सुख से उस पेड़ के खोखले में बैठा पाया। वह पेड़ के खोखले से बाहर आयी और सभी के साथ अपने पिता के घर गयी। उसने अपने पिता को सारी घटना गुप्त रूप से बताकर तत्काल अपने पति के साथ अपने घर वापस आ गयी।

12. पान द्वारा मच्छरों का शिकार — एक समय किसी गाँव में पान (तांती) जाति का पाँच-छः परिवार रहता था। जब वर्षा शुरू हुई और मच्छर लोगों को डँसने लगे तो पान लोगों ने मच्छरों के आक्रमण से बचने का उपाय खोज निकालने के लिये विचार-विमर्श किया। वे घंटों विचार करते रहे, पर कोई उपाय नहीं निकला।

अन्त में एक पान ने कहा - "मुझे उपाय सूझ गया। मैंने मच्छरों को मार गिराने का निश्चित उपाय खोज लिया हैं।" उसके अन्य साथी एक स्वर मे बोल उठे - "वह क्या है, वह क्या है।"

"क्यों नहीं हमलोग मच्छरों को तीर-धनुष से मार गिरावें" - वह बुद्धिमान् व्यक्ति बोला।

"यह ठीक होगा, यही ठीक रहेगा।" उसके अन्य साथी बोल उठे।

सभी एक साथ मिलकर अपना धनुष-बाण लेकर एक मकई के खेत में गये। इस खेत में मच्छर अधिक संख्या में थे और उनका प्रकोप बहुत अधिक था। रास्ते में उनलोगों ने तय किया कि वे आपस में इशारे से या फुस-फुसाकर बातें करेंगे ताकि उनकी आवाज सुनकर कोई मच्छर भाग न जाय। मच्छरों की उपस्थिति के विषय में अपने साथी को गुप्त सूचना वे सीटी बजा कर देंगे।

जैसे ही यह दल मकई के खेत में पहुँचा, एक मच्छर एक आदमी के पीठ पर बैठ गया। दूसरे ने निर्धारित विधि से सीटी बजा-बजा कर संकेत से पीठ की ओर (मच्छर की ओर) इशारा किया शीघ्र ही एक दूसरे पान ने तीर का निशाना मच्छर की

ओर किया और बाण सीधे उस अभागे पान के शरीर में घुस गया और उसका अन्त हो गया।

13. पान और पियाज रोटी — एक बार एक पान (तांती) ससुराल गया। उसे भोजन में ऐसा खाना मिला जैसा खाना उसने पहले नहीं खाया था। उसने अपनी सास से पूछा कि वह किस प्रकार से बनाया गया, सास ने कहा – "यह पियाज-रोटी है।" उसने मन में यह निश्चय किया कि वह घर लौटेगा तो पत्नी से "पियाज-रोटी" बनाने को कहेगा। बिस्तर पर पड़े-पड़े वह "पियाज-रोटी", "पियाज-रोटी" रटता रहा ताकि यह शब्द उसके दिमाग में बैठ जाय। परंतु जब दूसरे दिन सुबह उठा तो वह शब्द भूल गया। वह फिर अपनी सास के पास गया और पूछा – "माँ! तुमने जो कल स्वादिष्ट भोजन कराया था, वह क्या था और कैसे बना था मैं उसे भूल गया।" "पियाज रोटी" – सास ने कहा।

थोड़ी देर के बाद वह ससुराल से विदा हुआ और रास्ते भर "पियाज-रोटी" रटता हुआ अपने घर की ओर चल दिया। उसका दिमाग "पियाज-रोटी" से ऐसा भरा था कि वह रास्ता भूल गया और अचानक अपने को घुटने भर कीचड़ में डुबा पाया। इस बीच "पियाज-रोटी" उसके दिमाग से गायब हो गयी। पान सोचने लगा कि वह शब्द जरूर ही इस कीचड़ में खो गया है। इसलिये उसे वह कीचड़ में ढूँढ़ने लगा। कुछ समयत तक वह व्यर्थ में ही ऐसा करता रहा। उसके इस कार्य को एक राहगीर देख रहा था। उसने उसके पास आकर पूछा कि वह कीचड़ में क्या चीज खोज रहा है, पान ने कहा – "हाय! हसय! मैं एक कीमती चीज इस कीचड़ में खो चुका हूँ।" वह राहगीर यह नहीं समझ सका कि कीचड़ में खोयी हुई वस्तु मात्र एक नाम है। उसने सोचा कि कुछ रूपया या अन्य कोई कीमती चीज खो गयी है। उसने उसकी परेशानी से द्रवित होकर अपना कपड़ा उतार दिया और उसकी खोज में मदद करने के लिये कीचड़ में चला गया। जब वह तांती की बगल में खड़ा होकर खोजने लगा तो उसे "पियाज-रोटी" की गन्ध का अनुभव हुआ और उसने पूछा – "ऐसा लगता है कि तुमने बहुत अधिक "पियाज-रोटी" खा ली है।"

जैसे ही तांती ने "पियाज-रोटी" को नाम सुना, वह खुशी से कीचड़ के बाहर आ गया और चिल्ला उठा – "पियाज-रोटी, पियाज-रोटी! मुझे मिल गया मुझे मिल गया।"

उसका दयालु राहगीर दोस्त आश्चर्यचकित होकर उस तांती को इस प्रकार

के मजाक करने पर भला-बुरा कहने लगा। लेकिन पान ने उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया और "पियाज-रोटी" बड़बड़ाता हुआ घर की ओर तेजी से चल दिया।

14. गले में चिह्न वाली पंडुकी का जन्म – प्राचीनकाल में एक कुँवारी (अविवाहिता) लड़की रहती थी। उसके भाई उसे अपनी पत्नियों के साथ छोड़कर व्यापार का सामान बैलें पर लादकर दूसरे देश में जाया करते थे। इसी प्रकार जब वे बाहर गये थे तो उनकी अनुपस्थिति का फायदा उठाकर उसकी भाभियों ने उसे जंगल में लकड़ी लाने के साथ-साथ अनेक दुष्कर काम सौंप दिया।

उन में से एक ने उसे छेद वाला घड़ा देकर कुआँ से पानी लाने को कहा। वह घड़ा लेकर कुआँ पर गई। परंतु उस घड़ा से पानी निकालना असम्भव पाकर रोने लगी। उस कुएँ में रहने वाले एक मेढ़क ने उसकी कहानी सुनी ओर उसे द्रवित होकर उसे मदद करने का वचन दिया। जब दुबारा उसने घड़ा को कुआँ में डुबाया तो मेढ़क घड़े के छेद पर ऐसा बैठ गया कि छेद बन्द हो गया। वह पानी से भरा घड़ा लेकर घर चली गयी। उसकी भाभियाँ इस कार्य को देखकर चकित हो गयीं। कुछ समय बाद वह मेढ़क बाहर निकल गया और समूचा पानी बह गया। लेकिन लड़की ने अपना काम कर दिया था, इस कारण वे उसे कुछ न कह सकीं।

दूसरे दिन दुष्ट भाभियों ने उसे एक दूसरा काम सौंपा। उन लोगों ने भेलवा (सोसो) के रंग से अपने कपड़ों को काला कर दिया और उसे साफ कर लाने को कहा। वह लड़की एक घड़ा में कपड़ा धोने वाला छार (राख) के साथ कपड़ों को लेकर तालाब पर गयी और एक चट्टान पर कपड़ा फींचने लगी। इस तालाब के किनारे एक बगुला अपने शिकार की तलाश में था। उसका रोना सुनकर वह उससे दुःख का कारण पूछा। जब उसने उसकी दुःख भरी कथा सुनी तो द्रवित होकर बोला – "मेरी बच्ची, तुम मुझे देखती रहो और कपड़ा फींचती रहो। बहुत जल्द ये कपड़े मुझ जैसे सफेद हो जायेंगे।"

इस योजना ने जादू की तरह काम किया और साफ कपड़ों को लेकर वह लड़की घर चली गयी। दाग से रहित सफेद कपड़ों को देखकर उसकी भाभियाँ आश्चयचकित रह गयीं।

उसको दूसरा काम मिला जंगल से लकड़ी लाने का। परंतु लकड़ी के बाँधने के लिये रस्सी नहीं मिली। जंगल में उसने काफी लकड़ी इकट्ठा किया। परंतु लकड़ी को बाँधकर लाने का कोई साधन नहीं था। उस रास्ते से दो साँप जा रहे थे जिन्होंने उसकी

दुःखद स्थिति को देखा। उन दोनों सर्पों ने अपने शरीर से गट्ठर को बाँध दिया और वह लड़की जलावन लकड़ी को लेकर घर आ गयी। उसने धीरे से गट्ठर को जमीन पर रख दिया और दोनों साँप वहाँ से चले गये।

अन्त में उसकी दुष्ट भाभियों ने उसे सेमल के पेड़ पर चढ़कर यह देखने को कहा कि उसके भाई कितनी दूरी पर अभी हैं। उस चिकने वृक्ष पर नुकीले काँटों के सहारे वह चढ़ गयी। पेड़ की चोटी पर जाकर वह यह गीत गाने लगी –

"रङ रङ् के दामार कोम
कतो दूरे रे दादा बरदा बेपारी।"

इस गीत को बहुत बार दुहराने पर उसके सभी भाई आ गये। घर में अपनी पत्नियों से मिलने के बाद उन्होंने अपनी प्यारी बहन के बारे में पूछा। उन स्त्रियों ने सेमल पेड़ की चोटी को दिखा दिया। इस बीच वह लड़की दैवी शक्ति से पंडुकी में बदल गयी। एक भाई पेड़ पर चढ़ा और पंडुकी के गले में फूल की माला डाल दी। तबसे पंडुकी के बच्चों के गले में हार (माला) का चिह्न हो गया और वे गले में चिह्न वाले पंडुक कहलाने लगे।

14. दो बहनों की कथा – एक "हो" की दो लड़कियाँ थीं। वह उन्हें बहुत प्यार करता था और उन्हें लड़के की तरह पाला-पोसा। लड़कियाँ जब बहुत छोटी थीं तो उसकी माँ मर गयीं और वही उनके लिये माता-पिता दोनों था।

एक दिन जब वह जंगल में लड़की काटने गया तो तिरिल का पका फल खाया। कुछ पके फल उसके केशों में फँस गये। घर लौटने पर उन फलों का पता तब चला जब उसकी लड़कियाँ उसके सिर से जूँ (ढील) निकाल रही थीं।

"पिता जी! यह कौन सा फल है" - एक लड़की ने पूछा।

"यह तिरिल का फल है मेरी बच्ची।" पिता ने कहा। उन लड़कियों ने फल को चखा और उन्हें इतना अच्छा लगा कि और फल की माँग करने लगीं। उन दोनों ने पिता के साथ जंगल में जाकर भरपेट उस फल को खाने की इच्छा व्यक्त कीं।

दूसरे दिन सुबह वह दोनों लड़कियों को जंगल ले गया और फल से भरे तिरिल पेड़ उन्हें दिखा दिया। लड़कियाँ पेड़ से फलों को तोड़कर खाने लगीं और वह लकड़ी काटने लगा। लड़कियाँ एक पेड़ से दूसरे पेड़ के फलों को खाती हुई भटक गयी और घेन जंगल में चली गयीं। उनके पिता ने उन्हें काफी खोजा और जोर-जोर से

चिल्लाकर उन्हें पुकारा। पर कोई फायदा नहीं हुआ। उसने पहले सोचा कि लड़कियाँ जंगल में खो गयी हैं। पर काफी खोजने पर जब नहीं मिलीं तो उसके मन में विचार आया कि शायद वे उसे नहीं पाकर घर चलीं गयीं। परंतु घर लौटने पर जब वे नहीं मिलीं तो वह बहुत दुःखी हुआ।

लड़कियों ने भी अपने पिता को जंगल में बहुत खोजा। परंतु उनका सब प्रयास व्यर्थ गया। वे घूमते-घूमते थक गयीं और उन्हें जोरों की प्यास मालूम हुई। वे पानी को देखने के लिये एक पेड़ पर चढ़ गयीं ताकि उन्हें पानी का कोई कुण्ड (या झरना) दिखलायी पड़े। अन्त में एक दिशा से एक बगुला उड़कर आता हुआ दिखायी पड़ा। बड़ी बहन पेड़ के नीचे उतरी और उस दिशा की ओर चल दी जिधर से बगुला आया था। छोटी बहन पेड़ पर ही रह गयी।

काफी दूर जाने के बाद उसे एक सरोवर मिला जो एक राजा का था। उस समय राजा का पुत्र राजकुमार - उस झील के किनारे टहल रहा था। राजकुमार ने उसे देखा और उसके सौन्दर्य पर मोहित हो गया और उसे पत्नी के रूप में प्राप्त करने का निश्चय किया। जैसे ही वह प्यासी लड़की पानी पीने के लिये सरोवर की ओर बढ़ी, राजकुमार ने उसे पानी पीने से मना कर दिया। उसने कहा कि जब तक वह उसकी पत्नी बनने का वादा नहीं करती, तब तक वह उसे पानी पीने नहीं देगा। वह प्यास से मरी जा रही थी। अतः अपनी सहमति देने के अलावा कोई उपाय नहीं था। राजकुमार उसे अपने महल में ले आया और वह उसकी पत्नी बन गयी।

इधर उसकी छोटी बहन उसका इंतजार पेड़ पर करते-करते थक गयी। उस पेड़ पर बन्दरों के उछल-कूद से भी वह परेशान हो गयी। वह जैसे ही पेड़ के नीचे उतरी, जंगली जानवन उसे मार कर खा गये।

इस दुःखद घटना के कुछ दिनों के बाद एक चरवाहा अपने मवेशियों के साथ वहाँ आया। उसने उस लड़की की हड्डियों को चुनकर उन्हें सारंगी में लगा दिया। सारंगी में हड्डियों के लग जाने के बाद वह इतनी सुरीली हो गयी कि जो भी सुनता वह मन्त्र-मुग्ध हो जाता। उस चरवाहे ने गाय चराने का काम छोड़ दिया और घूम-घूम कर सारंगी बजाने लगा। उसे सारंगी सुनने वालों से काफी पैसा मिल जाता।

एक बार वह घूमते-घूमते गायक के रूप में राजमहल की ओर चला गया। जहाँ बड़ी बहन रानी के रूप में रहती थी। उस सारंगी के संगीत ने राजपरिवार के सभी सदस्यों को तुरंत मोहित कर लिया। सुनने वालों में बड़ी बहन (रानी) भी थी। इस संगीत

का उसपर बड़ा उदासी भरा प्रभाव पड़ा जब उस विचित्र सारंगी से इस गीत का बोल निकल पड़ा -

"हमलोगों के प्यारे पिता
देने गये जंगल में
हमलोगों को तिरिल फल।
हाय! हमलोगों ने खो दिया उन्हें
हमेशा-हमेशा के लिये।
बड़ी बहन गयी पानी लाने
वह कभी नहीं लौटी और
राजकुमारी बन गयी।
अब शेष हैं मेरी हड्डियाँ
सारंगी में इस अजनबी के।
हमेशा के लिये खो गये
अपने सगे लोगों के लिये
अब रोते रहना शेष हैं।"

इस संगीत ने राजकुमारी के हृदय को दुःखी कर दिया और वह इस संगीत को और अधिक सुन न सकी। वह राजमहल के एक कमरे में आ गयी और फूट-फूट कर रोने लगी। राजकुमार ने उसे दुःखी देखकर उसके दुःखी होने का कारण पूछा। उसे आश्चर्य हुआ कि जिस संगीत ने पूरे राजमहल को प्रफुल्लित किया, फिर राजकुमारी क्यों दुःखी हो गयी। राजकुमार द्वारा दुःखी होने का कारण पूछने पर राजकुमारी ने प्रथम बार अपनी जीवन-कथा सुना दी और उस विचित्र सारंगर को पाने की इच्छा व्यक्त की।

राजकुमार उसे प्रसन्न रखना चाहता था। अतः उसने आदेश दिया कि सारंगीवादी राजमहल में ही मेहमान के रूप में रहेगा। उसे खाने-पीने का सभी समान दे दिया गया। अपना भोजन तैयार करने के बाद वह नदी में स्नान करने चला गया। जब वह बाहर चला गया तो राजमहल के नौकरों ने उस सारंगी का छिपा दिया और उसी तरह की दिखने वरली दूसरी सारंगी उसके स्थान में रख दी।

सारंगीवादक ने भोजन किया और उसके उत्तम संगीत उसके स्थान में लिये उसे यथेष्ट पुरस्कार दिया गया। जब वह विदा होने लगा तो राजकुमार ने उसे आदेश

दिया कि वह सारंगी को अब उस शहर में नहीं बजायेगा। वह सारंगीवादक बहुत प्रसन्न होकर अपने घर लौट गया। परंतु घर वापस आने पर उसने पाया कि उसकी सारंगी का जादू भरा संगीत अब समाप्त हो गया है। उसने संगीतकार का कार्य छोड़ दिया और उपने पुराने चरवाहे का काम फिर से शुरू कर दिया।

कुछ समय बाद पुराना राजा के मरने के बाद राजकुमारी रानी बन चुकी थी और राजसिंहासन पर आरूढ़ हो चुकी थी। तब तक जंगल में जाकर वह अपनी छोटी बहन की खोपड़ी हड्डियाँ आदि एकत्रित की ली थी। अस्थि के उन अवशेषों को एक नये घड़े में पीसी हुई हल्दी चावल के आटा और सिन्दूर से सजाकर एक पूजा-स्थल (जाहेर) में रख दिया। उसने सिंगबोंगा (परमश्वर) से बड़ी तन्मयतापूर्वक प्रार्थना की कि उसकी बहन फिर से जीवित हो जाय। सिंगबोंगा ने उसकी प्रार्थना सुन ली। सिंगबोंगा से उसने अमृत का दान प्राप्त किया जिसे कलस पर छिड़क ली। उसकी प्रसन्नता की सीमा नहीं रही, जब उसकी बहन पुनर्जीवित हो उठी। इसके बाद दोनों बहनें बहुत दिनों तक सुखपूर्वक एक साथ रहीं।

16. एक नवयुवती की कथा – एक युवती की शादी तय हो चुकी थी। उसकी भाभी ने उसे जंगल जाकर पत्तियाँ तोड़कर लाने को कहा ताकि बारातियों के खाने के लिये पत्तल एवं दोना बनाया जा सके। उसने पत्तियों को रूँग की लता से बाँध कर लाने का निर्देश दिया। वह वन में जाकर पत्तियाँ ले आयी। परंतु पत्तियाँ कम होने के कारण उसकी भाभी बहुत नाराज हुई और उसे अधिक पत्तियाँ लाने हेतु फिर जंगल जाने को कहा। वह दुबारा जंगल में गयी तो काफी देर हो चुकी थी। वहाँ पत्तिया तोड़ते-तोड़ते उसकी मुलाकात एक विशाल बाघ से हो गयी। बाघ उससे बोला - "मेरी प्यारी पौत्री! तुम क्या खोज रही हो।" युवती ने कहा - "दादा! मुझे अपने भाइयों को गीत सुनाकर खुश करना है अपना पारिश्रमिक (पुरस्कार) प्राप्त करना है।" इस पर बाघ अपनी गुफा की ओर इशारा करके बोला - "तब ठीक है। मेरे घर में आओ और तब तक बैठो जब तक तुम्हारे भाई शिकार करके वापस नहीं आ जाते।" वह उस गुफा के द्वार पर बैठ गयीं

जब सभी बाघ शिकार से वापस आ गये तो बड़ बाघ ने का - "यहाँ तुम्हारी एक बहन आयी है। उसके स्वागत के लिये तुम लोगों ने क्या किया है।"

थोड़ी देर में कोई चावल ले आया, कोई पकाने का बर्तन, कोई हल्दी, नमक आदि कोई थाली लेकर आया। उन्होंने उससे मांस-भात बनाने का अनुरोध किया। जब

सभी ने खाना खा लिया तो बड़े बाघ ने युवती से कहा - "मेरी प्यारी पौत्री! अब तुम अपने भाइयों को गीत सुनाओ।"

तब उसने इस प्रकार गीत गाना शुरू किया -

"बाये तेदो इतुलाद मितुलाद,
काटा ते दो दरपिल-मरपिल।"

बड़े बाघ ने उसे बीच में ही रोक दिया और कहा - "मेरी प्यारी पौत्री! इस गीता को गाकर तुम अपने भाइयों को नाराज कर दोगी। इनके लिये एक अच्छा गीत सुनाओ।" तब वह दूसरा गीता गाने लगी -

"रूपा रूपा नोड़ा गोड़्को,
तिरि रियु तिरि रियु को आदो
लिस सलङ् लिट सलङ्।"

जैसे ही उसने यह गीत गाना शुरू किया सभी बाघ मिलकर नाचने लगे। बाघ बहुत प्रसन्न हुए और उसे कपड़ा, पायल और चुड़ी पहनने को दिया। इस प्रकार कई दिनों तक वह बाघों के साथ रहकर उनका मनोरंजन करती रही।

कई दिन बीत जाने के बाद युवती ने बड़े बाघ से कहा - "दादा! अब मैं अपने लोगों से मिलने घर जाना चाहती हूँ। मैं तुम्हारे पास फिर आ जाऊँगी।"

उसकी बात मान ली गयी। एक टोकरी चावल, एक घड़ा डियङ् और एक खस्सी उसे बिदाई में दिया गया। उसे घर तक छोड़ आने के लिये बड़े बाघ ने दो बाघों को प्रतिनियुक्त करते हुए कहा कि वे उसके साथ मार्ग में अच्छा व्यवहार करेंगे।

कुछ दूर जाने के बाद उन बाघों ने पूछा कि उसका घर अब और कितना दूर है। युवती ने कहा - "मेरा घर तन्तु-गोयाकन राज्य में है।" बाघों ने यह प्रश्न कई बार पूछा। परंतु उसने उन्हें यही जवाब दिया। जब वे उसके गाँव के निकट खेत में आ गये तब उसने कहा - "मेरे भाइयों! तुमलोग अब वापस चले जाओ। मेरे माता-पिता और सम्बन्धी आ रहे हैं। वे लोग तुमलोगों को मार सकते हैं।" उसके बाद दोनों बाघ जान बचाकर भाग खड़े हुए।

जब वह घर आयी तो उसकी भाभी इतने विलम्ब से आने के कारण बहुत बिगड़ी। उसने कहा कि वह बाघों को गीत सुनाकर पारिश्रमिक कमा रही थी। इसी करण देर हुई।

उसकी भाभी ने आश्चर्यचकित होकर पूछा - "क्या वे ही तुम्हें नया कपड़ा,

पायल, बाला आदि दिये हैं जिन्हें तुम पहन रखी हो।''

समूचा वृत्तान्त सुनने के बाद वह बोली - ''तुम मुझे भी बताओ कि कौन-सा गीत तुमने बाघों को सुनाया है ताकि मैं भी उस गीत को सुनाकर आमदनी कर सकूँ।'' तब उस युवती ने यह गीत सुनाया -

''बोयेतेदे इतुलाद मितुलाद,
काटा ते दो दरपिल मरपिल।''

वह दुरष्ट भाभी जंगल में गयी और बड़े बाघ से मिली। बाघ ने पूछा - ''मेरी पौत्री! तुम क्या खोज रही हो।'' उसने कहा - ''मैं अपने भाइयों को गीत सुनाकर उनका मनोरंजन करने आयी हूँ।''

उसकी ननद (युवती) की तरह ही उसे भी खाना बनाने को बाघ ने कहा और खाना खाने के बाद बड़े बाघ ने गीत सुनाकर मनोरंजन करने को कहा। तब उसने गाना शुरू कर दिया - ''बोए तेदो इतुलाद...।'' तभी बड़े बाघ ने बीच में ही रोक दिया और बोला - ''मेरी पौत्री, तुम्हारे भाई यह गीत सुनकर नाराज हो जायेंगे। तुम उन्हें दूसरा गीत सुनाओ।'' चूँकि वह दूसरा गीत नहीं जानती थी, उसने उसी गीत को दोहराना शुरू किया। नतीजा यह हुआ कि सभी बाघ गुस्से में आ गये। उन्होंने उसकी खोपड़ी को नोच दिया और उसपर एक कांसे का कटोरा रखकर उसे घर वापस भेज दिया। इस प्रकार उस युवती ने अपनी भाभी से बदला ले लिया।

17. राजकुमारी और मंत्री के लड़के की कथा -- प्राचीन काल में एक राजा रहता था। उसकी कई लड़कियाँ थीं। उनमें से एक बहुत खूबसूरत थी। सभी लड़के-लड़कियाँ एक ही विद्यालय में पढ़ती थीं। लड़कियों का एक कमरा कोठे पर थ और लड़कों को नीचे। कालक्रमानुसार राजा की लड़कियाँ मंत्री को मालूम हुआ तो उसने अपने पुत्र को राजकुमारियों से मिलने-जुलने से मना कर दिया। परंतु एक राजकुमारी उससे बहुत प्रेम करती थी। दोनों ने कहीं दूर देश भागकर चले जाने का निश्चय किया। एक रात एक घोड़े पर सवार होकर दोनों चल पड़े। घोड़ा सात मील चला गया। उनलोगों के पास खाने-पीने का सामान खरीदने के लिये पर्याप्त धन था। राजकुमारी के पास एक ऐसी अद्‌भुत तलवार थी कि उसके एक ही वार से पत्थर के भी दो टुकड़े किये जा सकते थे। उनके माता-पिता ने उन्हें खोजने का बहुत प्रयास किया। पर वे नहीं मिल सके।

चलते-चलते दोनों एक दूसरे राज्य में चले गये। प्यास लगने पर पानी की खोज में वे रास्ते में एक स्थान पर रूके। वे पानी की तलाश में एक राक्षस के घर में चले गये। इस घर में एक राक्षसी अपने सात पुत्रों के साथ रहती थी। उनमें से छः की शादी हो चुकी थी और सबसे छोटा दमगुड़गुड़िया कुआँरा था। जब दोनों उस राक्षसी के घर में घुसे, सातो भाई दमगुड़गुड़िया के लिये दुल्हन की तलाश में बाहर गये हुए थे।

मन्त्री-पुत्र ने उस राक्षसी से पीने के लिये पानी माँगा। वह राजकुमारी को देखकर इतना प्रसन्न हुई कि उसने मन-ही-मन राजकुमारी को अपने छोटे पुत्र दमगुड़गुड़िया की बहू बना लेना चाहा। वह जान गयी कि मंत्री का लड़का राजकुमारी को भगाकर (चुराकर) लाया है। वह दोनों को तब तक रोक रखना चहती थी जब तक उसके सातों लड़के वापस न आ जायँ। लेकिन वे बहुत देर तक न आये। राजकुमारी अपने प्रेमी के साथ वहाँ से चल दी। तब तक उस दुष्ट राक्षसी ने जादू किया हुआ सरसों के बीज कपड़ा में रखकर घोड़े की पूँछ में बाँध दिया। वे दोनों थोड़ी दूर ही गये होंगे कि उसके सभी लड़के वापस आ गये। माँ ने अपने लड़कों को काफी फटकारा और सुन्दर राजकुमारी के आने की घटना सुनाते हुए सरसों का बीज देखते हुए उसका पीछा करने का ओदश दिया। उन्होंने तेजी से उन लोगों का पीछा कर राजकुमारी को पकड़ लिया और मंत्री पुत्र को मार डालना चाहा।

राजकुमारी ने धैर्य से काम लिया। उसने उन राक्षसों को कहा कि यदि वे उसकी बात मानेंगे तो वह उनके साथ जायेगी। राजकुमारी के कहने पर दमगुड़गुड़िया को छोड़कर अन्य सभी एक पंक्ति में खड़े हो गये। उसने एक ही तलवार की वार से सभी के सिर काट डाले। दमगुड़गुड़िया बच गया। उन सबको मारकर वह मंत्री के लड़के के साथ चल पड़ी।

दमगुड़गुड़िया एक दिन भिखारी के वेष में उनके पास आया। राजकुमारी उसे पहचान न सकी। उसकी गरीबी से द्रवित होकर उसे घोड़ा को चराने का काम सौंप दिया। कुछ दिनों तक सब ठीक से चलता रहा। परंतु एक दिन मौका पाकर राजकुमारी की तलवार से दमगुड़गुड़िया ने मंत्री-पुत्र की हत्या कर दी। परंतु एक दिन दमगुड़गुड़िया जब लकड़ी चुन रहा था, राजकुमारी ने उसे तलवार से मार डाला।

राजकुमारी अपने मृत पति के पास गयी और जोर-जोर से रोने लगी। थोड़ी देर बाद ईश्वर (मरंगबोंगा) एक बूढ़ी औरत का वेष धारण कर प्रकट हुए। बूढ़ी ने उसके रोने का कारण पूछा। तब राजकुमारी ने आपबीती घटना सुना दी। इस पर वह

बूढ़ी औरत द्रवित हो उठी। उसने उसके मृत पति को पुनर्जीवित कर उसे सौंप दिया। राजकुमारी एवं पुनर्जीवित हुआ मंत्री का लड़का उस बूढ़ी औरत की प्रार्थना करने लगा। पर वह थोड़ी देर में ही गायब हो गयीं। अब राजकुमारी और मंत्री-पुत्र ने खुशी-खुशी शादी की और राजा-रानी की तरह उस देश में राज करने लगे।

18 मागे परब – "हो" भाषा में मागे का अर्थ होता है - मां अः गे अर्थात् मां का ही। अर्थात् मागे पर्व मां का ही पर्व है। अनार्यों के प्राचीन इतिहास से पता चलता है कि उनका परिवार मातृप्रधान होता था। वे देवी के उपासक हुआ करते थे। यही कारण है कि माघ पूर्णिमा को "हो" मां (ओते एंगा) की ही पूजा करते हैं। वृद्धों का कथन है कि पुराने समय से ही यह त्योहार माघ पूर्णिमा के दिन धरती माता (देवी) के पूजार्पण के लिये मानया जाता है। आदिवासियों का ("हो" का भी) मन्दिर "सरना" या चहदेर होता है जो साल वृक्षों का एक पवित्र कुन्ज होता है। यहाँ पूजा कराने वाले पुजारी को "दिउरी" कहा जाता है।

किंवंदन्ती के अनुसार प्राचीन काल में जब सृष्टि हुई तो दो ही मनुष्य इस पृथ्वी पर उत्पन्न हुए। उनमें एक नर था तथा दूसरी नारी थी। वे दोनों असभ्य थे एवं नंगे रहते थे। उन दोनों के बाल लम्बे-लम्बे और काले वर्ण के थे। उन दोनों का नाम न रहने के कारण वे अपने-अपने लिंग के नाम से एक दूसरे को बुलाते थे। (यही कारण है कि आज भी सरना में मागे पर्व के दिन "हो" लोग पुरानी परम्परा निभा कर आदिम पुरूषों को याद करते हैं।)

उन दोनों से सात पुत्रियाँ उत्पन्न हुईं जिन्हें "सात बहिना" कहते हैं। जब ये आदिम बूढ़े हो गये और उन्हें कोई लड़का नहीं हुआ, तो वे काफी दुःखी हो गये। क्योंकि अब सृष्टि का अन्त होना दिखायी पड़ा। उनके घर के पास ही साल वृक्षों का कुंज था। वे दोनों उसी जगह एक साल वृक्ष के नीचे पुत्र की कामना से अपने इष्टदेव की पूजा करने लगे। अब वे नित्य दिन उपवास रहकर उसी साल वृक्ष के नीचे पूजार्पण करते और संध्या समय कुछ कन्द-मूल खाकर सो जाते। इस प्रकार पाँच दिन बीता। तब छठे दिन जब वे पूजा करने उस साल वृक्ष के नीचे गये तो उन्होंने वहाँ एक वृद्ध महिला को बैठा पाया। उस वृद्ध महिला ने कहा - "मैं तुम दोनों के भक्ति-भाव से संतुष्ट हूँ। तुमने जिसे पाने के लिये इतनी पूजा की है, उसका फल उसी दिन मिलेगा, जिस दिन यह अर्द्ध-चन्द्रमा पूर्ण होगा। अब वे दोनों पुत्र की कामना लिये चन्द्रमा की ओर टकटकी लगाये चकवा पक्षी की तरह बेचैन रहने लगे। अन्ततः पूर्णिमा का दिन आया और साल

वृक्ष के नीचे एक अबोध बालक घुटनो के बल चलता-फिरता एवं खेलता मिला। वे दोनों खुश हुए और बच्चे को लेकर घर लौटे।"

इसी बच्चे ने जवान लड़का सोया हुआ था तो सपने में वही बुढ़िया आयी और उसने कहा - "मैं तुम्हारी धर्म माता हूँ। तुम हमारी पूजा-पाठ करो क्योंकि मैंने ही तुम्हें इस पृथ्वी पर सृष्टि के लिये भेजा है। अगर मेरा पूजा-पाठ नहीं करोगे तो तुम्हारी संतना रोगी होगी और सब पुत्र-पुत्रियाँ मर जायेंगी।"

यह सुनकर वह बहुत डर गया और दूसरे दिन अपनी बूढ़ी माँ और बाप से सारी बातें कह सुनायी। उन दोनों ने भी बाते बतायीं कि उसका कैसे जन्म हुआ था। उन्होंने यह भी कहा कि तुम हर पूर्णिमा को उस साल वृक्ष के नीचे पूजा करना जहाँ तुम्हारा जन्म हुआ था।

उसी समय से मागे पर्व माघ मास के पूर्णिमा को मनाया जाता है।

19. वीर चेंडेया – बहुत दिन हुए चेंडेया नामक एक चरवाहा रहता था। घने वन में उसकी एक झोपड़ी थी। वह वन में बकरियों को चराता और अपनी छोटी-सी झोपड़ी में बकरियों के साथ रहता था। वन के कंद-मूल-फल और बकरियों का दूध ही उसका भोजन था। वह सुबह-सुबह बकरियों को लेकर जंगल में निकल जाता और संध्या समय घर वापस लौटता।

एक दिन राजा का पागल हाथी घूमता हुआ चेंडेया की झोपड़ी के पास आ पहुँचा। चेंडेया में नहीं था। वह तो सुबह से ही वन में बकरियाँ चर रही थी। हाथी ने उसकी झोपड़ी को तहस-नहस कर डाला और झूमता हुआ लौट गया।

संध्या समय अब वह वापस आया तो अपनी झोपड़ी को नष्ट पाकर बहुत दुःखी हुआ। परंतु उसने उसे फिर बना लिया।

दूसरे दिन फिर सुबह वह अपनी बकरियों को लेकर वन में चला गया। राजा का पागल हाथी फिर आया और उसकी झोपड़ी तहस-नहस कर डाला। संध्या समय वापस आने पर वह दुःखी हुआ। तीसरे दिन वह जंगल नहीं गया राजा का पगला हाथी फिर आया और उसकी झोपड़ी तहस-नहस करने लगा।

चेंडेया ने गरज कर हाथी को रोका और डाँटकर बोला - "बदमाश! तुमको मैं दो दिनों से देख रहा हूँ। क्या तुम मेरी शक्ति को नहीं जानते, मैं तुम्हारी सूँड़ पकड़ कर इस तरह फेकूँगा कि तुम सात समुद्र पार दलदल में जा गिरोगे।"

हाथी यह सुनकर बहुत डर गया। डर के कारण उसका पागलपन भी छूट गया। महल में आने पर उसने खाना-पीना सब छोड़ दिया।

राजा उसको बहुत प्यार करता था। उसकी ऐसी हालत देखकर राजा ने इसके कारण का पता लगाया। अन्त में सही बात का पता लग जाने के बाद चेंडेया राजा के पास लाया गया। चेंडेया ने सारी बात कह सुनायी। परंतु राजा बहुत नाराज हुआ और क्रोध में आकर बोला - "यदि तुम इसे (हाथी को) सात समुद्र पार नहीं फेंकोगे तो तुम्हें कुत्तों से नुचवाऊँगा। यदि फेंक दोगे तो तुम्हें आधा राज्य और अपनी बेटी दे दूँगा।"

चेंडेया ने शर्त मान ली। दूसरे दिन एक बहुत बड़ी भीड़ जमा हो गयी। एक बड़े मैदान में हाथी को लाया गया। चेंडेया शान के साथ आगे बढ़ा। उसने हाथी की पूँछ पकड़ी और ऐसा फेंका की किसी को अता-पता भी नहीं चला कि हाथी कहाँ गिरा।

सभी लोग चेंडेया की वाहवाही करने लगे। परंतु राजा बहुत चिन्तित हो गया कि वह एक चरवाहा से अपनी बेटी की शादी कैसे करे। अतः उसने बहाना बनाया कि चेंडेया उस हाथी को फिर यहाँ ला दे तो उसे शर्त की सारी चीजें मिल जायेंगी।

चेंडेया भी हार मानने वाल नहीं था। वह हाथी की खोज में चल पड़ा। रास्ते में उसे एक बलवान् आदमी मिला। वह लोहे के हल से चट्टान को जोत रहा था। चेंडेया बहुत खुश हुआ और उसकी खूब प्रशंसा की। पर उसने कहा कि चेंडेया के आगे तो वह तिनका भर भी नहीं है। चेंडेया बहुत खुश हुआ और असली परिचय दिया। चेंडेया ने उसे अपने साथ कर लिया और दोनों सात समुद्र पार दलदल की खोज में चल पड़े।

रास्ते में उन्हें एक और आदमी मिला। वह सात बैलगाड़ियों में लकड़ी भर कर उन्हें अपने हाथों से खीच रहा था। चेंडेया उसे देखकर बहुत खुश हुआ उसकी बहुत प्रशंसा की। परंतु उस आदमी ने कहा कि वह तो कुछ भी नहीं है। सबसे बड़ा वीर तो चेंडेया है। चेंडेया ने कहा - "मैं ही वह व्यक्ति हूँ।" यह सुनकर वह बहुत खुश हुआ और वह भी उन दोनों के साथ चल पड़ा।

बहुत दिनों तक चलने के बाद तीनों सात समुद्र पार दलदल में जा पहुँचे। तीनों ने मिलकर हाथी को दलदल से निकाला। चेंडेया दोनों को अपनी जगह छोड़ कर हाथी के साथ राजदरबार में आ पहुँचा।

राजा ने चेंडेया के साथ हाथी को देखकर हार मान ली। उसने अपना आधा राज्य चेंडेया को दे दिया और अपनी पुत्री की शादी भी उसके साथ कर दी। चेंडेया जब राजा हुआ तो अपने दोनों साथियों को मंत्री और सेनापति बनाया। कुछ दिनों के बाद

राजा बूढ़ा हो गया। उसे कोई लड़का नहीं था। अतएव उसने अपना सारा राज्य चेंडेया को ही दे दिया और खुद साधु बन गया।

चेंडेया बहुत शक्तिशाली राजा हुआ। उसने बहुत-से देश जीते और शान्तिपूर्वक राज करने लगा।

20. रितुई–गोन्डाई की कथा – प्राचीनकाल में जगरनाथपुर (कोल्हान) में जगन्नाथ सिंह नामक एक राजा रहता था। उसके पास घोड़े-हाथियों का एक बड़ा समूह था। वह जब शिकार के लिये निकलता था तो हाथी के गले में सोने का घंटा पहना देता था। उसकी कचहरी उसी जगह पर थी जहाँ गंगाराम मानकी का मकान अवस्थित है। वह कचहरी में उसी हाथी पर चढ़कर आया करता था।

मिरगीलिन्डी गाँव में रितुई गोन्डाई सिंहकू नाम का एक हो रहता था। वह बहुत धनी था और अपनी ताकत के लिये प्रसिद्ध था। कहा जाता है कि वह अकेले ही दस आदमियों के साथ मुकाबला कर लेता था।

उसकी प्रसिद्धि राजा के कानों तक पहुँची। एक दिन की बात है कि एक घाँसी ने राजा के हाथी के गले का घंटा चुराकर रितुईगोन्डाई के हाथों बेच दिया। कुछ लोगों का कहना है कि घांसी ने वह घंटा बेचा नहीं था, वरन् चुपके-से रितुई के घर के पीछे लटका दिया जिससे कि उसपर चोरी का इल्जाम लगे।

जब राजा को घण्टा की चारी का पता चला तो उसने इलाके के सभी मानकी-मुण्डा को इत्तिला कर दिया और उस घण्टा का पता लगाने वाले को इनाम देने की घोषणा कर दी। घाँसी और सिपाही उस घण्टे की तलाश में चारों ओर निकल पड़े।

एक घर में एक मुर्गी अण्डा पर बैठी थी। जब मुर्गी बाहर निकलने के लिये उड़ी तो घण्टा से टकराने पर घण्टा की आवाज गूँज उठी। उस घर का मालिक था रितुई गोन्डाई। रितुई गोन्डाई को चोरी के इल्जाम में गिरफ्तार किया गया और राजा के पास लाया गया। राजा ने हुक्त दिया कि रितुगई को ढेंकी में कूट-कूट कर मारा जाय।

दस लोगों ने ढेंकी उठायी और बीस लोगों को रितुई को पकड़ कर रखा। रितुई के पीठ पर सात बार ढेंकी गिराकर उसे मार डालने का प्रयास किया गया। उसे ढेंकी से कूट-कूट कर मारा गया।

रितुई का शरीर जिस स्थान पर गाड़ दिया गया था, वहाँ एक तालाब अभी भी देखा जा सकता है। वह तालाब अभी भी रितुई गोन्डाई पोखरी के नाम से जाना

जाता है। वह तालाब जगन्नाथपुरा के दक्षिण में अभी भी मौजूद है।

21. तुङ् राजा की पंचायत – प्राचीन काल में सिंहभूम में सिंह वंश के राजा राज करते थे। उससे भी पूर्व यहाँ कोल राजा रहते थे। कोल वंश वाले बोंगाबुरू की आराधना करते थे, जिन्होंने उन्हें रचा था।

हजारों वर्ष पूर्व पोड़ाहाट पीड़ में पूनम नामक राजा राज करता था। उनके वंशज बाद में अलग-अलग क्षेत्रों में राज करने लगे। इनमें से कुछ चकहा (चक्रधपुर), कासे (खरसावां), सलि नदी के किनारे (सराईकेला) आदि जगहों पर चले गये और राज्य का बँटवारा कर शासन करने लगे। कुछ लोग छोटानागरा जाकर राज करने लगे।

मनोहरपुरा में चूड़ामणि नामक राजा रहता था। उसकी सात रानियाँ थीं। सबसे छोटी रानी छोटानागरा में रहती थी।

एक बार राजा शिकार में गया। राजा की अनुपस्थिति में रानी ने अपने मामा के साथि गलत सम्बन्ध स्थापित किया जिसे राजा जान गया। वह इसपर बहुत क्रोधित हुआ और उसे जान से मारने का निश्चय किया।

जब रानी को पता चला तो वह डरकर भाग गयी। उसके साथ उसकी दासी भी भाग गयी। गर्भवती रानी अपनी माँ के पास चली गयी। उसकी माँ गरीब थी और उसका घर जर्जर था। उसने वहीं गोहाल घर में एक बच्चे को जन्म दिया उसका नाम "रेको" रखा गया।

वह लड़का बड़ा होने पर बैलों को लेकर धान का बीज बोने लगा। बैलों, भैंसों आदि की सेवा वह गोहाल में रहकर करने लगा। इसपर "गोटो बोंगा" उसकी सहायता करने आ गये। सिंगबोंगा भी उस पर कृपा करने लगे। वह बाघों को भी इकट्ठा करके उनकी चरवाही करता। वह बाघों से खेत को भी जोतता। उसने बाघों को खेती के काम में लगाया। इसीलिये वह "सिंह" वंश का कहलाने लगा।

उसने चारो दिशाओं को अपने अधिकार में कर लिया। वह हर वर्ष जमीन को खेती योग्य बनवाता गया। सभी जगह बस्तियाँ बसायी। उसने आचार-विचार (फैसला) करने के लिये पंचायत का निर्माण किया।

उसने अपने राज्य का नाम छोटानागरा से छोटानागपुर रखा। पंचायत में विचार करने के लिये वर्ष एक बार पंच लोग जुटते थे। वह गाँव के बारे मे मुण्डा से और कई गाँवों के बारे में मानकी से राय लेता था और उनका प्रभार उन्हें सौंप दियां उसने विभिन्न विषयों से सम्बन्धित कार्यों के निष्पादन के लिये सन्डी, गोन्डाई, सरदार,

मानकी, मुण्डा, गाण्डिया, ससगड़ आदि बनाया। गाँवों में मकान बनाने के लिये लकड़ी का पट्टा देने की प्रथा चलायी। मर जाने पर गाँव के किनारे गाड़ने और पत्थर देने की प्रथा चलायी। बाद में उसने पूरे छोटानागपुर को चौरासी पीड़-बुन्डु, तमाड़, हंसदा आदि में विभक्त किया। इस प्रकार बण्डुआ से बुण्डु, पीड़ और बड़ा बुण्डु, पीड़ ओर बड़ा ताम्बारा से तमाड़ पीड़ बना।

22. एक डाकुआ की कथा — एक मुण्डा जब अपने पीड़ के मानकी के पास जाता तो उसका डाकुआ भी उसके साथ जाता। मुण्डा मानकी को "जोहार" करता तो डाकुआ समझता की मुण्डा से मानकी बड़ा है। उसने मुण्डा से इस सम्बन्ध में पूछा तो मुण्डा ने 'हाँ' कह दियां तब उसने मानकी का डाकुआ बनने की इच्छा व्यक्त की। उसकी इच्छा पूरी कर दी गयी।

एक दिन मानकी राजा के यहाँ गया और वह डाकूआ भी उसके साथ गय। मानकी ने राजा को जोहार किया। डाकुआ समझ गया कि राजा मानकी से जरूर बड़ा होगा। मानकी से पूछने पर उसके सन्देह की पुष्टि हो गयी। अब वह राजा का डाकुआ बनने को आतुर हो उठा। राजा ने उसे अपना डाकुआ बना लिया।

एक दिन राजा जंगल में शिकार खेलने गया और डाकुआ भी उसके साथ गया। राजा ने एक लोमड़ी को देखा और उसे जोहार किया। डाकुआ को संदेह हुआ कि लोमड़ी अवश्य ही राजा से बड़ी होगी। राजा से पूछे जाने पर उसने लोमड़ी को अपने से अधिक बड़ा बताया। डाकुआ ने अब लोमड़ी का डाकुआ बनना चाहा। उसकी इच्छा पूरी कर दी गयी और वह अब लोमड़ी का डाकुआ बन गया।

लोमड़ी अब डाकुआ को नापसन्द करने लगी क्योंकि वह बराबर उसके पीछे लगा रहता। डाकुआ से छुटकारा पाने को उसने एक योजना बनायी। उसने अपने डाकुआ को एक बैल दिया और बोली - "तुमने मेरी काफी सेवा की है। यह तुम्हारा पुरस्कार है। इसे तुम घर ले जाओ। अब हमारे पास तुम्हारी आवश्यकता नहीं है।"

जब वह अपने घर के रास्ते में था तो रात हो गयी। वह एक तेली के घर में ठहर गया और अपने बैल को कोल्हू के लट्ठे से बाँध दिया। सुबह होने पर तेली ने यह घोषणा कर दी कि उसके कोल्हू से एक बैल पैदा हुआ है। डाकुआ ने जब सुना तो वह कहता रहा कि बैल उसका है और वही उसे रात में कोल्हू में बाँध दिया। परंतु तेली इस तथ्य को काटता रहा। अन्त में यह बात राजा के पास न्याय करने के लिये लायी गयी।

राजा ने दोनों की बातें सुनी। परंतु वह स्वत्व सम्बन्धी फैसला करने में असमर्थ रहा। उसने डाकुआ से उस लोमड़ी को गवाही के लिये प्रस्तुत करने को कहा जिससे उसे बैल मिला था।

डाकुआ लोमड़ी के पास गया और सारी घटना कह सुनायी। लोमड़ी ने कहा – "बहुत अच्छा, तुम आगे जाओ और राजा से कह दो कि वह सभी कुत्तों को बँधवा दे। मैं ठीक समय पर राजा के सामने उपस्थित हो जाऊँगी।"

यह खबर पाकर राजा ने सभी कुत्तों को बँधवा दिया। तब लोमड़ी राजा के दरबार में आयी और ऊँघते हुए जुहार की। वह दरबार में ही सोने लगी।

राजा ने चिल्लाकर उससे पूछा कि वह मुकदमें के बारे में सच-सच बतावे। लोमड़ी ने एक क्षण के लिये अपनी आँखें खोलीं और सो गयी। राजा को यह बहुत बुरा लगा। उसने डाँटकर लोमड़ी से कहा – "तुम ठीक से शपथ लेते हुए अपनी बातें कहो।"

लोमड़ी जम्हाई लेते हुए बोली – "हुजूर! कल रात समुद्र में आग लग गयी थी। उसे बुझाने के लिये मुझे रात भर जागना पड़ा। इसी कारण हुजूर के सामने यह तन्द्रा की स्थिति मुझ पर सवार है।"

राजा ने कहा – "क्या बेहूदी बातें तुम कर रही हो। समुद्र में आग लगना असम्भव है।"

"ठीक है श्रीमान्!" लोमड़ी ने कहा – "ठीक इसी प्रकार सुखी लकड़ी के लट्ठे से जीवित बैल का पैदा होना (कोल्हू से) असम्भव हैं।"

इस पर राजा मान गया और डाकुआ को उसका बैल वापस मिल गया।

23. एक लोमड़ी और एक भालू – बहुत समय पहले की बात है। एक लोमड़ी एक रात अपने छोटे बच्चों को एक बिल में छोड़कर शिकार करने गयी। जब वह बाहर गयी, इसी बीच एक भालू आया और सफेद चीटियों की खोज में उस बिल को खोदने लगा इसी क्रम में उसने अपने तेज नाखूनों से प्राणघातक रूप से उन्हें रौंद दिया।

जब वह लोमड़ी लौटकर आयी और अपने शिशुओं को मरा पायी, उसने स्वयं से कहा – "भाई! तुमने मेरी अनुपस्थिति का लाभ उठाया और मेरे मासूम बच्चों की हत्या कर दी। इसका मैं बदला तुमसे लूँगी।"

एक दिन वह एक नदी के किनारे रूँग पत्तों की एक थैला सीने में बहुत व्यस्त थी और उसी समय वह भालू उस रास्ते से गुजरा। भालू के कहा – "अच्छा दीदी! तुम यह झोला किसलिये बना रही हो।"

लोमड़ी ने जवाब दिया - "हे मेरे प्रिय भाई! क्या तुमने यह नहीं सुना है कि एक बड़ा प्रलय अवश्यम्भावी है। एक बहुत भयंकर तूफान आयेगा, मूसलाधार वर्षा होगी, वृक्ष उखड़ जायेंगे ओर पहाड़ी ढलानों से पत्थर की चट्टानें बहती हुई समुद्र में जाकर गिरेंगी। मैं जीवन रक्षा के लिये यह थैला बना रही हूँ। जब तूफान आयेगा तो मैं अपने को सुरक्षित कर लूँगी।"

यह सुनकर भालू बोला – "मेरी प्यारी दीदी, मेरे लिये भी एक थैला बना दो ताकि मैं उस विराट् प्रलय से अपने को बचा सकूँगा।" अवश्य मेरे प्रिय भाई" लोमड़ी ने कहा –"सबसे पहले मैं तुम्हारे लिये बनाऊँगी। मैं एक छोटा जीव हूँ और अपने लिये बनाने में मुझे ज्यादा समय नहीं लगेगा।"

तब लोमड़ी ने एक थैला बनाया। जब यह तैयार हो गया तो भालू उसके भीतर धुस गया ओर लोमड़ी ने उसके मुँह को सील कर बन्द कर दिया और मजबूत पट्टियों से उसे सुरक्षित कर उसमें एक बड़ा चट्टान का टुकड़ा बाँध दिया। उसने उसे नदी में फेंक दिया। इस प्रकार वह भालू जल समाधि को प्राप्त हुआ और इस प्रकार लोमड़ी ने अपने छोटे बच्चों के मौत का बदला ले लिया।

24. सियार और घड़ियाल – प्राचीनकाल में एक सियार रहता था जो बड़ के फलों को खाने के लिये नदी पार करता था। वह पेड़ नदी के दूसरी ओर किनारे से कुछ दूरी पर था। जब वर्षा ऋतु आ गयी और बाढ़ ने नदी पार करने योग्य नहीं रने दिया तो सियार उस पार जाने और वापस ओ का साधन साचने लगा। वह बहुत उदास और दुःखी मन से नदी के किनारे पर ऊपर-नीचे आता-जाता रहा। एक घड़ियाल जो नदी में िा उसको देखा और पूछा कि उसे क्या तकलीफ है। घड़ियाल ने पुनः पुछा – "भाई साहब! यदि मुझसे कोई सेवा आपकी हो सकती है, तो मैं हाजिर हूँ।"

सियार के दिमाग में ज्ञान का उदय हुआ (पते की बात सूझी) और उसने उस घड़ियाल से कहा –"मुझे अपने गाँव वालों से श्मशान का पत्थर (ससन गिरि) नदी से उस पार से लाने का आदेश मिला है। लेकिन नदी की वर्तमान स्थिति देखकर मैं किंकर्तव्यविमूढ़ हूँ। यह बहुत ही लाभकारी (फायदेमंद) काम है। इसमें कहना नहीं होगा

कि यदि इस कार्य में तुम मदद करोगे तो इस इनाम का एक भाग तुम्हें भी मिलेगा।"

इस चारे के प्रभाव में घड़ियाल की बुभुक्षा बढ़ा दी और वह सियार को अपनी पीठ पर नदी के पार ले जाने हेतु अपनी सहमति दे दिया।

सियार आराम से भरपेट बड़ के फलों को खाया और घड़ियाल के पीठ पर चढ़कर वापस जाने के लिये नदी के किनारे आ गया।

उसने घड़ियाल को एक लम्बी कहानी कहकर ठग दिया कि चट्टान के वचन से किस प्रकार गाड़ी का धूरा टूट गया ओर उसे मरम्मत करने के व्यर्थ प्रयास में उसे घंटों लगे। इस स्पष्टीकरण को भोला-भाला घड़ियाल सत्य समझकर मान गया। दूसरे दिन उसने घड़ियाल से नदी पार करते समय यह सूचित करना आवश्यक समझा कि उसे गाड़ी को ठीक-ठाक करने में देर हो सकती है। अतः यदि उसे नदी किनारे लौटने में देर होगी तो भी वह उसको छोड़ेगा नहीं (इंतजार करेगा)।

सियार अपने सामान्य भोजन का आनन्द लिया और वट वृक्ष की छाया में विश्राम किया। वह नदी किनारे तब आया जब मवेशियों का झुण्ड खेतों से घर की लौट रहा था (संध्या समय)।

एक पत्थर लेते हुए ताकि घड़ियाल को अविश्वास न हो जाय उसने बताना शुरू किया कि कैसे उसने कड़े परिश्रम से गाड़ी के धूरे की मरम्मर की और किस प्रकार गाड़ी पर पत्थर को रखा और थोड़ी दूर चलने के बाद पत्थर के आधिक बोझ से गाड़ी का पटरा (मंच) टूटकर पूरी गाड़ी ध्वस्त हो गयी। विभिन्न परिवर्तनों के साथ गाड़ी की कहानी से सियार का स्वार्थ कुछ समयतक सिद्ध हुआ। अन्ततः उसे लगा कि अब समय आ गया है जब उसे अपने विश्वसनीयता का सबूत देना चाहिये। तदनुसार उसने सफेद चमकीला पत्थरों को एक पत्तल पर इकट्ठा किया और नदी से कुछ दूर पर जमा करके आग लगा दिया और उन्हें आग में रख दिया। घड़ियाल के सम्बोधित करते हुए उसने कहा - "हमलोगों को शुद्ध हृदय से दोस्ती के विनम्र परिचय के रूप में मैं कुछ चर्बी लेकर आया हूँ। उसे मैं गर्म और ताजा परोसना चाहता हूँ।"

जब पत्थर पूरी तरह गर्म हो गया तब वह घड़ियाल उस स्थान पर आमन्त्रित किया गया और अपना भोजन प्राप्त करने के लिये उसने अपना मुँह खोला। जलते हुए पत्थर उसके खोखला मुँह में डाले गये, घड़ियाल दर्द से कराह उठा और नदी की ओर पागल की तरह भागते हुए खतरनाक (धोखेबाज) सियार से बदला लेने का प्रण लिया। वह अवसर तुरंत आ गया। एक दिन सियार पानी पीने नदी के निकट गया जहाँ "नचल

दारू" का पेड़ था। घड़ियाल ने उसे देखा और उसके लिये सीधा गोता लगाया। सियार अपने स्थान से हट गया था और घड़ियाल ने पाया कि उसके दातों के बीच में पेड़ का एक जड़ पकड़ा गया है। इस तरह असफल होकर घड़ियाल उससे बदला लेने का उपाय ढुँढ़ने लगा। अन्त में उसने एक छलपूर्वक उपाय खोज निकाला। अपने दुश्मन की गतिविधि से परिचित एक दिन वह गोंदली के पुआल के ढेर के नीचे छिप गया जिसे खलिहान में कृषकों द्वारा रखा गया था। सियार उस दिन क्रीड़ा करने की मानसिक स्थिति (मूड) में था और उसने लकड़ी की घंटी उधार लेकर गले में पहन रखी थी। अपने भ्रमण के दौरान वह गोंदली के उस टीले पर चढ़ गया जिसके नीचे घड़ियाल छिपा था। घंटी की आवाज सुनकर उसने उसे बकरा समझा और इस प्रकार - "ऐ बकरा, आज तू वह नहीं जिसे मैं खोज रहा हूँ। मैं दुष्ट सियार को पकड़ना चाहता हूँ।" चालाक सियार स्थिति को समझ गया और बिना एक क्षण गँवाये पुआर में आग लगा दिया। घड़ियाल पागल की तरह जलता हुआ पुआल पीठ पर लिये नदी की ओर भागा। नदी ने उसकी जान बचा ली। परंतु उसका पीठ स्थायी रूप से झुलस गया। इसके बाद उसके वंशजों का पीठ रूखड़ा और कंटीला होने लगा जो उपर्युक्त घटना का परिचायक है।

25. एक घड़ियाल दामाद – किसी समय एक "हो" की पत्नी गर्भवती थी। एक अच्छे पति की तरह उसने उसकी आवश्यकताओं की ओर काफी ध्यान दिया और जब उसकी नाजुक हालत हो गयी तो उसे पौष्टिक आहार देने लगा। उसके पड़ोस में एक घड़ियाल था जो बगल के तालाब में रहता था। उसने तालाब के ऊँचे मेड़ से कद्दू, कोंहड़ा, साग आदि लगाया। यह घड़ियाल उस "हो" के लिये सब्जी के पहरेदार का कार्य करता था। एक दिन दोस्ती में "हो" ने घड़ियाल से अपनी पत्नी की वर्तमान स्थिति के बारे में बोला। दोनों में यह तय हुआ कि यदि लड़का होगा तो वह घड़ियाल अनन्श मित्र होगा और यदि लड़की होगा तो घड़ियाल से शादी करनी होगी। उस समय उस "हो" दम्पमि को एक लड़की हुई। वह बालिका अपने माता-पिता के घर में बढ़कर अब युवती हो गयी। एक दिन वह अपनी माँ के साथ तालाब पर गयी। उसने पानी पर एक खिले हुए कमल फूल को देखा और उसे पाने के लिये इच्छा व्यक्त की। उसकी माँ ने उसे पानी में उतर कर उस फूल को तोड़ लेने को कहा। वह जैसे ही पानी में पैर डाली कि उसका पैर घड़ियाल के पीठ पर पड़ गया जो उसे पानी के लिये मौके की तलाश में था। वह लड़की को पीठ पर लिये हुए धीरे-धीरे गहरे पानी में तैरने लगा। जब वह अपने घुटने भर पानी में पायी तो वह गीत

गायी –

"माँ मेरे पैर घुटने तक पानी में है
और वे भींग रहे हैं।"

उसकी माँ ने भी गाया –

" मैं क्या करूँ प्यारी बच्ची
तुम्हारे बाप ने घड़ियाल के साथ वादा किया है
अब घड़ियाल तुम्हें पत्नी के रूप में चाह रहा है।"

वह लड़की धीरे-धीरे पानी में घुटना, छाती और गर्दन तक डूबती गयी और वह इस सम्बन्ध में गीत गाती गयी। पर उसकी माँ पहले की भाँति अपने गीत दुहराती गयी। अन्त में वह गहरे पानी में ले जाई गयी जहाँ घड़िया का आवास था। अपने घर में उसे आराम से रखकर घड़ियाल पानी के ऊपर आया और अपनी सास से बोला कि वह पुराने समय से चली आ रही रीति को मानेगा और मधुयामिनी बिताकर वह अपनी पत्नी के साथ अपेन सास-ससुर के घर जायेगा। अपने जल में बने, घर में वापस आकर उसने कहा कि उसके ससुराल जाने के लिये वह "डियङ्" तैयार करे। मधुयामिनी बिताने के बाद नव-दम्पति दुल्हन के धन जाने के लिये चल पड़े। रीति के अनुसार लड़की अपने माथे पर "डियङ्" का घड़ा लेकर चल पड़ीं। घड़ियाल कभी जमीन पर चलने का अभ्यस्त नहीं था। वह पत्नी के अनजाने में पीछे रह गया।

जब लड़की घर पहुँची तो माँ ने पूछा – "हमलोगों का प्यारा दामाद कहाँ है?" "तुम्हारा दामाद सुस्त (धीरे) चलने वाला है।" लड़की ने कहा –"वह बहुत देर बाद आयेगा।"

माँ ने तब अपने लड़के को कहा –"मेरे बेटे, तुम जाओ और अपने अच्छे बहनोई को स्वागतपूर्वक ले आओ।" वह युवक बताये गये रास्ते की ओर चल पड़ा। वह बहुत दूर चला गया परंतु किसी को नहीं पाया। उसने विपरीत दिशा से एक कुरूप रेंगने वाले जीव (जन्तु) को धीरे-धीरे सरकते हुए आते देखा वह भय से काँपते हुए भाग खड़ा हुआ और अपने लोगों को अपना अनुभव सुनाने लगा उसकी बहन ने कहा कि उसने उसे ठीक देखा है। पर वह अपने बहनोई को पहचान नहीं सका। उसके लड़को को जब पता चला कि उसकी बहन का पति घड़ियाल है, तो वह अपनी हँसी रोक नहीं सका। जब घड़ियाल ससुराल पहुँचा तो काफी गर्मजोशी से उसका स्वागत हुआ। उसे सुअरों की नाद में

पीने के लिये बहुत प्रयास किया। लेकिन वह नशाखोर घड़ियाल उसके हाथों को इतना जोर से नोचा और काट दिया कि उससे खून का फौव्वारा फूट निकला। इससे वहाँ के लोगों में क्रोध पैदा हो गया जो वहाँ जुटे थे और "डियङ्" पीकर काफी नशे में थे। वे भारी लाठी तथा अन्य हथियारों से लैश होकर आये और उसी स्थान पर मारकर काम तमाम कर दिया।

26. बुइदु बूढ़ा और चूहा की कथा – पशुओं में स्वामि भक्ति अधिक होती है। यदि मनुष्य किसी पशु को पालतू बनाता है और उसकी रक्षा करता है तो वह (पशु) भी मनुष्य की समय आने पर जान बचाता है। चाहे वह पशु बड़ा हो या छोटा, वह समान रूप से उपयोगी सिद्ध होता है। इस कथा में चूहा एक छोटा जीव होते हुए भी सही समय पर सही सूचना देने का काम करता है। साथ ही, पशु कितना भी चालाक हो जाय, मनुष्य की बराबरी नहीं कर सकता। लोमड़ी पशुओं में सबसे चालाक और धूर्त्त जानवर माना जाता है। परन्तु वह भी मनुष्य को चालाकी से बेवकूफ बनकर रह जाता है।

पुराने जमाने में बुइद नामक एक किसान खेत में हल चला रहा था तो उसे वहाँ एक चूहा मिला। उसने चूहा को मार देना चाहा। परन्तु चूहा ने कहा कि इसे नहीं मारने पर वह उसे (बुइदू को) गुप्त बातें बताता रहेगा। बुइदू उसे गमछे के एक छोर में बाँधकर घर ले आया। जब उसने उसे एक मुट्ठी धाना खाने को दिया तो वह बोला - "आज तुम्हारे घर में लोमड़ियाँ मुर्गियाँ को खाने के लिए आयेंगी। तुम अपना हँसुआ लेकर छिप जाओ और जब वे आवें तो हँसुआ से हमला कर दो।"

चूहे की बात सत्य निकली। जैसे ही लोमड़ियाँ घर में घुसीं, बुइदू ने हँसुआ चला दिया और एक लोमड़ी की पूँछ कट गई। सभी लोमड़ी भाग गये।

दूसरे दिन पूनः लोमड़ियों ने बुइदू का बकरा चुराने का प्रयास किया। इसकी सूचनाा भी चूहे ने दे दी। दूसरे दिन भी बुइदू ने छिप कर उन्हें मार भगाया।

एक दिन इनलोगों ने बुइदू को बाड़ी में कोंहड़ा चुराने की योजना बनाई। चूहा ने इसकी सूचना दी। बुइदू कई कोंहड़ा पका कर खा गया और एक कोंहड़ा माथे पर रखकर ऊपर झाड़ी में छिप गया। जब लोमड़ियाँ नीचे की ओर आयी तो बुइदू ने ऊपर से पाखाना कर दिया। लोमड़ियाँ पहले उसे अधिक पका हुआ कोंहड़ा समझ कर खाने लगी। परन्तु बाद में पता चला कि वह पाखाना है, तो छोड़कर भाग चली।

अन्ततः लोमड़ियों ने यह तय किया कि वे बुइदू को 'काला जादू' से मार डालेंगे।

यह बात भी चूहे ने बूढ़े और बुढ़ी से कह दी। बुढ़ी ने बूढ़ा के मर जाने का स्वांग किया और लोमड़ियों को भोज में आमंत्रित किया। जब वे खाने के समय झगड़ने लगे तो उन्हें एक दूसरे से अलग रहने के लिए अलग-अलग रस्सी से बाँध दिया। अन्ततः छिपा हुआ बुड्‌ढू बुढ़ा निकला और सभी (सियारों) लोमड़ियों को मार डाला।

इन कथा से यह परिलक्षित होता है कि छोटा जीव भी कभी-कभी बहुत अधिक उपयोगी सिद्ध होता है और इस कारण उसे हेय समझकर नहीं छोड़ना चाहिए।

'मुण्डा' जाति में भी इससे मिलती-जुलती कथा प्रचलित है। उसका मानव पात्र 'पुयतू' बूढ़ा है। केवल घटनाक्रम में कुछ परिवर्तन हो गया। सियरों की चालाकी, उनकी गुढ़ता एवं उनका अन्त प्रायः एक-सा है। इस कथा में 'चूहा' को नहीं रखा गया है।

27. दो सियार, एक बाघ और एक बन्दर की कथा — पशुलोक में सियार एक चतुर, धूर्त एवं आलसी पशु के रूप में माना जाता है। बाघ वीरता एवं मोटी बुद्धि का प्रतीक है। बन्दर चालबाज एवम् नकलची पशु माना जाता है। प्रस्तुत कहानी में इन पशुओं की चारित्रिक विशेषताएँ उभर कर सामने आया है।

एक वन में एक सियार युगल रहते थे। जब मादा सियार को बच्चा को जन्म देने का समय आया तो उसने अपने पति से एक अच्छा एवं बड़ा माँद बनाने का अनुरोध किया। इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए उसने अपनी पत्नी से भरपूर भोजन की माँग की ताक वह शरीर से मजबूत होकर वह कठिन कार्य सम्पन्न कर सके। वह बेचारी उसे अच्छा-अच्छा भोजन देती रही और वह माँद बनाने का आश्वासन देता रहा। जब समय निकट आ गया तो वह उस माँद में ले चलने को कहने लगी। सियार उसे लेकर एक बहुत बड़े माँद में चला गया जो बाघ का था। परन्तु उसने उसे अपना नव-निर्मित माँद बताया उसकी पत्नी डर गई कि कहों कोई बाघ आकर उन्हें निकाल न दे। परन्तु वह समझा-बुझा कर वहीं रहा। उसके बच्चे हुए। इसी बीच वह बाघ आता दिखाई पड़ा, जिसकी गुफा थी। मादा सियार ने पति से उसकी रक्षा का उपाय करने को कहा। पर वह असमर्थ रहा। अन्त में उसे एक उपाय सुझ गया। उसने अपने बच्चों को लाना शुरू किया। अब बाघ दरवाजा पर आ गया तो मादा सियार ने बच्चों को डाँटकर कहा – "तुम लालची बच्चे, अभी तुम लोगों को सात बाघ का जिगर खिलायी हूँ। फिर भी तुम्हारा पेट नहीं भरा। एक बाघ आया है। जोर से मत चिल्लाओं नहीं तो वह भाग जायगा।" बाघ यह सुनकर भयभीत हो गया और भाग चला।

बाघ को रास्ते में एक बन्दर मिला जिससे बाघ ने पूरी घटना सुनाई। बन्दर ने बाघ को अपने साथ गुफा में निर्भर होकर चलने को कहा। उसने अपनी पूँछ में बाँध ली। जब दोनों उस गुफा के सामने पहुँचे तो मादा सियार ने बन्दर को डाँटते हुए कहा – "तुम काहिल बन्दर! मैंने तुम्हें सात बाघ लाने के लिए कहा था और तुम केवल एक लाये?मैं तुम्हें नौकरी से निकाल दूँगी।"

इतना सुनना था कि बन्दर को घसीटता हुआ बाघ भाग चला। कुछ दूर जाने पर खरोंच और चोट लगने के बाद बन्दर की पूँछ मुक्त हो गई।

अब बन्दर और बाघ दुश्मन हो गये और एक दूसरे से बदला लेने का अवसर ढूँढ़ने लगे। बन्दर एक बार 'सोसो' (भेलवा) का बीज फोड़ते हुए बाघ से मिल गया। बन्दर ने बताया कि वह अपने खरोंच से हुए जख्म की दवा तैयार कर रहा है। बाघ ने भी उस दवा की याचना की। बन्दर ने उसे यथेष्ट मात्रा में दे दिया। अब बाघ उस 'सोसो' तेल को जख्म पर रगड़ने लगा तो उसकी जलन से चिघ्याड़ उठा। तब तक बन्दर गायब हो चुका था। बाघ उसे पकड़ कर मारने का अवसर ढूँढ़ने लगा। परन्तु अन्य मधुमक्खी के छत्ता को 'मांदल' समझकर बजाने पर मधुमक्खियों के दंश से उत्पीड़ित हुआ तो एक अन्य अवसरस पर उसने बाघ को पेड़ की डाल पर बैठाकर सूखी पत्तियों में आग लगाकर उसे जला कर मार डाला कर वह मौलिक गुणों को (मनुष्य का) नहीं प्राप्त कर सकता।

इस कथा के पात्र जंगली कुत्ते हैं। एक बार जंगली कुत्तों ने मनुष्य को सड़क के किनारे (फुटपाथ) पर चलते देखा। आदमी के पैर से बने फुटपाथ को देखकर कुत्तों ने अपनी चूतड़ से रगड़-रगड़ कर सड़क के किनारे 'फुटपाथ' बनाने का उपक्रम किया। उनके चूतड़ रगड़ खाकर घिस गये। पर फुटपाथ' नहीं बन सका और वे हार मान गये।

कुछ दिनों बाद जंगली कुत्तों ने कुछ लोगों को 'ससन दिरि' (श्मसान का पत्थर) बेलगाड़ी पर लाद कर लाते देखा। उनलोगों (कुत्तों) ने भी ऐसा ही करना चाहा। परन्तु पत्थर उठाते समय ही पत्थर के गिर जाने से कई जंगली कुत्ते दब कर मर गये। अन्ततः उन्होंने यहीं निष्कर्ष निकाला कि वे मनुष्य की बराबरी नहीं कर सकते और उसी समय से उन्होंने मनुष्य को नहीं खाने का संकल्प लिया।

28. फूल की परी – प्राचीन काल में दो भाई रहते थे। उनके पास रहने के लिये केवल घर था। परन्तु खेती के लिये जमीन नहीं थी। वे फल-फूल खाकर ही रहते थे जिसके लिये वे प्रतिदिन जंगल जाया करते थे।

एक दिन बड़ा भाई पानी की खोज करते-करते एक तालाब के निकट पहुँचा। उसके किनारे एक गुरन्डी (गुलइची) फूल का एक पेड़ था। उसके ऊपर एक बहुत ही सुन्दर फूल खिला हुआ था। वह उसे देखकर बहुत खुश हुआ और उसे तोड़ कर घर लाया। उसने उसे सुरक्षित रख दिया।

दूसरे दिन पूर्व की तरह दोनों भाई फल-मूल की खोज में जंगल में चले गये। जब वे वापस आये तो उन्हें दाल, भात और सब्जी किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा तैयार कर रखा मिला। वे खाना खाये और सोने चले गये।

दूसरे दिन वे पुनः जंगल में कन्द-मूल इकट्ठा करने चले गये। जब वे वापस आये तो पूर्व की भाँति अपना खाना तैयार पाया। उनकी उत्सुकता बढ़ गई और उनलोगों ने उस अज्ञात रसोइया का पता लगाने का निश्चय किया। बड़ा भाई घर में ही छिप गया और दूसरा (छोटा) कन्द-मूल लाने जंगल चला गया। बड़ा भाई दिन-भर निगरानी करता रहा। परन्तु नमक और तम्बाकू बेचने वाले की आवाज सुनकर थोड़ी देर के लिये बाहर गया। जब वापस आया तो खाना तैयार पाया इस प्रकार रहस्य-रहस्य ही बना रहा।

दूसरे दिन छोटा भाई निगरानी करने लगा और बड़ा भाई जंगल चला गया। छोटा भाई अपने को जलावन की लकड़ी के ढ़ेर में छिपा लिया था। कुछ देर बाद उसने अप्रतीम सौन्दर्य से युक्त एक परी को गुरन्डी फूल से निकल कर आते देखा। जब वह जलावन की लकड़ी लेने आई तो छोटे भाई न उसका हाथ पकड़ लिया और बड़े भाई के साथ उसकी शादी कराने का वादा किया। उसके बाद शादी हो जाने पर वह फूल की परी उसकी भाभी के रूप में उस घर में रहने लगी। वह खाना बनाने तथा घर का अन्य सभी काम करने लगी। कुछ दिनों बाद वह गर्भवती हुई और एक पुत्र को जन्म दिया जो बहुत सुन्दर था।

एक दिन जब वह पानी लाने गई थी, उसका पति बच्चे को घुटनों पर नचा रहा था और यह गीत गा रहा था -

"गुरन्डी के सुन्दर फूल से पैदा हुए,
ऐ मेरे प्रिय शिशु,
शरीर अभी भी सुगन्ध भरा है,
उस मधुर पुष्प की कली-सा।"

उसकी पत्नी (परी) ने गीत को सुना और कहा - "अभी तक मैं अपने लोगों से (परी लोक से) अलग रहते-रहते उब गई हूँ। अब आज हमारे समाज वाले मुझे वापस ले

जाना चाहते है। अब और अधिक मैं तुम्हारे साथ नहीं रह सकती।"

ऐसा कहकर वह तुरन्त गुरन्डी फूल में समा गई और आँखों से ओझल हो गई। जिस वृक्ष से वह फूल तोड़ लाया था, उस पर अनेक फूल खिल गये। उसका पति अपने छोटे भाई और बच्चे के साथ उस पेड़ के निकट गया और जोर-जोर से परी को पुकारा। पर सब व्यर्थ हुआ। वह परी को फिर से नहीं पा सके।

29. एक लोमड़ी की चालाकी – बहुत पुराने जमाने की बात है-एक बाघ जंगल में घुमता हुआ एक गिरे हुए पेड़ के नीचे दब गया। वह बहुत प्रयत्न करने पर भी अपने को बाहर नहीं निकाल सका।

एक राहगीर उस रास्ते से जा रहा था। बाघ ने उसे सम्बोधित कर कहा – "ये मेरे दोस्त! आप मेरी मदद करें और मुझे इस कष्ट से छुटकारा दिला दें। यह न सोंचे कि मैं आपको नुकसान पहुँचाऊँगा।"

उस आदमी ने कहा –"तुम्हारी बात पर विश्वास करना कठिन है। तुम स्वभाव से मनुष्य के शत्रु हो। मैं तुमपर कैसे विश्वास करूँ?"

बाघ ने कसम खाकर उसे किसी प्रकार नुकसान न पहुँचाने का वादा किया। बाघ ने कोमल वचनों से द्रवित होकर उस आदमी ने धक्का देकर उस पेड़ को हटा दिया और बाघ को मुक्त कर दिया।

बाघ ने अपने अंगों को सीसा किया और उस आदमी को सम्बोधित करके बोला – "अब मैं तुमको अपना ग्रा बनाऊँगा।" उस आदमी ने बाघ द्वारा दिये गये वचन की यादि दिलायी।

बाघ ने कहा – "मैं भुख का अनुभव कर रहा हूँ। आवश्यकता का कोई नियम नहीं है। मैं तुम्हें खाऊँगा।"

उस आदमी ने अनुरोध किया कि इस बात के फैसले के लिये किसी तीसरे आदमी के पास चला जाय।

बाघ इस बात पर राजी हो गया और दोनों फैसला के लिये तीसरे की खोज में चल पड़े। वे एक बैल के पास आये। उस आदमी ने बैल को पूरी घटना सुना दी। बैल सब कुछ सुनने के बाद बोला – "तुम मनुष्य लोग बहुत खराब प्राणी हो। तुम लोग हमलोगों की पूँछ ऐंठकर पीड़ा देते हो और जब हमलोग जवान रहते हैं तो पैना से मार-मार कर अधिकाधिक काम लेते हो। बूढ़ा होने पर हमलोगों को खाना नहीं देते और घर से निकाल

देते हो। मेरा फैसला बाघ के पक्ष में है।"

बाघ ने कहा – "अब फैसला हो गया। अब तुम मुझे खाने दो।"

आदमी ने कहा – "अधीर मत होवो। हमलोगों को इस बाद को किसी अधिक समझदार के पास फैसला के लिये चलना चाहिए।"

बाघ इस बात पर राजी हो गया और वे एक लोमड़ी के पास गये। लोमड़ी बहुत व्यस्त थी। लोमड़ी बोली – "राजा का सन्देश पहुँचाने हेतु मैं बहुत दूर से कठिन यात्रा करके वापस आ रही हूँ। अभी मुझे घर जाकर पानी पीने दो तब मैं तुम लोगों की बातें सुनूँगी। यह कहकर लोमड़ी अपने घर में चली गयी।

वह थोड़ी देर बाद वापस आई ओर उस आदमी से पूरी घटना सुनकर बोली – "पूरी कथा बनावटी लगती है।" तब उस आदमी ने कहा कि उसकी बात बिल्कुल सच्ची है। उसने लोमड़ी को बाघ के पास भेज दिया, जिसने उस घटना को सत्य बताया।

लोमड़ी ने कहा – "मुझे लगता है कि तुम दोनों मुझे बेवकूफ बना रहे हो। इस घटना से सम्बन्धित पेड़ को तुमलोग दिखला दो।"

तब वे सभी उस स्थान पर गये जहाँ पेड़ गिरा हुआ था। पेड़ को देखकर अविश्वास व्यक्त करते हुए लोमड़ी बोली – "यदि सम्भव हो तुम मुझे फिर से वैसा ही करके दिखाओ, जैसा की बाघ पहेले की स्थिति में था।"

इसपर उस आदमी ने काफी ताकत लगाकर पेड़ को उठाया और बाघ उसके नीचे फिर से दबने के लिये चला गया। जब बाघ पेड़ के नीचे आ गया तो उस आदमी ने पेड़ को छोड़ दिया और वह बाघ पूर्व की तरह दब गया।

लोमड़ी ने बाघ से कहा – "अब तुम स्वयं अपने को मुक्त करके मुझे दिखाओ।"

बाघ ने मुक्त होने की बहुत कोशिश की पर हिल भी नहीं सका। तब
लोमड़ी ने उस आदमी से कहा – "एक मजबूत लाठी खोजकर ले आओ और इसे मार डालो।"

तब उस आदमी ने एक लाठी लेकर उस कृतघन बाघ को मारा डाला।

30. एक सांभर धातृ — एक युवक का पालन-पोषण बचपन से ही जंगल में एक मादा सांभर द्वारा किया गया था। वह उस लड़के को अपनी पीठ पर उसी प्रकार बैठाकर घुमाती चलती थी जैसे माँ अपने बच्चे को लेकर घूमती है।

एक बार निकटवर्ती गाँव की कुछ युवतियाँ जंगल में पता तोड़ने और लकड़ी चुनने गई थीं। उनमें से एक ने साँभर की पीठ पर उस नौजवान को बैठा देख लिया। वह उसके स्वस्थ एवं सुन्दर शरीर और लहरातें केशों को देखकर मंत्रमुग्ध हो गई। वह कुँवारी युवती (डींड हुई) प्रथम दृष्टि में ही उस युवक से प्रेम कर बैठी। वह पत्ती तोड़ना और लकड़ी इकट्ठा करना भूल गई खाली टोकरी लिये घर वापस आ गई। घर आकर उसने काम करना तथा खाना-पीना भी छोड़ दिया। उसके माता-पिता ने उसके दुःख का कारण जानना चाहा। उसने कहा - "उसे तब तक शान्ति नहीं मिलेगी जब तक सांभर की पीठ पर बैठकर घूमने वाला अजनबी युवक उसे पति के रूप में प्राप्त नहीं हो जाता।"

उस युवती के सात भाई थे। वे सातों नौजवान अपन तीर-धनुष और कुल्हाड़ी आदि लेकर उसके प्रेमी की खोज में निकल पड़े। बहुत लम्बी और थकान भरी यात्रा करने के बाद उन्हें सांभर की पीठ पर बैठा वह युवक दिखाई पड़ा। परन्तु वह सांभर इतनी तेजी से दौड़ी कि वे उसे नहीं पकड़ सके। पूरे आठ दिनों तक वे उसका पीछा करते रहे। अन्त में वह युवक अपनी सांभर धातृ से बोला - "प्यारी माँ! तुम आठ दिनों से मेरी रक्षा करने हेतु बिना खाये-पीये भागती रही हो। ये लोग अभी भी पीछा कर रहे हैं। तुमने मेरे लिये काफी कष्ट सहे। तुम मुझे यहीं उतार दो और तुम दूर चली जाओ।"

वह सांभर धातृ बहुत समझाने पर राजी हुई और उसने युवक को जमीन पर उतार दिया और घने जंगलों में भाग गई। सातों भाई विजयी होकर उस युवक को लेकर घर आये। उसे नहलाया गया और तेल लगाया गया प्रथम बार उसके केशों को कंघी से संवारा गया। पूरे हर्षोल्लास के साथ शादी सम्पन्न हुई।

शादी थोड़े दिनों बाद उस युवक ने यह प्रस्ताव किया कि उसकी सांभर धातृ को मार दिया जाय और सामाजिक भोज का अयोजन किया जाय। इस प्रकार वह अपने सात सालों के साथ जंगल में शिकार खेलने गया। वह संभर उन्हें जंगल में मिल गयी। सातों अपने तीरो से उसे निशाना बनाने लगे। पर कोई उसे मार नहीं सके। वह सांभर निर्भय होकर अपने पोस-पुत्र के पास आई और उसे ऐसा चाटने लगी जैसे गाय अपने बछड़े को चाटती है। वह फिर जंगल में भाग गयी। वे लाग उसका शिकार करने के लिये लगातार घूमते रहे।

तीन दिन बीत जाने के बाद सांभर रूक गयी और बोली - "तुमने मुझे बहुत सताया है। मेरे कष्ट और मत बढ़ाओ। अगर तुम इसी से खुश हो तो मेरे जीवन का अन्त कर दो।"

इसपर उस युवक ने उसे तीर मार दिया और वह मर गयी। मरते समय उसने युवक से कहा - "मेरा अन्तिम अनुरोध है कि तुम मेरी हड्डियों को गाड़ दोगे। उसके सात दिन बाद तुम वहाँ जाकर देखोगे तो कुछ आश्चर्यजनक बात पाओगे।"

उस पूरे परिवारा को तथा समाज के लोगों को उस सांभर के माँस से अच्छा एवं सुस्वादु भोज मिला। अकेले उस युवक ने उसका मांस नहीं खाया। उसके कथानानुसार उसने हड्डियों को लेकर चींटी के बाँबी में गाड़ दिया। सात दिनों के बाद वह वहाँ गया और उस स्थान पर गया जहाँ हड्डी गाड़ी गयी थी और वह पैर फैला कर खड़ा हो गया। देखते-देखते वह सांभर उसे बाँबी से निकली, उस युवक को पीठ पर उठायी और पूरे वेग से उसे सुदूर जंगल में भाग गयी। उसके सातों साले उसे दूर-दूर तक खोजते रहे। पर सब व्यर्थ हुआ। वे उदास होकर घर लौट आये।

परिशिष्ट – क

"हो" जनजाति के गोत्र

क्र.सं.	*गोत्र*	*मूल स्थान*	*शादी के लिए वर्जित गोत्र*
१.	अल्डा	गंजिया	सवैयां, बारी, कलुण्डिया
२.	अंगरिया	बेतरकेया	सिरका, मरली, जामुदा, देवगम, कान्डेयांग, चम्पिया
३.	बागे (बागेसोरा)	जामदा (के निकट)	तिरिया
४.	बालमुचु	गुइरा	जराई, सिन्कू, होनहागा
५.	बन्डा	सिंगीजारी	
६.	बन्डिया	पुरनियाँ	गुन्दुआ, गिलुआ, मुन्दुइया
७.	बांकिरा	चुरगुई, लागिया	गगराई
८.	बानरा	टोन्टो	तिऊ, बोदरा, गोडसोरा
९.	बांसिंग	भोया	बोदरा, इचागुटु, बानरा, चाकी
१०.	(१) बारेंग	गोलचका	लगुन
	(२) बरई	जोड़ापोखर	
११.	बारदा	अप्राप्त	
१२.	बारी	खूंटा	सवैया, आल्डा, कलून्डिया
१३.	बोरजो	मेरेलगड़ा	हेम्बरोम बालमुचु
१४.	बारला (मारला)	उलिगुटू	
१५.	भेंगरा	हेसेल बेड़ा (के निकट)	
१६.	भूमिज	होयो हातु	
१७.	बिरूआ	लागड़ा	
१८.	बोदरा	कोकरो बारू	बांसिंग, इचागुट, बानरा, मुण्डारी
१९.	बीयपाई	पन्डाबीर	कोड़ा, सुरिन
२०.	बोबोंगा	मलुका	सिन्कू, हेस्सा

२१.	बोरोय	गुआ (के निकट)	लागुरी
२२.	बुन्दुआ	टन्गराई	
२३.	बूड़िउलि	बरकुन्डिया	कुदादा, तुबिद
२४.	बुडुमा	कोटगढ़	तिरिया
२५.	बुतिया	कन्डान्गबासा	तिऊ
२६.	चाकी	केलाईपंचो	चम्पिया, दिगी
२७.	चेरोबा	सोदा	चम्पिया
२८.	चम्पिया	घाटकुरी	दिगी, चाकी, सिरका
२६.	चातोम (चातोम्बा)	मझगोंब (दुदुबिला)	सिंकु, चातर, बोबोंगा
३०.	चांतर	लुकिपाई	चातोम्बा
३१.	चिकीव	उत्तरी भाग में	बोदरा, बासिंग, हिरिम
३२.	चोड़ा	बाटीगुटु	
३३.	डांगील	लबटा	समड (समद)
३४.	दौंरिया	रूइया	
३५.	देवगम	कमरहातू	होनहागा
३६.	दोगी	पेटापेटी	मुन्दा, पुरती, चाकी, चम्पिया, सिन्कू, लागूरी, कुन्टिया, सुरिन
३७.	दोंगी	गोन्दालाई	होनहागा, जोन्को
३८.	दोराई (दोराइबुरू)	सालाबुरू (पाता गुईरा)	कन्डाईबुरू, हाईबुरू, जारिका
३६.	डुकरी	सरजोमहातु (के निकट)	सोय
४०.	दुरसुली	देरोआ	सोय
४१.	गगराई	अरूगुन्डी	जारिका, केराई बांकिरा
४२.	गन्जु	कटाकरा	
४३.	गिलुआ	पदमपुर	बन्डिया

४४.	गोडसोरा	उन्चूड़ी	बानरा, तियु, तापे, पिंगुआ, डुकरिया, कुंकल, हेस्सा,
४५.	गुइया	अप्राप्त	
४६.	गुन्डिया	भोया	
४७.	बुन्दुआ	सारदा	बन्डिया
४८.	हाईबुरू	परमपंचो	कन्डाइबुरू, दोराईबुरू, जारिका, बोदरा, तियु, बालमुचु,
४९.	हसदा	झींकपानी	तुबिद, सुजूई
५०.	हेम्ब्रोम	कुम्बराम (गिन्तिलोर, रेंगरा)	कोड़ा, बोयपाई, बरजी, बानरा
५१.	हेस्सा	मलुका	पिंगुआ, सिदू
५२.	हिरिम	उत्तरी भाग में	बोदरा, बासिंग, चिकिद
५३.	होनहागा	पुरनिया	जामुदा, कोन्डेयांग, सिरका, बालमुचु, दोंगो
५४.	हुंजिया	बरकेला	
५५.	जामुदा	उलिगुटू	कान्डेयांग, अंगरिया, होनहागा, लागुरी, कुदादा, दोंगो
५६.	इचागुटु	भोया	बोदरा, बासिंग, बानरा
५७.	जारिका	सारदा	दोराईबुरू, कन्डाईबुरू, हाईबुरू
५८.	जेराई	कोटगढ़ (के निकट)	बालमुचु, सिन्कु
५९.	जेराईजोपोइ	भरभरिया (के निकट)	
६०.	जोजो	लुपुंगगुटु	तेःबराई, डुकरी, बोयपाई
६१.	जोजोखां	केरास्टेट	
६२.	जोंको	कोमय	दोंगी , जामुदा
६३.	काइका	उनचुड़ी	मेलगान्डी
६४.	कोरोम (कायोम)	कोटगड़ (के निकट)	तिरिया

६५.	कलुण्डिया	कोकचो	बारी, सवैया, आल्डा, कोरवा, सोय,
६६.	कन्डाईबुरू	गुंटया	हाईबुरू, दोराईबुरू, जारिका,
६७.	कान्डेयांग	चेन्डेंया	जामुदा, होनहागा, लागुरी, सिन्कु, कन्डाईबुरू, अंगरिया
६८.	करोवा	कुदाहातु	कलुन्डिया, कुरली, करमा
६६.	कायोम	बाइपी	टुन्टी
७०.	केराई	कासिरा	
७१.	केराईबुरू	अप्राप्त	
७२.	कोन्डांगकेल	नाचराई (के निकट)	
७३.	कोःकुइया	लम्पहिला	
७४.	कोड़ाट	झिलरूआर (रेंगरा)	बोयपाठं, हेम्ब्रोम, चातर
७५.	कुदादा	सरकुन्डिया	बुड़िउलि, हसदा
७६.	कुल्डी	अंगारपाड़ा	पिंगुआ
७७.	कुंकल	पांगा (सिंलपुगी)	तामसोय, सोय, परेया, पिंगुआ, बरजो
७८.	कुन्ठी	पेटापेटी	
७६.	कुन्टिया	बनाईकेरा	
८०.	कुरली	सुरबुलाई	
८१.	लागुरी	सिरिंगलिया	सिन्कू, जामूदा, बोरोय, चातर,
८२.	लामाय	कुतकुसी	लोयांगो, मुण्डरी, टोबोगा, ओमोंग
८३.	लोआदाः	छोटाबन्डी	
८४.	लुगुन	सालिगुटु	हेस्सा बारिंग
८५.	मारला	सोका	
८६.	मारली	ददुबिला	अंगरिया
८७.	माटी (माटीसोय)	केयाद ग्रालोम	
८८.	माटीसोय	जानुम बेरा	सोय, तामलोब, परेया

८९.	मेंलगान्डी	मुब्बुरा	काइका
९०.	मेरेल (मारला)	बोइलकेरा	
९१.	मुन्डा (दिगी मुण्डा)	जोड़ा पोखरिया	दीगी, पुरीती
९२.	मुन्डरी	चीरू	लामाय, लेयांगी, टाबोगा, ओम्रोंग, बोदरा
९३.	मुन्दुईया	बोतोमपी	बन्डिवा, मुन्डा
९४.	मुतुरी	बितिलपी	
९५.	ओमोंग	फोर लौंग (फाताहातु)	लामाय, लेयांगी, मुन्डरी, टोबोगा
९६.	पाड़ेया	कमारहातु	कुंकल, सोय, तामसोय, माटी, सोय
९७.	पिगुवा	बलन्डिया	हेस्सा, कुंकल, कुल्डी, मारली, दिगी
९८.	पुरती	करलाजोरी (राजापारोम, बेटेरकेया)	
९९.	समद	लोआहातु	
१००.	सान्डिल	अप्राप्त	
१०१.	सवैया	गितिलपी	बारी, कलुन्डिया, आल्डा
१०२.	सेकेरा	अप्राप्त	
१०३.	सिदू	कुजु	सिन्कू, तुबीद, सुम्ब्रूई
१०४.	सिजूई	केरा बारपाई पन्वो	केराइ, बोदरा
१०५.	सिन्कु	जामडी	बोबोंगा, चातोम्बा, लागुरी, सिदू, जेराई, बालमुचु, सिंगकुटिया, कोडयांग
१०६.	सिरका	चिमिलाई	होनहोगा, चम्पिया, अंगरिया, मरली,

१०७. सोय	आचु (बंडी जाहीर)	तामसोय, माटीसोय, कुंकलख डुकरी, परेया
१०८. कुम्बुई	भूता	सिद्गू, सुरिन
१०६. सुन्डी	गुइरा (संकोसाई)	
११०. सुरी (सुरीन)	नोबामुण्डी	
१११. सुरिन	सरैद	बोयपाई
११२. तैसुम	चेन्डेया	
११३. तामसोय	बिद्दीरी	सोय, कुंकल, पड़ेया, माटीसोय, तिरिया, सिन्कु, लागुरी
११४. तापे:	सोमापंचो	
११५. ते:बरई	जोड़ा पोखरिया	
११६. तिरिया	टोन्टोपोसी	केराई, केरोम, कलुन्डिया, बुडुमा, समद, बागे
११७. टिटिंगी	पासेया	
११८. तियु	दोपाई	बानरा, गोडसोरा
११६. टोबोगा	उत्तरी भाग में	लाताय, लेबान्गी, मुन्डरी, ओमोंय
१२०. तोन्डांगबेल	अप्राप्त	
१२१. तोपनो	सोनापीमी	तापे
१२२. तोरकोद	कुदलीबाद	
१२३. तुबीद	दुलकी	बुड़िउलि, हासदा, सिदू कुदादा, दोराईबुरू
१२४. मूंती	सेनबा	कुंटिआ
१२५. उगुर बोलो	जमशेदपुर	
१२६. उगुर सान्डी	बड़ालगिड़ा	सुन्डी

परिशिष्ट

आधार सामग्री की सूची

(क) हिन्दी की पुस्तकें

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	लेखक	प्रकाशक एवं प्रकाशन–स्थान
1.	आदिवासी देयोंवा	डॉ. दुर्गा पुर्ति	डॉ. दुर्गा पुरती, तुईबाना, सिंहभूम 1980
2.	दिसुम रूमूल	डॉ. एस.के. तियु	नन्दी प्रिण्टिंग वर्क्स, चाईबासा
3.	बोंगा बुरू को	श्री प्रधान गगराई	गगराई अकड़ा, डुमरिया, सिंहभूम
4.	भारत की भाषा सर्वेक्षण खण्ड–1	सरजार्ज अब्राहम	प्रकाशन शाखा, सूचना–विभाग, उत्तर प्रदेश
5.	भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन	डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय	हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, मान मन्दिर, वाराणसी–1
6.	मरांग बोंगा	श्री प्रधान गगराई	गगराई अकड़ा, डुमरिया सिंहभूम
7.	मुण्डा लोक कथाएँ	श्री जगदीश त्रिगुणायत	अधीक्षक, सचिवालय शाखा मुद्रणालय, राँची, बिहार
8.	लोक साहित्य और संस्कृति	डॉ. दिनेश्वर प्रसाद	लोक भारती प्रकाशन, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, 1973
9.	लोक कथा विज्ञान	श्री चन्द्र जैन	मंगल प्रकाशन, जयपुर, 1977
10.	सतीस तन्त्र संहिता	डॉ. एस.के. कोड़ा "सेंगेल"	नन्दी प्रिण्टिंग वर्क्स, चाईवासा

11. हिन्दी साहित्य का इतिहास	डॉ. नगेन्द्र	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
12. "हो" भाषा कैसे सीखें	श्री मोती लाल बिरूआ	अंकुर पाल तथा नागेश्वर पाल, पुस्तक विक्रेता, चाईबासा
13. "हो" दिशमु हो होन को भाग–1 से 7 तक	श्रीधनुर सिंह पूर्ति	जेवियर "हो" पब्लिकेशन, संत जेवियर्स उच्च विद्यालय, लुपुगुट्टु, चाईबासा, सिंहभूम,

(ख) अंग्रेजी की पुस्तकें

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	लेखक	प्रकाशक एवं प्रकाशन–स्थान
1.	इन्साइक्लोपीडिया मुण्डारिका, खण्ड–1 एच	रेवरेण्ड जॉनहॉफ मैन एस. जे.	बिहार राज्य प्रेस, पटना
2.	द अफेयर्स ऑफ ए ट्राइब	डॉ. डी.एन. मजूमदार	युनिवर्सल पब्लिशर्स लि., लखनऊ
3.	डिस्क्रीप्टिव एथनॉलॉजी ऑफ बंगाल	एडवर्ड टुइट डाल्टन	अधीक्षक, गवर्नमेण्ट प्रिण्टिंग कलकत्ता, 1872
4.	द कास्ट एण्ड ट्राइब ऑफ बंगाल	एच.एच. रिजले	बंगाल सेक्रेटेरियट प्रेस, कलकत्ता
5.	फोक लोर ऑफ कोल्हान	सी. एच. बोम्पास	अजय बुक सर्विसेज, नई दिल्ली
6.	द रेलिजियस सिस्टम ऑफ द मुण्डा ट्राइब	ए. बॉन. एक्सेम एस.जे.	सत्य भारती, कैथोलिक प्रेस, राँची
7.	मुण्डारी फॉक टेल्स	पी.के. मिश्रा	पी.के. मिश्रा, 12 पुरूलिया रोड, राँची
8.	मोटिफ इन्डेक्स ऑफ फोक लिटरेचर	स्टीथ थॉमसन	रोजेनफिल्ड एण्ड बैगर, इंटर–नेशनल बुक सेलर्स एण्ड पब्लिशर्स, कोपेनहेगन, 1957
9.	ट्राइबल हेरिटेज ऑफ इण्डिया	डॉ. श्यामाचरण दुबे	यूनिवर्सल पब्लिशर्स, लखनऊ
10.	ए ट्राइब इन ट्रांजिशन	डॉ. डी.एन. मजुमदार	लौंगमैन ग्री एण्ड को. 6 ओल्ड हाउस स्ट्रीट कलकत्ता
11.	सम फोक्लोर ऑफ कोल्हान	सं. श्री एस.सी. दूबे	यूनिवर्सल पब्लिशर्स, लखनऊ
12.	होज ऑफ कोल्हान 1937–1950	डॉ. डी.एन. मजूमदार	यूनिवर्सल पब्लिशर्स, लखनऊ
13.	हो ट्राइब ऑफ सिंहभूम	डॉ. सी.पी. सिंह	क्लासिकल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1980

14. हो इंगलिश डिक्शनरी	जे.डीनी, एस.जे.	जेवियर "हो" पब्लिकेशन, लुपुंगुट्टु, चाईबासा, सिंहभूम
15. हो ग्रामर एण्ड बोकेबुलरी	जे.डीनी, एस.जे.	जेवियर "हो" पब्लिकेशन, लुपुंगुट्टु, चाईबासा, सिंहभूम
16. मुण्डा एण्ड देयर कण्ट्री	एस.सी. रॉय	मेसर्स ठक्कर स्पिंक एण्ड को. द सिटी बुक सोसाइटी, कलकत्ता
17. रेसेज एण्ड कल्चर्स ऑफ ट्राइबल बिहार	नर्मदेश्वर प्रसाद	बिहार ट्राइबल रिसर्च इन्स्टीच्युट, मोरहाबादी, राँची
18. सिंहभूम गजेटियर्स	पी.सी. रॉय चौधरी	अधीक्षक, सचिवालय प्रेस, पटना
19. मिथ्स ऑफ मिडिल इण्डिया	बैरियर एलविन	लन्दन, डेविड नट्ट स्ट्रैन्ड, 1995
20. एन इन्ट्रोडक्शन टू फोकलोर	मेरियन रोल्फ कॉक्स	डेविड नट्ट स्ट्रैन्ड, लन्दन, 1895
21. सेंसस ऑफ इण्डिया 1971 (कल्चरल टेबुल)	बी.एल. दास	बिहार सरकार, पटना

(ग) पत्र–पत्रिकाएँ

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	लेखक	प्रकाशक एवं प्रकाशन–स्थान
1.	आदिवासी	सं.–एस.के. लाल	सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, राँची, बिहार
2.	तदैव (1 अप्रैल 1971)	तदैव	तदैव
3.	तदैव (15 अगस्त 1971)	तदैव	तदैव
4.	तदैव (19 अगस्त 1971)	तदैव	तदैव
5.	तदैव (26 अगस्त 1971)	तदैव	तदैव
6.	तदैव (26 जनवरी 1971)	तदैव	तदैव
7.	तदैव (26 जनवरी 1972)	तदैव	तदैव
8.	तदैव (26 जनवरी 1973)	तदैव	तदैव
9.	तदैव (16 अक्टूबर 1979)	तदैव	तदैव
10.	"जोहार" (1980)	सं. बलराम	कैथोलिक प्रेस, राँची
11.	तदैव (1981)	तदैव	तदैव
12.	सारिका लोक कथा विशेषांक भाग–1 एवं 11 सिंतबर 1984	सं. अवध नारायण मुद्रल	टाइम्स ऑफ इण्डिया, 10 दरियागंज, नई दिल्ली
13.	जनरल ऑफ बिहार एंड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, वॉल्यूम–1 (2), 1915 ई.	ले. श्री हवलदार सुकुमार	सुपरिन्टेंडेंट, गवर्नमेंट प्रिण्टिंग प्रेस, बिहार, पटना

14. जनरल ऑफ बिहार एंड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, वॉल्यूम–1 (2), 1915 ई.	ले. श्री हलवदार सुकुमार	सुपरिन्टेंडेंट, गवर्नमेंट प्रिण्टिंग प्रेस, बिहार, पटना
15. तदैव वॉल्यूम–3 (1) 1917 ई.	तदैव	तदैव
16. तदैव वॉल्यूम–3 (2) 1917 ई.	तदैव	तदैव
17. तदैव वॉल्यूम–3 (3) 1917 ई.	तदैव	तदैव
18. तदैव वॉल्यूम–4 (3) 1918 ई.	तदैव	तदैव
19. तदैव वॉल्यूम–8 (2) 1922 ई.	तदैव	तदैव
20. तदैव वॉल्यूम–12 (3) 1920 ई.	तदैव	तदैव
21. तदैव वॉल्यूम–14 (1) 1928 ई.	एस. सी. मिश्रा	तदैव
22. तदैव वॉल्यूम–2 (3) 1916 ई.	गिरीन्द्र नाथ सरकार	तदैव
23. तदैव वॉल्यूम–15 (1) 1919 ई.	गिरीन्द्र नाथ सरकार	तदैव
24. तदैव वॉल्यूम–14 1926 ई.	एस. सी. मिश्रा	तदैव
25. जनरल ऑफ एन्थ्रोपोलॉजिकल सोसाइटी ऑफ बॉम्बे, 1920 ई.	तदैव	एन्थ्रोपोलॉजिकल सोसाइटी, बम्बई
26. मेन इन इण्डिया वॉल्यूम–1 (2) 1921	सं. एस.सी. रॉय	एस.सी. रॉय, चर्च रोड, राँची

27. तदैव 7–(4) 1928 ई.	तदैव	तदैव
28. तदैव 34–(4) 1954 ई.	तदैव	तदैव
29. बुलेटिन ऑफ द बिहार ट्राइबल रिसर्च इन्स्टीच्युट वाल्यूम– 3–(1) जनवरी 1961	सं. नर्मदेश्वर प्रसाद मोरहाबादी, राँची	बिहार ट्राइबल रिसर्च इन्स्टी–च्युट, बिहार
30. तदैव, वॉल्यूम–4 (1) जुलाई 1962 ई.	तदैव	तदैव

❏❏❏

डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा

शैक्षणिक योग्यता–एम.ए. (हिन्दी), पी.एच.डी. (हो भाषा) पत्रकारिता में डिप्लोमा। आई.सी.डी.एस. में बेसिक प्रशिक्षण तथा उन्मुखीकरण प्रशिक्षण।

सरकारी सेवा–कल्याण विभाग (बिहार-झारखण्ड) में सहायक कल्याण पदाधिकारी/ अनुमण्डल कल्याण पदाधिकारी/ जिला कल्याण पदाधिकारी / परियोजना पदाधिकारी / सहायक निदेशक (जनजातीय कल्याण शोध संस्थान) के पद पर 33 वर्षों तक कार्यरत रहकर सेवा निवृत।

वर्तमान कार्य-कलाप–अध्यापन, लेखन, प्रकाशन, पत्रकारिता, शोध-निर्देशन, परामर्शी कार्य। श्री कृष्ण लोक प्रशासन संस्थान तथा एकेडेमिक स्टाफ कॉलेज, राँची में आमंत्रित व्याख्याता। जे. पी. सामाजिक एवं औद्योगिक अध्ययन संस्थान, राँची में लगभग 2 वर्षों तक निदेशक का कार्य सम्पादन। 'एट ए ग्लांस' न्यूज एण्ड इन्फॉर्मेशन सर्विसेज, लालपुर थाना के निकट, राँची के लिए पटकथा लेखन एवं शोध परामर्श।

शोध कार्य–1. हो लोक कथाओं का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन, 2. लघु वन पदार्थो के व्यापार में टी.सी.डी.सी. की भूमिका (टी.आर.आई.), 3. जनजातीय क्षेत्र में 'डायन प्रथा' का प्रचलन (राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा प्रायोजित)

पुस्तक लेखन–(1) हो लोक कथा : एक अनुशीलन (2) हो भाषा और साहित्य का इतिहास (3) ''खरवार'' जनजाति का मोनोग्राफ (जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, रांची द्वारा प्रायोजित) (4) फेतल सिंह खरवार : एक जीवनी (जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, रांची द्वारा प्रायोजित) (5) पतझर और पलाश (त्रिभाषी काव्य संग्रह) (6) हो कोअः कजि जुड़ि कजी को (हो भाषा की कहावतें आदि) (7) लोक जीवन के सांस्कृतिक प्रसंग (जनजातीय प्रथा, परम्परा, संस्कृति, लोक विश्वास आदि विषयक निबंध संग्रह)। (8) 'चौथा चूल्हा' एवं 'आरण्यक' (कहानी संग्रह) (9) संबंधित पत्र-पत्रिकाएं :–आज/प्रभात खबर/हिन्दुस्तान/दैनिक जागरण/ आदिवासी / चौमासा (आदिवासी लोककला अकादमी, भोपाल/तरंग भारती) आदि।

वृतचित्र निर्माण हेतु पटकथा लेखन / शोध निर्देशन :–

(क) नियोन फिल्मस, राँची के लिए :–1. अरण्य धर्मा सौरिया पहाड़िया, 2. अरण्य धर्मा माल पहाड़िया, 3. अरण्य धर्मा बिरहोर, 4. प्रकृति की अराधना : करम का त्योहार, 5. यात्रा के पचास वर्ष। (असुर/ बिरहोर/ कोरवा/ बिरजिया/ परहिया/ सवर/ हिलखड़िया/ सौरिया पहाड़िया/ माल पहाड़िया/ हो)। (कुल 9 एपिसोड) (ख) 'एट ए ग्लांस के लिए विभिन्न विषयों पर विभिन्न विभागों के लिए वृतचित्र का प्रस्ताव / पटकथा लेखन एवं शोध परामर्शी सेवा। (ग) श्रुति विजुअल इन्फॉर्मेशन प्रा. लि., लालपुर, राँची के लिये परामर्शी (वृत चित्र निर्माण/ शोध संबंधी)। (घ) राँची दूरदर्शन केन्द्र / आकाशवाणी के वार्ताकार।

सामाजिक संगठन से सम्बद्धता :–

1. आजीवन सदस्य, भारतीय रेडक्रॉस सोसाइटी, राँची। 2. सचिव, प्रज्ञा शोध एवं अध्ययन केन्द्र, राँची। 3. मुख्य संरक्षक, झारखण्ड राज्य पेंशनर समाज, राँची।

पता–हेसल, पो. हेहल, राँची-834005, मोबाइल : 07352193017, 09431359190

ISBN : 978-93-82695-07-3

विकल्प प्रकाशन
दिल्ली–110094